भूमिका

हम संसारबद्ध जीवोंको इतना अवकाश कहाँ, जो संत-महात्माओंकी सम्पूर्ण सरस बानियोका पवित्र परायण कर सकें ? इसलिये इस भजन-संग्रहमे थोड़े-से चुने हुए पदोंका संकलन किया गया है । अच्छा हो कि इनका रस लेकर हमारी लोभ-प्रवृत्ति जागे और हम सम्पूर्ण बानियोंका आनन्द लेनेको प्रेम-विह्वल हो जायँ ।

इस संग्रहके प्रारम्भमें गोसाईं तुलसीदास, महात्मा सूरदास और संतवर कबीरके पदोंका संकलन है । भक्ति-साहित्यमें इन तीनों ही महात्माओंकी दिव्य बानियाँ अनुपम हैं। तदनन्तर अष्टछापके अनन्य भक्तों तथा हितहरिवंश, स्वामी हरिदसा, गदाधर भट्ट, हरिराम व्यास आदि व्रज-रस-मधुकरोंकी सुललित गुंजार और नानक, दादूदयल, रैदास, मलूकदास आदि संतोंके पदोंका संक्षिप्त संग्रह है । ग्रन्थके मध्यमें कुछ हरि-भक्त देवियोंके पदोंका संग्रह है । जिनमें प्रमुख हैं—मीरा, सहजोबाई, वृन्दावनवासिनी बनीठनीजी, प्रतापबाला तथा युगलप्रियाजी । अन्तमें कुछ रामरँगीले भक्तोंकी वाणीका संकलन किया गया है, जिनमें एक दरियासाहबको छोड़कर शेष सभी मुसल्मान हैं, जिनके बारेमें श्रीभारतेन्दुजीने कहा है—'इन मुसल्मान हरिजनपै कोटिन हिन्दुन वारिए ।'

ग्रन्थकी समाप्ति नित्यलीलालीन परम श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके परमोपयोगी सरस पदोंसे की गयी है । अन्तमें भगवान्से हमारी प्रार्थना है कि इन हरि-भक्त कवियोंकी विमल बानियोंसे जगत्को सुख-शान्ति एवं आनन्दकी प्राप्ति हो । —प्रकाशक

श्रीहरिः

भजन-संग्रह

अनुक्रमणिका

सूरदासके श्याम

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

भजन-संग्रह

गोसाईं तुलसीदासजी

स्तुति

(१) राग बिलावल

गाइये गनपति जगबन्दन । संकर-सुवन भवानी-नन्दन ॥ १ ॥
सिद्धि-सदन, गजवदन, विनायक । कृपासिंधु सुन्दर सब लायक ॥ २ ॥
मोदक-प्रिय, मुद-मंगल-दाता । विद्या-बारिधि बुद्धि-विधाता ॥ ३ ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥ ४ ॥

नाम

(२) राग भैरव

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे ।
घोर-भव नीर-निधि नाम निज नाव रे ॥ १ ॥
एक ही साधन सब रिद्धि सिद्धि साधि रे ।
ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि रे ॥ २ ॥
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो बाम रे ।
राम-नाम ही सों अन्त सबहीको काम रे ॥ ३ ॥
जग नभ-बाटिका रही है फलि फूलि रे ।
धुवाँ कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे ॥ ४ ॥
राम-नाम छाँड़ि जो भरोसो करै और रे ।
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे ॥ ५ ॥

(३) राग भैरव

राम राम रटु राम राम रटु, राम राम जपु जीहा ।
राम-नाम-नवनेह-मेहको मन ! हठि होहि पपीहा ॥ १
सब साधन-फल कूप सरित सर सागर सलिल निरासा ।
राम-नाम-रति-स्वाति सुधा सुभ-सीकर प्रेम पियासा ॥ २
गरजि तरजि पापान बरपि, पवि प्रीति परखि जिय जानै ।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥ ३
रामनाम-गति, रामनाम-मति, रामनाम अनुरागी ।
ह्वै गये हैं जे होहिंगे, त्रिभुवन, तेइ गनियत बड़भागी ॥ ४
एक अंग मग अगम गवन कर, बिलमु न छिन-छिन छाहैं ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि निरुपधि, नेम निबाहैं ॥ ५

(४) राग कल्याण

भरोसो जाहि दूसरो सो करो ।
मोको तो रामको नाम कलपतरु, कलिकल्यान फरो ॥ १
करम उपासन ग्यान बेदमत सो सब भाँति खरो ।
मोहिं तो सावनके अन्धहि ज्यों, सूझत हरो-हरो ॥ २
चाटत रहेउँ स्वान पातरि ज्यों कबहुँ न पेट भरो ।
सो हौं सुमिरत नाम-सुधारस पेखत परुसि धरो ॥ ३
स्वारथ औ परमारथहूको नहिं कुञ्जरो नरो ।
सुनियत सेतु पयोधि पखानन्हि करि कपि कटक तरो ॥ ४
प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ, ताको काज सरो ।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर, हौं सिसु-अरनि अरो ॥ ५
संकर साखि जो राखि कहउँ कछु, तौ जरि जीह गरो ।
अपनो भलो रामनामहि ते, तुलसिहि समुझि परो ॥ ६

(५)

रुचिर रसना तू राम राम क्यों न रटत।
सुमिरत सुख सुकृत बढ़त अघ अमंगल घटत॥
बिनु स्रम कलि-कलुष जाल, कटु कराल कटत।
दिनकरके उदय जैसे तिमिर-तोम फटत॥
जोग जाग जप बिराग तप सुतीर्थ अटत।
बाँधिबेको भव-गयन्द रजकी रजु बटत॥
परिहरि सुर-मनि सुनाम गुंजा लखि लटत।
लालच लघु तेरो लखि तुलसि तेहि हटत॥

(६)

कलि नाम काम तरु रामको।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख, दोष घोर घन घामको॥ १॥
नाम लेत दाहिनो होत मन, बाम बिधाता बामको।
कहत मुनीस महेस महातम, उलटे सूधे नामको॥ २॥
भलो लोक परलोक तासु जाके बल ललित-ललामको।
तुलसी जग जानियत नामते सोच न कूच मुकामको॥ ३॥

(७)

पावन प्रेम रामचरन कमल जनम लाहु परम।
राम-नाम लेत होत, सुलभ सकल धरम॥
जोग मख बिबेक बिरति, बेद-बिदित करम।
करिबे कहुँ कटु कठोर सुनत मधुर नरम॥
तुलसी सुनि, जानि बूझि भूलहि जनि भरम।
तेहि प्रभुकी तू सरन होहि, जेहि सबकी सरम॥

(८) राग नट

नाहिन भजिबे जोग बियो।
श्रीरघुबीर समान आन को पूरन कृपा हियो॥
कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो?।
कौन गीध अधमको पितु ज्यों निज कर पिण्ड दियो?॥
कौन देव सबरीके फल करि भोजन सलिल पियो?।
बालित्रास-बारिधि बूड़त कपि केहि गहि बाँह लियो?॥
भजन प्रभाउ बिभीषन भाष्यो सुनि कपि कटक जियो।
तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो॥

विनय

(९) राग धनाश्री

यह बिनती रघुबीर गुसाईं।
और आस बिस्वास भरोसो, हरौ जीव-जड़ताई॥ १
चहौं न सुगति, सुमति संपति कछु रिधि सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग रामपद, बढ़ै अनुदिन अधिकाई॥ २
कुटिल करम लै जाइ मोहि, जहँ जहँ अपनी बरियाई।
तहँ-तहँ जनि छिन छोह छाँड़िये, कमठ-अण्डकी नाई॥ ३
यहि जगमें जहँ लगि या तनुकी, प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों, होहिं सिमिटि इक ठाई॥ ४

(१०) राग पीलू

रघुबर तुमको मेरी लाज।
सदा सदा मैं सरन तिहारी तुमहिं गरीबनिवाज॥
पतित उधारन बिरद तुम्हारो, स्रवनन सुनी अवाज।

हौं तो पतित पुरातन कहिये, पार उतारो जहाज ॥
अघ-खंडन दुख-भंजन जनके यही तिहारो काज ।
तुलसिदासपर किरपा कीजै, भगति-दान देहु आज ॥

(११) राग धनाश्री

ऐसी मूढ़ता या मनकी ।
परिहरि राम-भगति सुरसरिता आस करत ओस कनकी ॥ १ ॥
धूम समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घनकी ।
नहिं तहँ सीतलता न बारि पुनि, हानि होत लोचनकी ॥ २ ॥
ज्यों गच-काँच विलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी ।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आननकी ॥ ३ ॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति जनकी ।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख करहु लाज निज पनकी ॥ ४ ॥

(१२) राग धनाश्री

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ।
काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥
कौन देव बराइ बिरद-हित, हठि-हठि अधम उधारे ।
खग, मृग, व्याध, पषान, विटप जड़ जवन कवन सुर तारे ॥ २ ॥
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज सब माया-विबस बिचारे ।
तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥ ३ ॥

(१३) राग धनाश्री

मेरो मन हरिजू ! हठ न तजै ।
निसिदिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाउ निजै ॥ १ ॥

ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥ २ ॥
लोलुप भ्रमत गृहपसु-ज्यों जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥ ३ ॥
हौं हारयो करि जतन बिबिध बिधि, अतिसै प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ४ ॥

(१४) राग बिलास

हे हरि, कवन जतन भ्रम भागै ।
देखत, सुनत, बिचारत यह मन, निज सुभाउ नहिं त्यागै ॥ १ ॥
भक्ति, ग्यान, बैराग्य सकल साधन यहि लागि उपाई ।
कोउ भल कहउ देउ कछु कोउ असि बासना हृदयते न जाई ॥ २ ॥
जेहि निसि सकल जीव सूतहिं तव कृपापात्र जन जागै ।
निज करनी बिपरीत देखि मोहि, समुझि महाभय लागै ॥ ३ ॥
जद्यपि भग्न मनोरथ बिधिबस सुख इच्छित दुख पावै ।
चित्रकार कर हीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ॥ ४ ॥
हृषीकेस सुनि नाम जाउँ बलि अति भरोस जिय मोरे ।
तुलसिदास इन्द्रिय सम्भव दुख हरे बनहि प्रभु तोरे ॥ ५ ॥

(१५) राग सोरठ

ऐसो को उदार जग माहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर, राम सरिस कोउ नाहीं ॥ १ ॥
जो गति जोग बिराग जतन करि, नहिं पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सबरी कहँ, प्रभु न बहुत जिय जानी ॥ २
जो संपति दस सीस अरपि करि, रावन सिव पहँ लीन्हीं ।
जो संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्हीं ॥ ३

तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मत मेरो ।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करहिं कृपानिधि तेरो ॥ ४ ॥

(१६) राग गौरी

श्रीरामचन्द्र कृपाल भजु मन, हरण-भव-भय दारुणं ।
नवकञ्ज-लोचन, कञ्जमुख, कर-कञ्ज, पदकञ्जारुणं ॥ १ ॥
कन्दर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरद सुन्दरं ।
पट पीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक-सुता-वरं ॥ २ ॥
भजु दीनबन्धु दिनेश दानव-दैत्य-वंश निकन्दनं ।
रघुनन्द आनँद-कंद कोसल चंद दशरथ-नन्दनं ॥ ३ ॥
शिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु, उदार-अंग-विभूषणं ।
आजानु-भुज शर-चाप-धर, संग्राम-जित खरदूषणं ॥ ४ ॥
इति वदति तुलसीदास, शंकर-शेष-मुनि-मन-रञ्जनं ।
मम हृदय-कञ्ज निवास कुरु, कामादि-खल-दल गञ्जनं ॥ ५ ॥

(१७)

मैं हरि, पतित पावन सुने ।
मैं पतित, तुम पतित-पावन, दोउ बानक बने ॥
व्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमनि भने ॥
और अधम अनेक तारे, जात कापै गने ॥
जानि नाम अजानि लीन्हें, नरक जमपुर मने ॥
दास तुलसी सरन आयो राखिये अपने ॥

(१८)

और काहि माँगिये, को मागिबो निवारै ।
अभिमत दातार कौन, दुख-दरिद्र दारै ॥

धरम धाम राम काम-कोटि-रूप रूरो।
साहब सब विधि सुजान, दान खड्ग सूरो॥
सुखमय दिन द्वै निसान सबके द्वार बाजै।
कुसमय दसरथके दानि ! तैं गरीब निवाजै॥
सेवा बिनु गुन विहीन दीनता सुनाये।
जे जे तैं निहाल किये फूले फिरत पाये॥
तुलसिदास जाचक-रुचि जानि दान दीजै।
रामचन्द्र चन्द तू, चकोर मोहि कीजै॥

(१९)

कहु केहि कहिये कृपानिधे ! भव-जनित बिपति अति।
इन्द्रिय सकल बिकल सदा, निज निज सुभाउ रति॥ १॥
जे सुख सम्पति सरग नरक सन्तत सँग लागी।
हरि ! परिहरि सोइ जतन करत मन मोर अभागी॥ २॥
मैं अति दीन, दयालु देव, सुनि मन अनुरागे।
जो न द्रवहु रघुबीर धीर काहे न दुख लागे॥ ३॥
जद्यपि मैं अपराध-भवन, दुख-समन मुरारे।
तुलसिदास कहँ आस यहै बहु पतित उधारे॥ ४॥

(२०)

मेरे रावरिये गति रघुपति है बलि जाउँ।
निलज नीच निर्गुन निर्धन कहँ जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ॥ १॥
हैं घर-घर बहु भरे सुसाहिब, सूझत सबनि आपनो दाउँ।
बानर-बन्धु बिभीषन-हित बिनु, कोसलपाल कहूँ न समाउँ॥ २॥

प्रनतारति-भंजन जन-रंजन, सरनागत पवि पंजर नाउँ ।
कीजै दास दास तुलसी अब, कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउँ ॥ ३ ॥

(२१)

देव ! दूसरो कौन दीनको दयालु ।
सीलनिधान सुजान-सिरोमनि,
सरनागत-प्रिय प्रनत-पालु ॥ १ ॥
को समरथ सर्वग्य सकल प्रभु,
सिव-सनेह मानस-मरालु ।
को साहिब किये मीत प्रीतिबस
खग निसिचर कपि भील-भालु ॥ २ ॥
नाथ, हाथ माया-प्रपंच सब,
जीव-दोष-गुन-करम-कालु ।
तुलसिदास भलो पोच रावरो,
नेकु निरखि कीजिये निहालु ॥ ३ ॥

(२२)

रघुबर ! रावरि यहै बड़ाई ।
निदरि गनी आदर गरीबपर करत कृपा अधिकाई ॥ १ ॥
थके देव साधन करि सब, सपनेहुँ नहिं देत दिखाई ।
केवट कुटिल भालु कपि कौनप, कियो सकल सँग भाई ॥ २ ॥
मिलि मुनिबृंद फिरत दंडक बन, सो चरचौ न चलाई ।
बारहि बार गीध सबरीकी, बरनत प्रीति सुहाई ॥ ३ ॥
स्वान कहे तें कियो पुर बाहिर जती गयंद चढ़ाई ।
तिय-निंदक मतिमन्द प्रजा-रज निज नय नगर बसाई ॥ ४ ॥

यहि दरबार दीनको आदर रीति सदा चलि आई।
दीन दयालु दीन तुलसीकी काहे न सुरति कराई॥ ५॥

(२३)

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें सन्त स्वभाव गहौंगो॥
जथा लाभ सन्तोष सदा, काहूसों कछु न चहौंगो।
परहित-निरत निरन्तर मन क्रम वचन नेम निवहौंगो॥
परुष बचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत-मान सम सीतल मन पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो॥
परिहरि देह जनित चिन्ता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि, अविचल हरि-भगति लहौंगो॥

(२४) राग केदारा

रघुपति विपति-दवन।
परम कृपालु प्रनत-प्रतिपालक पतित-पवन॥
क्रूर कुटिल कुलहीन दीन अति मलिन जवन।
सुमिरत नाम राम पठये सब अपने भवन॥
गज पिंगला अजामिल-से खल गनैं धौं कवन।
तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्हि गति जानकी-रवन॥

(२५)

मनोरथ मनको एकै भाँति।
चाहत मुनि-मन-अगम सुकृति-फल, मनसा अघ न अघाति॥
करमभूमि कलि जनम कुसंगति, मति बिमोह मद माति।
करत कुजोग कोटि क्यों पैयत परमारथ पद साँति॥ २॥

सेइ साधु गुरु, सुनि पुरान श्रुति बूझ्यों राग बाजी ताँति ।
तुलसी प्रभु सुभाउ सुरतरु सों ज्यों दरपन मुख काँति ॥ ३ ॥

(२६)

दीनको दयालु दानि दूसरो न कोऊ ।
जासों दीनता कहौं हौं देखौं दीन सोऊ ॥ १ ॥
सुर नर मुनि असुर नाग साहब तौ घनेरे ।
तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नयन फेरे ॥ २ ॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बेद वदति चारी ।
आदि अन्त मध्य राम साहबी तिहारी ॥ ३ ॥
तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो ।
सुनि सुभाव सील सुजसु जाचन जन आयो ॥ ४ ॥
पाहन, पसु, बिटप, बिहँग अपने करि लीन्हें ।
महाराज दशरथके ! रंक राय कीन्हें ॥ ५ ॥
तू गरीबको निवाज, हौं गरीब तेरो ।
बारक कहिये कृपालु ! तुलसिदास मेरो ॥ ६ ॥

(२७) राग खमाज—तीन ताल

माधव, मोह-पास क्यों छूटै ।
बाहर कोटि उपाय करिय अभ्यंतर ग्रन्थि न छूटै ॥ १ ॥
घृतपूरन कराह अन्तरगत ससि प्रतिबिंब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाय कल्पसत औंटत नास न पावै ॥ २ ॥
तरु-कोटर महँ बस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे ।
साधन करिय विचारहीन मन, सुद्ध होइ नहिं तैसे ॥ ३ ॥
अन्तर मलिन, विषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ।
मरइ न उरग अनेक जतन बलमीकि बिबिध बिधि मारे ॥ ४ ॥

तुलसिदास हरि गुरु करुना बिनु बिमल बिबेक न होई।
बिनु बिबेक संसार-घोरनिधि पार न पावै कोई ॥ ५ ॥

(२८)

मैं केहि कहौं बिपति अति भारी । श्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥
मम हृदय भवन प्रभु तोरा । तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥
अति कठिन करहिं बर जोरा । मानहिं नहिं बिनय निहोरा ॥
तम, मोह, लोभ, अहँकारा । मद, क्रोध, बोध रिपु मारा ॥
अति करहिं उपद्रव नाथा । मरदहिं मोहि जानि अनाथा ॥
मैं एक, अमित बटपारा । कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥
भागेहु नहिं नाथ ! उबारा । रघुनायक करहु सँभारा ॥
कह तुलसिदास सुनु रामा । लूटहिं तसकर तव धामा ॥
चिंता यह मोहि अपारा । अपजस नहिं होइ तुम्हारा ॥

(२९) राग खमाज—तीन ताल

कुटुम्ब तजि सरन राम ! तेरी आयो ।
तजि गढ़, लंक, महल औ मंदिर,
नाम सुनत उठि धायो ॥ ध्रु० ॥
भरी सभामें रावन बैठयो चरन प्रहार चलायो ।
मूरख अंध कह्यो नहिं मानै बार-बार समुझायो ॥
आवत ही लंकापति कीनो, हरि हँस कंठ लगायो ।
जनम-जनमके मिटे पराभव राम-दरस जब पायो ॥
हे रघुनाथ ! अनाथके बन्धु दीन जान अपनायो ।
तुलसिदास रघुबीर सरनतें भगति अभय पद पायो ॥

(३०) राग खमाज—तीन ताल

माधव ! मो समान जग माहीं।
सब बिधि हीन मलीन दीन अति लीन विषय कोउ नाहीं ॥ १ ॥
तुम सम हेतु रहित, कृपालु, आरतहित ईसहि त्यागी।
मैं दुखसोक बिकल, कृपालु, केहि कारन दया न लागी ॥ २ ॥
नाहिन कछु अवगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना।
ग्यान भवन तनु दियहु नाथ सोऊ पाय न मैं प्रभु जाना ॥ ३ ॥
बेनु करील, श्रीखण्ड बसन्तहिं दूषन मृषा लगावै।
साररहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहुँ कहु पावै ॥ ४ ॥
सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि दृढ़ बिचार जिय मोरे।
तुलसिदास प्रभु मोह सृङ्खला छुटिहि तुम्हारे छोरे ॥ ५ ॥

(३१)

सकुचत हौं अति राम कृपानिधि क्यों करि बिनय सुनावौं।
सकल धरम विपरीत करत, केहि भाँति नाथ मन भावौं ॥ १ ॥
जानत हौं हरि रूप चराचर, मैं हठि नैन न लावौं।
अंजन-केस-सिखा जुवती तहँ लोचन सलभ पठावौं ॥ २ ॥
स्रवननिको फल कथा तुम्हारी, यह समुझौं समुझावौं।
तिन्ह स्रवननि परदोष निरन्तर, सुनि सुनि भरि भरि तावौं ॥ ३ ॥
जेहि रसना गुन गाइ तिहारे, बिनु प्रयास सुख पावौं।
तेहि मुख पर अपवाद भेक ज्यों, रटि रटि जनम नसावौं ॥ ५ ॥
'करहु हृदय अति बिमल बसहिं हरि,'
कहि कहि सबहिं सिखावौं।
हौं निज उर अभिमान-मोह मद खल मण्डली बसावौं ॥ ५ ॥

जो तनु धरि हरिपद साधहिं जन सो बिनु काज गवावौं ।
हाटक-घट भरि धरयौ सुधा गृह तजि नभ कूप खनावौं ॥ ६ ॥
मन-क्रम-वचन लाइ कीन्हें अघ, ते करि जतन दुरावौं ।
पर-प्रेरित इरषा बस कबहुँक, किय कछु सुभ सो जनावौं ॥ ७ ॥
विप्र द्रोह जनु बांट परयो, हठि सबसों बैर बढ़ावौं ।
ताहू पर निज मति-विलास सब सन्तन मांझ गनावौं ॥ ८ ॥
निगम सेस सारद निहोरि जो, अपने दोष कहावौं ।
तौ न सिराहिं कलप सत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावौं ॥ ९ ॥
जो करनी आपनी विचारौं तौ कि सरन हौं आवौं ।
मृदुल सुभाव सील रघुपतिको, सो बल मनहिं दिखावौं ॥ १० ॥
तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिं जेहि सपनेहुँ तुमहिं रिझावौं ।
नाथ कृपा भवसिंधु धेनुपद सम जो जानि सिरावौं ॥ ११ ॥

(३२)

रामचन्द्र रघुनायक तुमसों हौं विनती केहि भाँति करौं ।
अघ अनेक अवलोकि आपने, अनघ नाम अनुमानि डरौं ॥
पर-दुख दुखी सुखी पर सुखते, संत-सील नहिं हृदय धरौं ।
देखि आनकी विपति परम सुख सुनि संपति बिनु आगि जरौं ॥
भगति विराग ग्यान साधन कहि बहु बिधि डहँकत लोग फिरौं ।
सिव सरबस सुखधाम नाम तव, बेंचि नरकप्रद उदर भरौं ॥
जानत हौं निज पाप जलधि जिय जल-सीकर सम सुनत लरौं ।
रज-सम पर अवगुन सुमेरु करि, गुन गिरि-सम रजतें निदरौं ॥
नाना बेष बनाय दिवस निसि परवित जेहि तेहि जुगुति हरौं ।
एकौ पल न कबहुँ अलोल चित, हित दै पद सरोज सुमिरौं ॥

जो आचरन विचारहु मेरो कलप कोटि लगि औटि मरौं ।
तुलसिदास प्रभु कृपा बिलोकनि, गोपद ज्यों भवसिंधु तरौं ॥

(३३)

हरि ! तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों ।
साधन-धाम बिबुध दुरलभ तनु, मोहि कृपा करि दीन्हों ॥ १ ॥
कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभुके, एक एक उपकार ।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं, दीजै परम उदार ॥ २ ॥
बिषय-बारि मन-मीन भिन्न नहिं होत कबहुँ पल एक ।
ताते सहौं बिपति अति दारुन, जनमत जोनि अनेक ॥ ३ ॥
कृपा डोरि बनसी पद अंकुस, परम प्रेम-मृदु चारो ।
एहि बिधि बेगि हरहु मेरो दुख कौतुक राम तिहारो ॥ ४ ॥
हैं स्रुति विदित उपाय सकल सुर, केहि केहि दीन निहोरै ।
तुलसिदास यहि जीव मोह रजु, जोइ बांध्यो सोइ छोरै ॥ ५ ॥

(३४)

ऐसे राम दीन-हितकारी ।
अति कोमल करुनानिधान बिनु कारन पर उपकारी ॥ १ ॥
साधन हीन दीन निज अघ-बस सिला भई मुनि नारी ।
गृहतें गवनि परसि पद पावन, घोर सापते तारी ॥ २ ॥
हिंसारत निषाद तामस बपु, पसुसमान बनचारी ।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस, नहिं कुल जाति बिचारी ॥ ३ ॥
जद्यपि द्रोह कियो सुरपति सुत, कहि न जाय अति भारी ।
सकल लोक अवलोकि सोकहत, सरन गये भय टारी ॥ ४ ॥
बिहँग जोनि आमिष अहार पर, गीध कौन ब्रतधारी ।
जनक समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी ॥ ५ ॥

अधम जाति सबरी जोषित जड़, लोक वेद तें न्यारी।
जानि प्रीति, दै दरस कृपानिधि, सोउ रघुनाथ उधारी ॥ ६ ॥
कपि सुग्रीव बंधु-भय-व्याकुल, आयो सरन पुकारी।
सहि न सके दारुन दुख जनके, हत्यो बालि, सहि गारी ॥ ७ ॥
रिपुको अनुज बिभीषन निसिचर, कौन भजन अधिकारी।
सरन गये आगे ह्वै लीन्हों भेंट्यो भुजा पसारी ॥ ८ ॥
असुभ होइ जिनके सुमिरे तें बानर रीछ बिकारी।
वेद विदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी ॥ ९ ॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी।
कलि-मल-ग्रसित दास तुलसीपर, काहे कृपा बिसारी ? ॥ १० ॥

दैन्य

(३५) राग आसावरी

लाज न आवत दास कहावत।
सो आचरन बिसारि सोच तजि जो हरि तुम कहँ भावत ॥ १ ॥
सकल संग तजि भजत जाहि मुनि, जप तप जाग बनावत।
मो सम मन्द महाखल पाँवर, कौन जतन तेहि पावत ॥ २ ॥
हरि निरमल, मल ग्रसित हृदय, असमंजस मोहि जनावत।
जेहि सर काक कंक बक-सूकर, क्यों मराल तहँ आवत ॥ ३ ॥
जाकी सरन जाइ कोबिद, दारुन त्रयताप बुझावत।
तहूँ गये मद मोह लोभ अति, सरगहुँ मिटत न सावत ॥ ४ ॥
भव-सरिता कहँ नाउ सन्त यह कहि औरनि समुझावत।
हौं तिनसों हरि परम बैर करि तुमसों भलो मनावत ॥ ५ ॥

नाहिन और ठौर मो कहँ, तातें हठि नातो लावत।
राखु सरन उदार-चूड़ामनि, तुलसिदास गुन गावत ॥ ६ ॥

(३६) राग बागेश्री

कौन जतन विनती करिये।
निज आचरन विचारि हारि हिय, मानि जानि डरिये ॥ १ ॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये।
जाते विपति जाल निसिदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये ॥ २ ॥
जानत हूँ मन बचन करम परहित कीन्हें तरिये।
सो बिपरीत, देखि परसुख बिनु कारन हीं जरिये ॥ ३ ॥
स्रुति पुरान सबको मत यह सतसंग सुदृढ़ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षा वस, तिनहि न आदरिये ॥४ ॥
संतत सोइ प्रिय मोहि सदा जाते भवनिधि परिये।
कहौ अब नाथ ! कौन बलतें संसार-सोक हरिये ॥ ५ ॥
जब-कब निज करुना-सुभावतें द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास विस्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिये ॥ ६ ॥

(३७) राग कल्याण

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ देव ! दुखित दीनको।
को कृपालुस्वामि सारिखो राखै सरनागत सब अंगबल-विहीनको ॥ १ ॥
गनिहिं गुनिहिं साहिब लहै, सेवा समीचीनको।
अधम अगुन आलसिनको पालिबो फबि आयो रघुनायक नवीनको ॥ २ ॥
मुखकै कहा कहौं विदित है जीकी प्रभु प्रवीनको।
तिहूँ कान, तिहूँ लोकमें एक टेक रावरी तुलसीसे मन मलीनको ॥ ३ ॥

(३८) राग टोडी

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंजहारी ॥ १ ॥
नाथ तू अनाथको, अनाथ कौन मोसो।
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो ॥ २ ॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर, हौं चेरो।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब विधि हितु मेरो ॥ ३ ॥
तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जो भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु, चरन-सरन पावै ॥ ४ ॥

(३९) राग ललित

खोटो खरो रावरो हौं, रावरे सों झूठ क्यों
कहौंगो, जानो सबहीके मनकी।
करम बचन हिये कहौं न कपट किये,
ऐसी हठि जैसी गाँठि पानी परे सनकी ॥
दूसरो भरोसो नाहिं, बासना उपासनाको,
बासव, बिरन्चि, सुर-नर-मुनि-गनकी।
स्वारथके साथी मेरे हाथी स्वान लेवा देई,
काहूको न पीर रघुबीर दीनजनकी ॥
साँप सभा साबर लबार भये देव दिब्य,
दुसह साँसति कीजै आगे ही या तनकी।
साँचे परौं पाऊँ पान, पन्चनमें पन प्रमान,
तुलसी चातक आस राम स्याम घनकी ॥

(४०)

तऊ न मेरे अघ अवगुन गनिहैं।
जौ जमराज काज सब परिहरि इहै ख्याल उर अनिहैं ॥ १ ॥
चलिहैं छूटि पुंज पापिनके असमंजस जिय जनिहैं।
देखि खलल अधिकार प्रभूसों, मेरी भूरि भलाई भनिहैं ॥ २ ॥
हँसि करिहैं परतीति भक्तकी भक्त सिरोमनि मनिहै।
ज्यों त्यों तुलसिदास कोसलपति, अपनायहि पर बनिहैं ॥ ३ ॥

(४१)

जौ पै जिय धरिहौ अवगुन जनके।
ौ क्यों कटत सुकृत नखते मो पै, बिपुल बृन्द अघ बनके ॥ १ ॥
ाहिहैं कौन कलुष मेरे कृत, कर्म बचन अरु मनके।
ारिहैं अमित सेष सारद-स्रुति, गिनत एक इक छनके ॥ २ ॥
ौ चित चढ़े नाम महिमा निज, गुनगन पावन पनके।
ौ तुलसिहिं तारिहौ बिप्र ज्यों, दसन तोरि जम-गनके ॥ ३ ॥

(४२)

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिये।
मोको और ठौर न सुटेक एक तेरिये ॥
सहस सिलातें अति जड़ मति भई है।
कासों कहौं, कौन गति पाहनहिं दई है ॥
पद-राग-जाग चहौं कौसिक ज्यों कियो हौं।
कलि-मल-खल देखि भारी भीति भियो हौं ॥
करम-कपीस बालि बलि-त्रास-त्रस्यो हौं।
चाहत अनाथ नाथ तेरी बाँह बस्यो हौं ॥

महा मोह रावन बिभीपन ज्यों हयो हौं ॥
त्राहि तुलसीस ! त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं ॥

(४३)

ताहि ते आयो सरन सबेरे ।
ग्यान बिराग भगति साधन कछु सपनेहुँ नाथ न मेरे ॥ १ ॥
लोभ मोह मद काम क्रोध रिपु फिरत रैन दिन घेरे ।
तिनहि मिले मन भयो कुपथ रत फिरै तिहारेहि फेरे ॥ २ ॥
दोप-निलय यह विषय सोक-प्रद कहत संत स्रुति टेरे ।
जानत हूँ चनुराग तहाँ अति सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥ ३ ॥
विप-पियूप सम करहु अगिनि हिम तारि सकहु बिनु बेरे ।
तुम सब ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हेरे ॥ ४ ॥
यह जिय जानि रहौं सब तजि रघुबीर भरोसे तेरे ।
तुलसिदास यह बिपति बाँगुरो तुमहि सों बनै निबेरे ॥ ५ ॥

(४४)

हे प्रभु ! मेरोई सब दोसु ।
सीलसिंधु, कृपालु, नाथ अनाथ, आरत-पोसु ॥
बेप बचन बिराग मन अव अवगुननिको कोसु ।
राम ! प्रीति प्रतीति पोली, कपट करतव ठोसु ॥
राग-रंग कुसंग ही सों साधु-संगति रोसु ।
चहत केहरि- जसहि सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु ॥
संभु सिखवन रसन हूँ नित राम-नामहि घोसु ।
दंभहू कलिनाम कुंभज सोच-सागर सोसु ॥
मोद-मंगल-मूल अति अनुकूल निज निरजोसु ।
रामनाम प्रभाव सुनि तुलसिहू परम परितोसु ॥

(४५)

कैसे देउँ नाथहि खोरि।
काम-लोलुप भ्रमत मन हरि ! भगति परिहरि तोरि ॥
बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि।
देत सिख सिखयो न मानत, मूढ़ता अस मोरि ॥
किये सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि।
संग-वस किये सुभ सुनाये सकल लोक निहोरि ॥
करौं जो कछु धरौं सचि पचि सुकृत सिला बटोरि।
पैठि उर बरबस दयानिधि ! दंभ लेत अजोरि ॥
लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों गरे आसा-डोरि।
बात कहौं बनाइ बुध ज्यों, बर बिराग निचोरि ॥
एतेहुँ पर तुम्हरो कहावत, लाज अँचई घोरि।
निलजता पर रीझि रघुबर देहु तुलसिहिं छोरि ॥

(४६)

काहे ते हरि मोंहि बिसारो।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो ॥ १ ॥
पतित-पुनीत दीन हित असरन सरन कहत स्रुति चारो।
हौं नहिं अधम सभीत दीन ? किधौं वेदन मृषा पुकारो ॥ २ ॥
खग-गनिका-गज व्याध-पाँति जहँ तहँ हौंहूँ बैठारो।
अब केहि लाज कृपानिधान ! परसत पनवारो फारो ॥ ३ ॥
जो कलिकाल प्रबल अति हो तो तुव निदेस तें न्यारो।
तौ हरि रोष सरोस दोष गुन तेहि भजते तजि मारो ॥ ४ ॥
मसक बिरंचि बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाउ तुम्हारो।
यह सामरथ अछत मोंहि त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥ ५ ॥

नाहिन नरक परत मो कहँ डर जद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी प्रभु नामहु पाप न जारो॥ ६

(४७)

माधवजू मोसम मन्द न कोऊ।
जद्यपि मीन पतंग हीनमति, मोहि नहिं पूजै ओऊ॥ १
रुचिर रूप-आहार-वस्य उन्ह, पावक लोह न जान्यो।
देखत विपति विषय न तजत हौं ताते अधिक अयान्यो॥ २
महामोह सरिता अपार महँ, संतत फिरत बह्यो।
श्रीहरि चरनकमल-नौका तजि फिरि फिरि फेन गह्यो॥ ३
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति ज्यों भरि मुख पकरै।
निज तालूगत रुधिर पान करि, मन सन्तोष धरै॥ ४
परम कठिन भव व्याल ग्रसित हौं त्रसित भयो अति भारी।
चाहत अभय भेक सरनागत, खग-पति नाथ बिसारी॥ ५
जलचर-वृंद जाल-अन्तरगत होत सिमिटि एक पासा।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिं देखत निज नासा॥ ६
मेरे अघ सारद अनेक जुग गनत पार नहि पावै।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै॥ ७

(४८)

यौं मन कबहूँ तुमहि न लाग्यो।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरन्तर रहत विषय अनुराग्यो॥ १
ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपन्च घर-घरके।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निर्मल गुनगन रघुबरके॥ २
ज्यों नासा सुगन्ध-रस-बस, रसना षटरस-रति मानी।
राम-प्रसाद-माल, जूठनि लगि, ज्यों न सम

चन्दन-चन्दवदनि-भूपन-पट ज्यों चह पाँवर परस्यो ।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परसको तनु पातकीं न तरस्यो ॥ ४ ॥
ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर सेये वपु बचन हिये हूँ ।
त्यों न राम, सुकृतग्य जे सकुचत सकृत प्रनाम किये हूँ ॥ ५ ॥
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप द्वार-द्वार जग बागे ।
राम-सीय-आश्रमनि चलत त्यों भये न स्रमित अभागे ॥ ६ ॥
सकल अंग पद बिमुख नाथ मुख नामकी ओट लई है ।
है तुलसिहि परतीति एक प्रभु मूरति कृपामई है ॥ ७ ॥

चेतावनी

(४९) राग आसावरी

ममता तू न गई मेरे मन तें ॥
पाके केस जनमके साथी, लाज गई लोकनतें ।
तन थाके कर कंपन लागे, ज्योति गई नैननतें ॥ १ ॥
सरवन बचन न सुनत काहुके बल गये सब इन्द्रिनतें ।
टूटे दसन बचन नहिं आवत सोभा गई मुखनतें ॥ २ ॥
कफ पित बात कन्ठपर बैठे सुतहिं बुलावत करतें ।
भाइ-बन्धु सब परम पियारे नारि निकारत घरतें ॥ ३ ॥
जैसे ससि-मन्डल बिच स्याही छुटै न कोटि जतनतें ।
तुलसिदास बलि जाउँ चरनते लोभ पराये धनतें ॥ ४ ॥

(५०) राग सोरठ

जाके प्रिय न राम बैदेही ।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥ १ ॥

तज्यो पिता प्रह्लाद, विभीषन बन्धु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो, कन्त ब्रज बनितनि भये मुद मंगलकारी ॥ २ ॥
नातें नेह रामके मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै बहुतक कहौ कहाँ लौं ॥ ३ ॥
तुलसी सो सब भाँति परमहित पूज्य प्राणतें प्यारो।
जासों होय सनेह रामपद एतो मतो हमारो ॥ ४ ॥

(५१) राग बिलावल

ते नर नरकरूप जीवत जग,
भव-भंजन पद विमुख अभागी।
निसिबासर रुचि पाप, असुचिमन,
खल मति मलिन निगम पथ त्यागी ॥ १॥
नहिं सतसंग, भजन नहिं हरिको,
स्रवन न रामकथा अनुरागी।
सुत-बित-दार-भवन-ममता-निसि
सोवत अति न कबहुँ मति जागी ॥ २ ॥
तुलसिदास हरि नाम सुधा तजि,
सठ, हठि पियत विषय-विष माँगी।
सूकर-स्वान-सृगाल-सरिस जन
जनमत जगत जननि-दुख लागी ॥ ३ ॥

(५२) राग धनाश्री

मन माधवको नेकु निहारहि।
सुनु सठ, सदा रंकके धन ज्यों, छिन-छिन प्रभुहि सँभारहि ॥

सोभा-सील ग्यान-गुन-मन्दिर, सुन्दर परम उदारहि ।
रंजन सन्त, अखिल अघ गंजन, भंजन विषय विकारहि ॥
जो बिनु जोग, जग्य, व्रत, संयम गयो चहै भव पारहि ।
तौ जनि तुलसिदास निसि वासर हरि-पद कमल विसारहि ॥

(५३)

सुनु मन मूढ़ सिखावन मेरो ।
हरि पद विमुख लह्यो न काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो ॥
बिछुरे ससि रबि मन नैननितें पावत दुख बहुतेरो ।
भ्रमत स्रमित निसि दिवस गगनमहँ तहँ रिपु राहु बड़ेरो ॥
जद्यपि अति पुनीत सुर सरिता, तिहुँ पुर सुजस घनेरो ।
तजे चरन अजहूँ न मिटत नित, बहिबो ताहू केरो ॥ ३ ॥
छुटै न विपति भजे बिनु रघुपति, स्रुति-संदेह निवेरो ।
तुलसिदास सब आस छाँड़ि करि, होहु राम कर चेरो ॥ ४ ॥

(५४)

कबहूँ मन बिस्राम न मान्यो ।
निसिदिन भ्रमत बिसारि सहज सुख, जहँ-तहँ इन्द्रिन तान्यो ॥
जदपि विषय सँग सह्यो दुसह दुख, विषम-जाल अरुझान्यो ।
तदपि न तजत मूढ़, ममता बस, जानतहूँ नहिं जान्यो ॥
जन्म अनेक किये नाना विधि कर्म कीच चित सान्यो ।
होइ न बिमल बिवेक नीर बिनु वेद पुरान बखान्यो ॥
निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों हरषि हृदय नहिं आन्यो ।
तुलसिदास कब तृषा जाय सर खनतहि जनम सिरान्यो ॥

[५५]

रामसे प्रीतम की प्रीति रहित जीव जाय जियत।
जेहि सुख सुख मानि लेत, सुखसो समुझ कियत॥
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि पताल वियत।
तहँ तहँ तू विषय-सुखहिं, चहत लहत नियत॥
कत विमोह लटयो, फटयो, गगन मगन सियत।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ क्यों न सुधा पियत॥

[५६] राग कान्हरा

जो मन लागै रामचरन अस।
देह गेह सुत बित कलत्र महँ मगन होत बिनु जतन किये जस॥
द्वंद्वरहित गतमान ग्यान-रत विषय-विरत खटाइ नाना कस।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिं बस॥
सर्वभूतहित निर्व्यलीक चित भगति प्रेम दृढ़ नेम एक रस।
तुलसिदास यह होइ तबहिं जब द्रवै ईस जेहि हतो सीस दस॥

[५७] राग भैरवी—तीन ताल

भज मन रामचरन सुखदाई॥ ध्रु०॥
जिहि चरननसे निकसी सुरसरि संकर जटा समाई।
जटासंकरी नाम परयो है, त्रिभुवन तारन आई॥
जिन चरननकी चरनपादुका भरत रह्यो लव लाई।
सोइ चरन केवट धोइ लीने तब हरि नाव चलाई॥
सोइ चरन सन्तन जन सेवत सदा रहत सुखदाई।
सोइ चरन गौतमऋषि-नारी परसि परमपद पाई॥
दण्डकबन प्रभु पावन कीन्हो ऋषियन त्रास मिटाई।
सोइ प्रभु त्रिलोकके स्वामी कनक मृगा सँग धाई॥

कपि सुग्रीव बंधु भय-व्याकुल तिन जय छत्र फिराई।
रिपु को अनुज विभीषन निसिचर परसत लंका पाई॥
सिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक सेष सहस मुख गाई,
तुलसिदास मारुत-सुतकी प्रभु निज मुख करत बड़ाई॥

(५८) राग गौड सारंग—तीन ताल

अब लौं नसानीं, अब न नसैहौं।
रामकृपा भव निसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं॥
पायो नाम चारु चिंतामनि उर करतें न खसैहौं॥
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं॥
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुपहिं प्रन करि, तुलसी रघुपतिपदकमल बसैहौं॥

(५९) राग पूर्वी—तीन ताल

मन पछितैसे अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, बचन अरु हीते॥ १॥
सहसबाहु दसबदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते॥ २॥
सुत-बनितादि जानि स्वारथरत न करु नेह सबहीते।
अंतहु तोहिं तजेंगे पामर! तू न तजै अबहीते॥ ३॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जीते।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ, बिषयभोग बहु घी ते॥ ४॥

[६०]

लाभ कहा मानुष-तनु पाये।
काय-बचन-मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराये॥ १॥

[५५]

रामसे प्रीतम की प्रीति रहित जीव जाय जियत
जेहि सुख सुख मानि लेत, सुखसो समुझ कियत।
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि पताल बियत।
तहँ तहँ तू विषय-सुखहिं, चहत लहत नियत।
कत विमोह लटयो, फटयो, गगन मगन सियत।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ क्यों न सुधा पियत।

[५६] राग कान्हरा

जो मन लागै रामचरन अस।
देह गेह सुत वित कलत्र महँ मगन होत विनु जतन किये जस।
द्वंद्वरहित गतमान ग्यान-रत विषय-विरत खटाइ नाना कस।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिं वस।
सर्वभूतहित निर्व्यलीक चित भगति प्रेम दृढ़ नेम एक रस।
तुलसिदास यह होइ तबहिं जब द्रवै ईस जेहि हतो सीस दस।

[५७] राग भैरवी—तीन ताल

भज मन रामचरन सुखदाई ॥ ध्रु० ॥
जिहि चरननसे निकसी सुरसरि संकर जटा समाई,
जटासंकरी नाम परयो है, त्रिभुवन तारन आई।
जिन चरननकी चरनपादुका भरत रह्यो लव लाई
सोइ चरन केवट धोई लीने तब हरि नाव चलाई।
सोइ चरन सन्तन जन सेवत सदा रहत सुखदाई
सोइ चरन गौतमऋषि-नारी परसि परमपद पाई।
दन्डकवन प्रभु पावन कीन्हो ऋषियन त्रास मिटाई।
सोइ प्रभु त्रिलोकके स्वामी कनक मृगा सँग धाई।

कपि सुग्रीव बंधु भय-ब्याकुल तिन जय छत्र फिराई।
रिपु को अनुज विभीषन निसिचर परसत लंका पाई॥
सिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक सेष सहस मुख गाई,
तुलसिदास मारुत-सुतकी प्रभु निज मुख करत बड़ाई॥

(५८) राग गौड सारंग—तीन ताल

अब लौं नसानी, अब न नसैहौं।
रामकृपा भव निसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं॥
पायो नाम चारु चिंतामनि उर करतें न खसैहौं॥
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं॥
परवस जानि हँस्यो इन इंद्रिन निज वस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुपहिं प्रन करि, तुलसी रघुपतिपदकमल बसैहौं॥

(५९) राग पूर्वी—तीन ताल

मन पछितैसे अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, वचन अरु हीते॥ १॥
सहसबाहु दसवदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते॥ २॥
सुत-बनितादि जानि स्वारथरत न करु नेह सबहीते।
अंतहु तोहिं तजेंगे पामर! तू न तजै अबहीते॥ ३॥
अब नांथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जीते।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ, बिषयभोग बहु घी ते॥ ४॥

[६०]

लाभ कहा मानुष-तनु पाये।
काय-बचन-मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराये॥ १॥

जो सुख सुरपुर नरक गेह बन आवत बिनहिं बुलाये।
तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन समुझत नहिं समुझाये ॥ २ ॥
पर-दारा, परद्रोह, मोह-बस किये मूढ़ मन भाये।
गरभवास दुखरासि जातना तीव्र विपति बिसराये ॥ ३ ॥
भय, निद्रा, मैथुन अहार सबके समान जग जाये।
सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गँवाये ॥ ४ ॥
गई न निज-पर बुद्धि सुद्ध ह्वै रहे न राम-लय लाये।
तुलसिदास यह अवसर बीते का पुनिके पछिताये ॥ ५ ॥

भक्ति-प्रेम

(६१)

जानकी-जीवनकी बलि जैहों।
चित कहै, राम सीय पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहों ॥ १ ॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु-पद-विमुख न पैहों।
मन समेत या तनुके बासिन्ह, इहै सिखावन दैहों ॥ २ ॥
स्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और न गैहों।
रोकिहौं नैन विलोकत औरहिं सीस ईसही नैहों ॥ ३ ॥
नातो नेह नाथसों करि सब नातो नेह बहैहों।
यह छर भार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहों ॥ ४ ॥

वैराग्य

(६२)

जो मोहि राम लागते मीठे।
तौ नवरस, षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥ १ ॥

ंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे, सुने अरु डीठे ।
ह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे ॥ २ ॥
ुलसिदास प्रभु सों एकहि बल बचन कहत अति ढीठे ।
ामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे ॥ ३ ॥

वेदान्त

(६३)

अस कछु समुझि परत रघुराया ।
बिनु तुव कृपा दयालु दास हित, मोह न छूटै माया ॥ १ ॥
वाक्य ग्यान अत्यन्त निपुन भव-पार न पावै कोई ।
निसि गृह मध्य दीपकी बातन्ह, तम निवृत्त नहिं होई ॥ २ ॥
जैसे कोइ इक दीन दुखित अति, असन हीन दुख पावै ।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै ॥ ३ ॥
षटरस बहु प्रकार भोजन कोउ दिन अरु रैनि बखानै ।
बिनु बोले सन्तोष-जनित सुख, खाइ सोइ पै जानै ॥ ४ ॥
जब लगि नहिं निज हृदि प्रकाश अरु, बिषय आस मनमाहीं ।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि भ्रमत, सपनेहु सुख नाहीं ॥ ५ ॥

लीला

(६४)

जागिये रघुनाथ कुँवर पञ्छी बन बोले ॥
चन्द किरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई ।
त्रिबिध मन्द चलत पवन पल्लव द्रुम डोले ॥
प्रात भानु प्रगट भयो रजनीको तिमिर गयो ।
भृङ्ग करत गुञ्जगान कमलन दल खोले ॥

ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर-नर-मुनि करत गान।
जागनकी बेर भई नयन पलक खोले॥
तुलसिदास अति अनन्द निरखिके मुखारबिंद।
दीननको देत दान भूषन बहु मोले॥

(६५) राग विभास

जागिये कृपानिधान जानराय, रामचन्द्र।
जननी कहै बार-बार, भोर भयो प्यारे॥
राजिवलोचन विसाल, प्रीति बापिका मराल,
ललित कमल-बदन ऊपर बदन कोटि वारे॥
अरुन उदित, विगत सर्वरी, ससांककिरन हीन,
दीन दीप-ज्योति मलिन-दुति समूह तारे॥
मनहुँ ग्यान घन प्रकास बीते सब भव विलास,
आस त्रास तिमिर-तोप-तरनि-तेज जारे॥
बोलत खग निकर मुखर, मधुर, करि प्रतीति,
सुनहु स्रवन, प्रान जीवन धन, मेरे तुम बारे॥
मनहुँ बेद बन्दी मुनिवृन्द सूत मागधादि बिरुद-
बदत 'जय जय जय जयति कैटभारे'॥

भागे जंजाल बिपुल, दुख-कदम्ब दारे।
तुलसिदास अति अनन्द, देखिकें मुखारविंद,
छूटे भ्रमफन्द परम मन्द द्वन्द भारे।

(६६) राग बिलावल

झूलत राम पालने सोहैं।
भूरि-भाग जननी जन जोहैं॥
तन मृदु मन्जुल मेचकताई।
झलकति बाल बिभूषन-झाँई॥
अधर पानि पद लोहित लोने।
सर-सिंगार भव-सारस सोने॥
किलकत निरखि बिलोल खेलौना।
मनहु बिनोद लरत छवि छौना॥
रन्जित अन्जन कन्ज बिलोचन।
भ्राजत भाल तिलक गोरोचन॥
लस मसिबिंदु बदन बिधु नीको।
चितवत चितचकोर तुलसीको॥

(६७) राग सूहो

राम-पद-पदुम पराग परी।
ऋषि तिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबिमय देह धरी॥ १॥
प्रबल पाप पति-साप दुसह दव दारुन जरनि जरी।
कृपा-सुधा सिंचि बिबुध बेलि ज्यों फिरि सुख-फरनि फरी॥ २॥
निगम अगम मूरति महेस मति जुवति बराय बरी।
सोइ मूरति भइ जानि नयन-पथ इकटकतें न टरी॥ ३॥

(७२) राग केदारा

रघुपति ! मोहिं संग किन लीजै ?
बार-बार, 'पुर जाहु' नाथ ! केहि कारन आयसु दीजै ॥ १ ॥
जद्यपि हौं अति अधम कुटिल मति अपराधिनको जायो।
प्रनतपाल कोमल-सुभाव जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥
जो मेरे तजि चरन आन गति, कहौं हृदय कछु राखी।
तौ परिहरहु दयालु दीन हित प्रभु अभिअन्तर साखी ॥ ३ ॥
ताते नाथ ! कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गुसाईं।
भजन-हीन नरदेह बृथा खर स्वान फेरुकी नाईं ॥ ४ ॥
बन्धु-बचन सुनि श्रवन नयन राजीव नीर भरि आए।
तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बाँह भरत उर लाए ॥ ५ ॥

(७३) राग केदारा

बिनती भरत करत कर जोरे।
दीनबन्धु दीनता दीनकी कबहुँ परै जनि भोरे ॥ १ ॥
तुम्हसे तुम्हहिं नाथ मोको, मोसे, जन तुम्हहि बहुतेरे।
इहै जानि पहिचानि प्रीति छमिये अघ औगुन मेरे ॥ २ ॥
यों कहि सीय-राम-पाँयन परि लाइ उर लीन्हें।
पुलक सरीर नीर भरि लोचन कहत प्रेम पन कीन्हें ॥ ३ ॥
तुलसी बीते अवधि प्रथम दिन जो रघुबीर न ऐहौ।
तो प्रभु-चरन-सरोज-सपथ जीवत परिजनहि न पैहौ ॥ ४ ॥

(७४) राग कल्याण

कर सर धनु, कटि रुचिर निषंग।
प्रिया प्रीति-प्रेरित बन बीथिन्ह
बिचरत कपट-कनक-मृग-संग ॥

भुज विसाल कमनीय कन्ध उर,
स्रम-सीकर मोहैं साँवरे अंग।
मधु मुकुता मनि-मरकतगिरिपर
लसत ललित रवि किरनि-प्रसंग ॥
नलिन-नयन, सिर जटा-मुकुट-बिच
सुमन-माल मनु सिव-सिर-गंग।
तुलसिदास ऐसी मूरतिकी वलि,
छवि विलोकि लाजैं अमित अनंग ॥

(७५) राग सोरठ

राघौ गीध गोद करि लीन्हों।
नयन सरोज सनेह सलिल सुचि मनहुँ अरघ जल दीन्हों ॥
सुनहु लपन ! खगपतिहि मिले वन मैं रिपु-मरन न जान्यौ।
सहि न सक्यौ सो कठिन विधाता बड़ो पछ आजुहि भान्यौ ॥
बहुबिधि राम कह्यौ तनु राखन परम धीर नहिं डोल्यौ।
रोकि प्रेम, अवलोकि वदन-बिधु बचन मनोहर बोल्यौ ॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौं।
जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहि कहाँ पुनि पैहौं ॥

(७६) केदार

पद-पद्म गरीबनिवाजके।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन फल हित सुर साधु समाजके ॥ १ ॥
गई बहोर, ओर निरवाहक, साजक बिगरे साजके।
सवरी-सुखद, गीध-गतिदायक, समन सोक कपिराजके ॥ २ ॥

नाहिन मोहि और कतहूँ कछु जैसे काग जहाजके ।
आयो सरन सुखद पद पंकज चोंथे रावन वाजके ॥ ३ ॥
आरति हरन सरन समरथ सब दिन अपनेकी लाजके ।
तुलसी पाहि कहत नत पालक मोहुँसे निपट निकाजके ॥ ४ ॥

(७७) राग केदारा

दीन-हित बिरद पुराननि गायो ।
आरत-बन्धु, कृपालु मृदुलचित जानि सरन हौं आयो ॥ १ ॥
तुम्हरे रिपुको अनुज बिभीषन बंस निसाचर जायो ।
सुनि गुन सील सुभाउ नाथको मैं चरननि चितु लायो ॥ २ ॥
जानत प्रभु दुख सुख दासिनको तातें कहि न सुनायो ।
करि करुना भरि नयन बिलोकहु तब जानौं अपनायो ॥ ३ ॥
बचन बिनीत सुनत रघुनायक हँसि करि निकट बुलायो ।
भेंट्यो हरि भरि अंक भरत ज्यों लंकापति मन भायो ॥ ४ ॥
करपंकज सिर परसि अभय कियो, जनपर हेतु दिखायो ।
तुलसिदास रघुबीर भजन करि को न परमपद पायो ?॥ ५ ॥

(७८) राग धनाश्री

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ ।
सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम्ह सन कौन दुराउ ॥ १ ॥
सब बिधि हीन-दीन, अति जड़मति जाको कतहुँ न ठाँउ ।
आये सरन भजौं, न तजौं तिहि, यह जानत रिषिराउ ॥ २ ॥
जिन्हके हौं हित सब प्रकार चित, नाहिन और उपाउ ।
तिन्हहि लागि धरि देह करौं सब डरौं न सुजस नसाउ ॥ ३ ॥

पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं, सकल सभा पतिआउ ।
नहि कोऊ प्रिय मोहि दास सम, कपट-प्रीति वहि जाउ ॥ ४ ॥
सुनि रघुपतिके बचन बिभीषन प्रेम-मगन, मन चाउ ।
तुलसिदास तजि आस-त्रास सब ऐसे प्रभु कहँ गाउ ॥ ५ ॥

(७९) राग जयतश्री

कब देखौंगी नयन वह मधुर मूरति ?
राजिवदल-नयन, कोमल-कृपा-अयन,
मयननि बहु छबि अंगनि दूरति ॥ १ ॥
सिरसि जटाकलाप पानि सायक चाप
उरसि रुचिर बनमाल मूरति ।
तुलसिदास रघुबीरकी सोभा सुमिरि,
भई है मगन नहिं तनकी सूरति ॥ २ ॥

(८०) राग सोरठ

बैठी सगुन मनावति माता ।
कब ऐहैं मेरे बाल कुशल घर कहहु काग फुर बाता ॥ १ ॥
दूध भातकी दोनी दैहौं सोने चोंच मढ़ैहौं ।
जब सियसहित विलोकि नयन भरि राम-लखन उर लैहौं ॥ २ ॥
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी ।
गनक बोलाइ पांय परि पूछति प्रेम-मगन मृदु बानी ॥ ३ ॥
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो ।
प्रभु आगमन सुनत तुलसी मनों मीन भरत जल पायो ॥ ४ ॥

(८१)

जानत प्रीति-रीति रघुराई
नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह-सगाई ॥ १ ॥

नेह निबाहि देह तजि दशरथ, कीरति अचल चलाई।
ऐसेहु पितु तें अधिक गीधपर ममता गुन गरुआई ॥ २
तिय-विरही-सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई।
रन परयो बन्धु बिभीषन ही को, सोच हृदय अधिकाई ॥ ३
घर, गुरुगृह, प्रिय-सदन सासुरे भइ जब जहँ पहुनाई।
तब तहँ कहि सबरीके फलनिकी रुचि माधुरी न पाई ॥ ४
सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुच सिर नाई।
केवट मीत कहे सुख मानत बानर बन्धु बड़ाई ॥ ५
प्रेम कनौड़ो रामसो प्रभ त्रिभुवन तिहुँ काल न भाई।
'तेरो रिनी' कह्यौ हौं कपि सों ऐसी मानहि को सेवकाई ॥ ६
तुलसी राम-सनेह-सील लखि, जो न भगति उर आई।
तौ तोहिं जनमि जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गवाँई ॥ ७

रूप

(८२) राग कल्याण

रघुपति राजीवनयन, शोभातनु कोटिमयन ॥
करुनारस-अयन चयन-रूप भूप, माई।
देखो सखि अतुल छबि, सन्त, कंज-कानन-रबि,
गावत कल कीरति कबि-कोविद समुदाई ॥
मज्जन करि सरजु-तीर ठाढ़े रघुबन्स-बीर,
सेवत पद-कमल धीर निरमल ...
बालमन्डली-मुनीन्द्रवृंद-मध्य
राजत सुखसदन

विथुरित सिररुह वरूथ कुन्चित बित सुमन-जूथ,
मनि जुत सिसु फनि-अनिक ससि-समीप आई ।
जनु समीप दै अँकोर राखे जुग रुचिर मोर,
कुंडल-छवि निरखि चोर सकुचत अधिकाई ॥
ललित भ्रकुटि तिलक भाल चिबुक अधर द्विज—
रसाल, हास चारुतर, कपोल नासिका सुहाई ।
मधुकर जुग पंकज बिच सुक बिलोकि नीरज पै—
लरत मधुप-अवलि मानो बीच कियो जाई ॥
सुन्दर पट पीट बिसद, भ्राजत वनमाल उरसि,
तुलसिका प्रसून रचित बिबिध बिधि बनाई ।
तरु-तमाल अधबिच जनु त्रिविध कीर पाँति,
रुचिर, हेमजाव अन्तर परि तातें न उड़ाई ॥
संकर हृदि-पुंडरीक निसि वस हरि चंचरीक,
निर्व्यलीक मानस-गृह सन्तन रहे छाई ॥
अतिसय आनन्दमूल तुलसिदास सानकूल,
हरन सकल मूल, अवध-मंडन रघुराई ॥

(८३) राग केदारा

सखि ! रघुनाथ-रूप निहारु ।
सरद-विधु रवि-सुवन मनसिज-मानभंजनिहारु ॥
स्याम सुभग सरीर जनु मन-काम पूरनिहारु ।
चारु चंदन मनहुँ मरकत सिखर लसत निहारु ॥
रुचिर उर उपवीत राजत, पदिक गजमनिहारु ।
मनहुँ सुरधनु नखत गन बिच तिमिर-भंजनिहारु ॥

विमल पीत दुकूल दामिनि-दुति, विनिंदनिहारे।
वदन सुखमा सदन सोभित मदन-मोहनिहारे॥
सकल अंग अनूप नहिं कोउ सुकवि वरननिहारे।
दास तुलसी निरखतहि सुख लहत निरखनिहारे॥

कृष्ण लीला

(८४) राग आसावरी

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिं।
मैया ! इन्हहिं बानि परगृहकी, नाना जुगुति बनावहिं॥ १
इन्हके लिये खेलिबो छाड्यो तऊ न उबरन पावहिं।
भाजन फोरि, बोरि कर गोरस देन उरहनों आवहिं॥ २
कबहुँक बाल रोवाइ पानि गहि मिसकरि उठि-उठि धावहिं।
करहिं आपु सिर धरहिं आनके वचन बिरंचि हरावहिं॥ ३
मेरी टेव बूझि हलधरको, संतत संग खेलावहिं।
जे अन्याउ करहिं काहूको ते सिसु मोपि न भावहिं॥ ४
सुनि-सुनि वचन चातुरी ग्वालिनि हँसि-हँसि वदन दुरावहिं।
बालगोपाल-केलि-कल-कीरति तुलसिदास मुनि गावहिं॥ ५

(८५) राग केदारा

गोकुल प्रीति नित नई जानि।
जाइ अनत सुनाइ मधुकर ग्यानगिरा पुरानि॥
मिलहिं जोगी जरठ तिन्हहिं दिखाउ निरगुनखानि।
नवल नन्दकुमारके ब्रज सगुन सुजस बखानि॥
तू जो हम आदरयो सो तो नवकमलकी कानि।
तजहिं तुलसी समुझि यह उपदेसिबेकी बानि॥

(८६) राग केदारा

हरिको ललित वदन निहारु !
निपटही डाँटति निठुर ज्यों लकुट करतें डारु ॥
मंजु अंजन सहित जल-कन चुवत लोचन-चारु ।
स्याम सारस मग मनो ससि स्रवत सुधा-सिंगारु ॥
सुभग उर, दधि बुन्द सुन्दर लखि अपनपौ वारु ।
मनहुँ मरकत मृदु सिखरपर लसत बिसद तुषारु ॥
कान्हहूँ पर सतर भौहै, महरि मनहिं बिचारु ।
दास तुलसी रहति क्यों रिस निरखि नंद कुमारु ॥

(८७) राग गौरी

टेरि कान्ह गोवर्धन चढ़ि गैया ।
मथि मथि पियो वारि चारिकमे
भूख न जाति अघाति न घैया ॥ १ ॥
सैल सिखर चढ़ि चितै चकित चित,
अति हित वचन कह्यो वल भैया ।
बाँधि लकुट पट फेरि बोलाई,
सुनि कल वेनु धेनु धुकि धैया ॥ २ ॥
बलदाऊ देखियत दूरिते
आवति छाक पठाई मेरी मैया ।
किलकि सखा सब नचत मोर ज्यों
कूदत कपि कुरंगकी नैया ॥ ३ ॥
खेलत खात परस्पर डहकत
छीनत कहत करत रोगदैया ।

तुलसी बालकेलि सुख निरखत,
बरसत सुमन सहित सुरसैया ॥ ४ ॥

(८८) राग गौरी

गोपाल गोकुल-वल्लभी-प्रिय, गोप गोसुत बल्लभं ।
चरणारविन्दमहं भजे भजनीय सुर-मुनि-दुर्लभं ॥
घनश्याम काम अनेक छवि लोकाभिराम मनोहरं ।
किञ्जल्क-वसन किशोर मूरति, भूरि गुन करुणाकरं ॥
सिर केकिपच्छ, विलोल कुण्डल अरुण बनरुह लोचनं ।
गुञ्जावतंस विचित्र सब अंग धातु भव भय-मोचनं ॥
कच कुटिल सुन्दर तिलक भ्रू राका मयंक समाननं ।
अपहरण-तुलसीदास त्रास, विहार वृन्दा-काननं ॥

श्रीसूरदासजी

नाम

(८९) राग भैरवी

रे मन, कृष्णनाम कहि लीजै ।
गुरुके वचन अटल करि मानहि, साधु समागम कीजै ॥
पढ़िये गुनिये भगति भागवत, और कहा कथि कीजै ।
कृष्णनाम बिनु जनमु बादिही, बिरथा काहे जीजै ॥
कृष्णनाम रस बह्यो जात है, तृषावन्त है पीजै ।
सूरदास हरिसरन ताकिये, जनम सफल करि लीजै ॥

(९०) राग धनाश्री

है हरि नामको आधार ।
और या कलिकाल नाहिन, रह्यो विधि-व्योहार ॥
नारदादि सुकादि संकर, कियो यहै बिचार ।
सकल स्रुति दधि मथत पायो, इतो यह घृतसार ॥
दसहु दिसि गुन करम रोक्यो मीनको ज्यों जार ।
सूर हरिके भजन-वलतें मिट गयो भव-भार ॥

(९१) राग आसावरी

ताते तुमरो भरोसो आवै ।
दीनानाथ पतितपावन जस, बेद उपनिषद गावै ॥
जो तुम कहौ कौन खल तारयो तौ हौं बोलौ साखी ।
पुत्रहेतु हरिलोक गयो द्विज सक्यो न कोऊ राखी ॥
गनिका किये कौन व्रत संजम, सुक हित नाम पढ़ायौ ।
मनसा करि सुमिरचो गज बपुरो, ग्राह परमगति पायौ ॥

(९२) राग सारंग

जो तू रामनाम चित धरतौ ।
अबको जन्म आगिलो तेरो दोऊ जन्म सुधरतौ ॥
जमको त्रास सबै मिटि जातो, भक्त नाम तेरो परतौ ।
तन्दुल घिरत सँवारि स्यामको सन्त परोसो करतौ ॥
होतो नफा साधुकी संगति मूल गाँठते टरतौ ।
सूरदास बैकुण्ठ पैंठमें कोऊ न फेंट पकरतौ ॥

(९३) राग सारंग

जो सुख होत गोपालहि गाये ।
सो नहिं होत किये जप-तपके कोटिक तीरथ न्हाये ॥

दिये लेत नहिं चारि पदारथ, चरन कमल चित लाये।
तीनि लोक तृन सम करि लेखत, नँदनन्दन उर आये॥
वन्शीवट वृन्दावन जमुना, तजि वैकुण्ठ को जाये।
सूरदास हरिको सुमिरन करि, वहुरि न भव चलि आये॥

(९४) राग विहागरो

जो पँ रामनाम धन धरतो।
टरतो नहीं जनम जनमान्तर कहा राज जम करतो॥
लेतो करि व्योहार सबनिसों मूल गाँठमें परतो।
भजन प्रताप सदाई घृत मधु, पावक परे न जरतो॥
सुमिरन गोन वेद विधि बैंठो विप्र परोहन भरतो
सूर चलत वैकुण्ठ पेलिकैं बीच कौन जो अरतो।

(९५) राग कान्हरो

तुम्हरी कृपा गोबिंद गुसाँई हौं अपने अज्ञान न जानत।
उपजत दोष नयन नहिं सूझत रविकी किरन उलूक न मानत।
सब सुख निधि हरिनाम महामनि सो पायो नाहिन पहिचानत
परम कुबुद्धि तुच्छ रस लोभी कौड़ी लगि सठ मग रज छानत।
सिवको धन संतनको सरबसु, महिमा बेद पुरान बखानत
इते मान यह सूर महासठ हरि-नग बदलि महा-खल आनत।

विनय

(९६) राग बागेश्री

जो हम भले-बुरे तो तेरे।
तुम्हें हमारी लाज बड़ाई, विनती सुनु प्रभु मेरे।

सब तजि तुव सरनागत आयो, निज कर चरन गहे रे।
तुव प्रताप बल बदत न काहू, निडर भये घर चेरे॥
और देव सब रंक भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे।
सूरदास प्रभु तुम्हरि कृपा ते पाये सुख जु घनेरे॥

(९७) राग आसावरी

करी गोपालकी सब होइ।
जो अपनो पुरुषारथ मानत, अति झूठो है सोइ॥
साधन मन्त्र यन्त्र उद्यम बल, यह सब डारहु धोइ।
जो कछु लिखि राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिं कोइ॥
दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम कतहि मरत हौ रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, स्यामचरन मन पोइ॥

(९८)

हरि हौ बड़ी बेरको ठाढ़ो।
जैसे और पतित तुम तारे तिनहिन महँ लिखि काढ़ो॥ १ ॥
जुग-जुग विरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ताते।
मरियत लाज पंच पतितनमें, हौं घर कहो कहाँते॥ २ ॥
कै अब हार मानिकर बैठो, कै करु विरद सही।
सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि वही॥ ३ ॥

(९९) राग कान्हरो

दीनानाथ अब बार तुम्हारी।
पतित उधारन विरद जानिकै, बिगरी लेहु सँभारी॥ १ ॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुवा विषयरस माते।
वृद्ध भयो सुधि प्रगटी मोको दुखित पुकारत ताते॥ २ ॥

सुतनि तज्यो, तिय तज्यो, भ्रात तजि तनु त्वच भई जु न्यारी।
स्रवन न सुनत, चरनगति थाकी, नैंन भये जल धारी॥ ३॥
पलित केस कफ कंठ विरोध्यौ कल न परी दिन राती।
माया मोह न छाँड़ै तृस्ना, ए दोऊ दुखदाती॥ ४॥
अब या व्यथा दूरि करिवेको, और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुनासागर, तुमते होइ सु होई॥ ५॥

(१००) राग सारंग

नाथ मोहि अबकी बेर उबारो।
तुम नायनके नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो।
करमहीन जनमको अन्धो, मोते कौन नकारो॥ १
तीन लोकके तुम प्रतिपालक, मैं हूँ दास तिहारो।
तारी जाति कुजाति स्याम तुम मोपर किरपा धारो॥ २
पतितनमें इक नायक कहिये, नीचनमें सरदारो।
कोटि पाप इक पासँग मेरे, अजामिल कौन बिचारो॥ ३
नाठो धरम नाम सुनि मेरो, नरक दिया हठि तारो।
मोको ठौर नहीं अब कोऊ, अपनी बिरद सम्हारो॥ ४
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो।
सूरदास साँचो तब माने, जो ह्वै मम निस्तारो॥ ५

(१०१) राग काफी

अबकी टेक हमारी लाज राखो गिरधारी।
जैसी लाज रखी पारथकी भारत जुद्ध मँझारी॥
सारथि होके रथको हाँक्यो, चक्रसुदर्सन-धारी।
भगतकी टेक न टारी॥ अबकी० ॥ १

जैसी लाज रखी द्रौपदिकी होन न दीन्हि उघारी ।
खैंचत खैंचत दोउ भुज थाके, दुस्सासन पचि हारी ॥
चीर बढ़ायो मुरारी ॥ अबकी० ॥ २ ॥
सूरदासकी लज्जा राखो, अब को है रखवारी ।
राधे राधे श्रीवर प्यारी, श्रीवृषभानु दुलारी ॥
सरन तकि आयो तुम्हारी ॥ अबकी० ॥ ३ ॥

(१०२) राग आसावरी

दीन दुखहरन देव, सन्तन सुखकारी ।
अजल गीध ब्याध, इनमें कहो कौन साध,
पंछीहू पद पढ़ात गनिका-सी तारी ॥
ध्रुवके सिर छत्र देत, प्रह्लाद कहँ उबार लेत,
भगत हेत बाँध्यो सेत, लंकापुरी जारी ॥
तन्दुल देत रीझ जात, सागपातसों अघात,
गिनत नहिं जूठे फल, खाटे-मीठे-खारी ॥
गजको जब ग्राह ग्रस्यो, दुस्सासन चीर खस्यो,
सभा बीच कृष्ण कृष्ण, द्रौपदी पुकारी ॥
इतनेमें हरि आइ गये, बसनन आरूढ़ भये,
सूरदास द्वारे ठाढ़ो, आँधरो भिखारी ॥

(१०३)

तुम तजि और कौन पै जाऊँ ।
काके द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर हथ कहाँ बिकाऊँ ॥ १ ॥
ऐसो को दाता है समरथ, जाके दिये अघाऊँ ।
अन्तकाल तुमरो सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं पाऊँ ॥ २ ॥

रंक अयाची कियो सुदामा, दियो अभय पद ठाऊँ।
कामधेनु चितामनि दीनो, कलप-वृच्छ तर छाऊँ॥ ३
भवसमुद्र अति देखि भयानक, मनमें अधिक डराऊँ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनो पन, सूरदास बलि जाऊँ॥

(१०४)

अब कैसे दूजे हाथ बिकाऊँ।
मन-मधुकर कीनों वा दिनतें, चरन-कमल निज ठाऊँ॥ १
जो जानों औरै कोउ कर्ता तऊ न मन पछिताऊँ।
जो जाको सोई सो जानै, अघतारन नर नाऊँ॥ २
या परतीति होय या जुगकी, परमित छूटत डराऊँ।
सूरदास प्रभु सिंध सरन तजि, नदी-सरन कत जाऊँ॥ ३

(१०५) राग आसावरी

अबकी राखि लेहु भगवान।
हम अनाथ बैठे द्रुम-डरियाँ, पारधि साध्यो बान॥
ताके डर निकसन चाहत हैं, ऊपर रह्यो सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयो कृपानिधि, कौन उबारै प्रान॥
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, जै जै कृपानिधान॥

(१०६) राग सारंग

अपनी भगति दे भगवान।
कोटि लालच जो दिखावहु नाहिनें रुचि आन॥
जरत ज्वाला गिरत गिरितें, स्वकर काटत सीस।
देखि साहस सकुच मानत राखि सकत न ईस॥

कामना करि कोपि कबहूँ करत कर पसु घात।
सिंह सावक जात गृह तजि, इन्द्र अधिक डरात॥
जा दिनातें जनमु पायों यहै मेरी रीति।
विषय बिष हठि खात नाहीं डरत करत अनीति॥
थके किंकर जूथ जमके टारे टरत न नेक।
नरक-कूपनि जाइ जमपुर परचो बार अनेक॥
महा माचल मारिबेकी सकुच नाहिन मोहिं।
परचो हौं पन किये द्वारे लाज पनकी तोहिं॥
नाहिनं कांचो कृपानिधि करौ कहा रिसाइ।
सूर तबहुँ न द्वार छांड़ै डारिहौ कढ़राइ॥

(१०७) राग धनाश्री

अपनेको को न आदर देय।
ज्यों बालक अपराध कोटि करै मात न मारै तेंय॥
ते बेली कैसें दहियतु है जो अपने रस भेय।
श्रीसंकर बहु रतन त्यागिकें विषहिं कण्ठ लपटेय॥
माता अछत छीर बिनु सुत मरै अजाकण्ठ कुच सेय।
जद्यपि सूर महापतित है पतितपावन तुम तेय॥

(१०८) राग बिलावल

अबके माधव मोहि उधारि।
मगन हौं भव-अम्बु-निधिमें कृपासिंधु मुरारि॥
नीर अति गम्भीर माया, लोभ लहरि तरंग।
लिये जात अगाध जलमें गहे ग्राह अनंग॥

मीन इन्द्रिय अतिहि काटत मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत उरझि मोह सेवार॥
काम क्रोध समेत तृस्ना पवन अति झकझोर।
नाहि चितवन देत तिय सुत नाम-नौका ओर॥
थक्यो बीच बेहाल बिहवल सुनहु करुना मूल।
स्याम भुज गहि काढ़ि डारहु सूर ब्रजके कूल॥

(१०९) राग धनाश्री

अब मोहि भीजत क्यों न उबारो।
दीनबन्धु करुनामय स्वामी जनके दुःख निवारो॥
ममता घटा, मोहकी बूँदें, सरिता मैन अपारो।
बूड़त कतहुँ थाह नहिं पावत गुरुजन ओट अधारो॥
गरजन क्रोध, लोभको नारो सूझत कहुँ न उधारो।
तृसना तड़ित चमकि छिन ही छिन अह निसि यह तन जारो॥
यह सब जल कलिमलहिं गहे है बोरत सहस प्रकारो।
सूरदास पतितनको संगी बिरदहिं नाथ सम्हारो।

(११०) राग कान्हरो

ऐसो कब करिहौ गोपाल।
मनसा नाथ मनोरथ दाता हौ प्रभु दीनदयाल॥
चित्त निरन्तर चरनन अनुरत रसना चरित रसाल।
लोचन सजल प्रेम पुलकित तन कर कंजनि-दल-माल॥
ऐसे रहत, लिखौ छिनु छिनु जम अपनो भायो भाल
सूर सुजस रागी न डरत मन सुनि जातना कराल॥

(१११) राग धनाश्री

ऐसे प्रभु अनाथके स्वामी ।
कहियत दीन दास पर-पीरक सब घट अन्तरजामी ॥
करत बिबस्त्र द्रुपद-तनयाको 'सरन' सब्द कहि आयो ।
पूर्ण अनन्त कोटि परिबसननि अरिको गरब गँवायो ॥
सुत हित बिप्र, कीर हित गनिका, परमारथ प्रभु पायो ।
छन चितवन साप सकट ते गज ग्राह तें छुटायो ॥
तव तव पद न देखि अबिगतको जन लगि भेष बनायो ।
जे जन दुखी जानि भए ते रिपु हति हति सुख उपजायो ॥
तुम्हरि कृपा जदुनाथ गुसाईं किहि न आसु सुख पायो ।
सूरदास अंध अपराधी सो काहे बिसरायो ॥

(११२) राग सारंग

कौन गति करिहौ मेरी नाथ ।
हौं तो कुटिल कुचाल कुदरसन रहस विषय के साथ ॥
दिन बीतत मायाके लालच कुल कुटुंबके हेत ।
सारी रैन नींद भरि सोवत जैसे पसू अचेत ॥
कागज धरनि करै द्रुम लेखनि जल सायर मसि घोर ।
लिखैं गनेस जनमभरि ममकृत तऊ दोष नहिं ओर ॥
गज गनिका अरु विप्र अजामिल अगनित अधम उधारे ।
अपयै चलि अपराध करे मैं तिनहूँ ते अति भारे ॥
लिखि लिखि मम अपराध जनमके चित्रगुप्त अकुलायो ।
भृगुऋषि आदि सुनत चकित भये जम सुनि सीस डुलायो ॥
परम पुनीत पवित्र कृपानिधि पावन नाम कहायो ।
सूर पतित जब सुन्यो बिरद यह तब धीरज मन आयो ॥

(११३) राग कल्याण

जैसेहि राखो तैसेहि रहौं ।
जानत हो सब दुख सुख जनको मुखकरि कहा कहौं ॥
कबहुँक भोजन देत कृपाकरि कबहुँक भूख सहौं ।
कबहुँक चढ़ौं तुरग महागज कबहुँक भार बहौं ॥
कमलनयन घनस्याम मनोहर अनुचर भयो रहौं ।
सूरदास प्रभु भगत कृपानिधि तुम्हरे चरन गहौं ॥

(११४) राग धनाश्री

नाथजू अबकै मोहि उबारो ।
पतितनमें विख्यात पतित हौं पावन नाम तुम्हारो ॥
बड़े पतित नाहिन पासंगहु अजामेलको जु बिचारो ।
भाजै नरक नाउ मेरो सुनि जमहु दैय हठि तारो ॥
छुद्र पतित तुम तारे श्रीपति अब न करो जिय गारो ।
सूरदास साँचो तब माने जब होय मम निस्तारो ॥

(११५) राग नट

प्रभु मेरे अवगुन चित न धरो ।
समदरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करो ॥
इक लोहा पूजामें राखत इक घर बधिक परो ।
यह दुबिधा पारस नहि जानत कंचन करत खरो ॥
एक नदिया एक नार कहावत मैलो नीर भरो ।
जब मिलिकै दोउ एक बरन भए सुरसरि नाम परो ॥
एक जीव इक ब्रह्म कहावत सूरस्याम झगरो ।
अबकी बेर मोहि पार उतारो नहि पन जात टरो ॥

(११६) राग केदारा

बंदौं चरन सरोज तुम्हारे ।
जे पदपदुम सदासिवके धन सिंधुसुता उरतें नहिं टारे ॥
जे पदपदुम परसि भइ पावन सुरसरि दरस कटत अघ भारे ।
जे पदपदुम परसि ऋषि-पत्नी, बलि, नृप, ब्याध-पतित बहु तारे ॥
जे पदपदुम रमत बृन्दावन अहि सिर धरि अगनित रिपु मारे ।
जे पदपदुम परसि ब्रज भामिनि, सरबसु दै सुत सदन बिसारे ॥
जे पदपदुम रमत पांडव दल दूत भये सब काज सँवारे ।
सूरदास तेई पदपंकज त्रिबिध ताप दुख हरन हमारे ॥

(११७) राग धनाश्री

विनती जन कासों करै गुसाँई ।
तुम बिनु दीनदयालु, देवतन सब फीकी ठकुराई ॥
अपने से कर चरन नैन मुख अपनी-सी बुधि बाई ।
काल करम बस फिरत सकल प्रभु ते हमरी ही नाई ॥
पराधीन परबदन निहारत मानत मोह बड़ाई ।
हँसे हँसैं, बिलखैं लखि पर दुख ज्यो जलदर्पन झाई ॥
लियो दियो चाहै जो कोऊ सुनि समरथ जदुराई ।
देव सकल ब्यापार निरत नित ज्यों पसु दूध चराई ॥
तुम बिन और न कोउ कृपानिधि पावै पीर पराई ।
सूरदासके त्रास हरनको कृष्ण नाम प्रभुताई ॥

(११८) राग बिहागरो

भजु मन चरन संकटहरन ॥
सनक संकर ध्यान लावत निगम असरन सरन ।
सेस सारद कहैं नारद संत चिंतत चरन ॥

पद पराग प्रताप दुरलभ रमा को हितकरन।
परसि गंगा भई पावन तिहूँ पुर उद्धरन॥
चित चेतत करत, अन्तःकरन तारन तरन।
गए तरि लै नाम केते संत हरि पुर धरन॥
जासु पदरज परसि गौतम-नारि गति उद्धरन।
जासु महिमा प्रगट कहत न धोइ पग सिर धरन॥
कृष्णपद मकरंद पावत और नहिं सिर परन।
सूर प्रभु चरनारविंदतें मटै जन्मरु मरन॥

(११६) राग सारंग

माधव! मोहि काहेकी लाज?
जनम जनम ह्वै रह्यो मैं ऐसो अभिमानी बेकाज॥
कोटिक कर्म किये करुनामय या देहीके सा
निसिवासर विषयारत रुचितें कबहुँ न आयो बाज
बहुत बार जल थल जग जायो भ्रम आयो दिन दे
औगुनकी कछु सकुच न मानी परि आई यह टे
अब अगजाय कहौं घर अपने राखो बाँधि बिबा
सूर स्वानके पालनहारे नावत है दिन गा

(१२०) राग रामकली

सरन गयेको को न उबर्यो?
जब जब भीर परी भगतनपै चक्र सुदरसन तहाँ सँभार्यो
भयौ प्रसाद जु अंबरीषपै दुरवासाको क्रोध निवार्यो
ग्वालन हेतु धर्यो गोवर्धन, प्रगट इन्द्रको गर्व प्रहार्यो

ारी कृपा प्रह्लाद भगतपै खंभ फारि उर नखन विदारचो।
रहरिरूप धरचो करुना करि छिनक माँहि हिरनाकुस मारचो॥
ाह ग्रसित गजको जल बूड़त नाम लेत तुरतै दुख टारचो।
्रस्याम बिनु और करै को रंगभूमिमें कंस पछारचो॥

(१२१) राग धनाश्री

हमें नँदनंदन मोल लियो।
ामकी फाँसि काटि मुकरायो अभय अजात कियो॥
ड़ मुड़ाय कंठ बन माला चक्र के चिन्ह दियो।
ाथे तिलक स्रवन तुलसीदल मेटेव अङ्क बियो॥
ब कोउ कहत गुलाम स्यामको सुनत सिहात हियो।
्रदास प्रभुजूको चेरो जूठनि खाय जियो॥

(१२२) राग नट

हरिसों ठाकुर और न जनको।
ाहि जेहि बिधि सेवक सुख पावै तेहि विधि राखत तिनको॥
ूखे वहु भोजन जु उदरको, तृषा तोय, पट तनको।
ग्यो फिरत सूरति ज्यों सुतसँग, उचित गमन गृह बनको॥
रम उदार चतुर चिंतामन कोटि कुवेर निधनको।
ाखत है जनकी परतिग्या हाथ पसारत कनको॥
ंकट परे तुरत उठि धावत परम सुभट निज पनको।
ोटिक करै एक नहिं मान, सूर महा कृतघनको॥

(१२६) राग धनाश्री

हरिको मीत न देखौं कोई।
ंतकाल सुमिरत तेहि अवसर आनि प्रतिच्छो होई॥

ग्राह गहे गजपति मुकरायो हाथ चक्र लै धायो।
तजि वैकुंठ गरुड़ तजि श्री तजि निकट दासके आयो।
दुरवासाको साप निवारयो अंबरीष पति राखी।
ब्रह्मलोक परजंत फिरयो तहँ, देव मुनीजन साखी।
लाखा गृहतें जरत पांडु-सुत बुधि बल नाथ उबारे।
सूरदास प्रभु अपने जनके, नाना त्रास निवारे।

(१२४) राग देवगंधार

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अंतरजामी, करनी कछु न करी।
औगुन मोते बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी।
सब प्रपंचकी पोट बाँधि कै, अपने सीस धरी।
दारा-सुत-धन मोह लिये हैं, सुधि-बुधि सब बिसरी।
सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरी नाव भरी।

(१२५) राग बिलावल

तुम गोपाल मोसों बहुत करी।
नर देही दीनी सुमिरनको लो पापीतें कछु न सरी॥
गरभ-वास अति त्रास अधोमुख तहाँ न मेरी सुधि बिसरी॥
पावक जठर जरन नहिं दीनो कंचन-सी मेरी देह करी॥
जगमें जनमि पाप बहु कीने आदि-अंत लौं सब बिगरी॥
सूर पतित तुम पतित उधारन अपने बिरदकी लाज धरी॥

दैन्य

(१२६) राग सारंग

हरि हौं सब पतितनको राय।
को करि सकै बराबरि मेरी, सो तो मोहिं बताय॥

ब्याध गीध अरु पतित पूतना, तिनमहँ बढ़ि जो और।
तिनमें अजामील गनिका पति, उनमें मैं सिरमौर ॥
जहँ तहँ सुनियत यहै बड़ाई, मो समान नहिं आन।
अब रहे आजु कालिके राजा, मैं तिनमें सुलतान ॥
अबलौं तो तुम विरद बुलायो, भई न मोसों भेंट।
तजौ बिरद कै मोहि उधारो, सूर गही कसि फेंट ॥

(१२७)

अव मैं नाच्यों वहुत गुपाल।
काम क्रोधको पहिरि चोलना, कंठ विषयकी माल ॥ १ ॥
महा मोहके नूपुर बाजत, निंदा शब्द रसाल।
भरम भरयो मन भयो पखावज, चलत कुसंगत चाल ॥ २ ॥
तृष्ना नाद करत घट भीतर, नाना विधि दै ताल।
मायाको कटि फेंटा बाँध्यो लोभ तिलक दै भाल ॥ ३ ॥
कोटिक कला काँछि देखराई, जलथल सुधि नहिं काल।
सूरदासकी सबै अविद्या, दूरि करें नँदलाल ॥ ४ ॥

(१२८) राग आसावरी

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि विसरायो, ऐसो नमकहरामी ॥ १ ॥
भरि भरि उदर विषयकों धायो जैसे सूकर-ग्रामी।
हरिजन छाँड़ि हरी विमुखनकी निसि दिन करत गुलामी ॥ २ ॥
पापी कौन बड़ो जग मोते सब पतितनमें नामी।
सूर पतितको ठौर कहाँ है, तुम विनु श्रीपति स्वामी ॥ ३ ॥

(१२९) राग भैरवी

सुने री मैंने निरबलके बल राम ।
पिछली साख भरूँ संतनकी, अड़े सँवारे काम ॥ १ ॥
जब लगि गज बल अपनो बरत्यो, नेक सरयो नहिं काम ।
निरबल है बल राम पुकारयो आये आधे नाम ॥ २ ॥
द्रुपद सुता निरबल भइ ता दिन, तजि आये निज धाम ।
दुस्सासनकी भुजा थकित भई, बसन रूप भये स्याम ॥ ३ ॥
अप-बल तप-बल और बाहु-बल, चौथो है बल दाम ।
सूर किसोर-कृपातें सब बल हारेको हरिनाम ॥ ४ ॥

(१३०) राग धनाश्री

पतितपावन हरि बिरद तुम्हारो कौने नाम धरयो ।
हौं तो दीन-दुखित अति दुर्बल द्वारे रटत परयो ॥
चारि पदारथ दये सुदामहिं तंदुल भेंट धरयो ।
द्रुपद-सुताकी तुम पति राखी अंबर दान करयो ॥
संदीपन-सुत तुम प्रभु दीने बिद्या पाठ करयो ।
सूरकी बिरियाँ निठुर भये प्रभु मोतें कछु न सरयो ॥

(१३१) राग सारंग

ोह मदं बन्दी गुन गावत मागध दोप अपार।
ूर पापको गढ़ दृढ़ कीनो मुहकम लाइ किवार॥

(१३२) राग सारंग

ुम हरि सँकरेके साथी।
ुनत पुकार परम आतुर ह्वै, दौरि छुड़ायो हाथी॥ १॥
र्भ परिच्छित रच्छा कीन्हीं वेद उपनिपद साखी।
सन बढ़ाय द्रुपद-तनयाके, सभा माँझ पत राखी॥ २॥
राज रवनि गाई व्याकुल ह्वै दै दै सुतका धीरक।
मागध हृति राजा सब छोरे, ऐसे प्रभु पर पीरक॥ ३॥
कपट स्वरूप धरचो जब कोकिल नृप प्रतीति कर मानी।
कठिन परी तवहीं प्रभु प्रगटे, रिपु हृति सब सुखदानी॥ ४॥
ऐसे कहीं कहाँ लौं गुन गन, लिखित अन्त नहिं पइये।
कृपासिंधु उनहींके लेखे, मम लज्जा निरवहिये॥ ५॥
सूर तुम्हारी ऐसे निबही, संकटके तुम साथी।
ज्यों जानों त्यों करो दीनकी, वात सकल तुम हाथी॥ ६॥

(१३३) राग नट

हैं प्रभु! मोह्न तें बढ़ि पापी?
घातक कुटिल चवाई कपटी मोह क्रोध संतापी॥ १॥
लपट भूत पूत दमरीको विपय जाप नित जापी।
काम बिबस कामिनिहींके रस हठ करि मनसा थापी॥ २॥
भच्छ अभच्छ अपै पीवनको लोभ लालसा धापी।
मन क्रम बचन दुसह सबहिन सों कटुक बचन आलापी॥ ६॥
जेते अधम उधारे प्रभु तुम मैं तिन्हकी गति मापी।
सागर सर बिकार जल भरो बधिक अजामिल चापी॥ ४॥

(१३४) राग सारंग

हरि हौं सब पतितनको नायक ।
को करि सकै बराबरि मेरी और नहीं कोउ लायक।
जैसो अजामेलको दीनो सोइ पटो लिखि पाऊँ
तौ बिस्वास होइ मन मेरे औरौ पतित बुलाऊँ।
यह मारग चौगुनो चलाऊँ तौ पूरो ब्योपारी
बचन मानि लै चलौं गाँठि दै पाऊँ सुख अति भारी।
यह सुनि जहाँ तहाँते सिमटैं आइ होइ एक ठौर
अबकी तौ अपनी लै आयौं बेरि बहुरिकी और।
होड़ा होड़ी मन हुलास करि किये पाप भरि पेट
सबै पतित पायन तर डारौं इहै हमारी भेंट।
बहुत भरोसो जानि तुम्हारो अघ कीन्हे भरि भाँड़ो
लीजै नाथ निबेर तुरतहिं सूर पतितको टाँड़ो।

(१३५) राग धनाश्री

तुम कब मोसो पतित उधारयो ।
काहेको प्रभु बिरद बुलावत बिनु मसकतको तारयो।
गीध ब्याध पूतना जो मारी तिनपर कहा निहोरो
गनिका तरी आपनी करनी नाम भयो प्रभु तोरो।
अजामील द्विज जनम जनमको हुतो पुरातन दास
नेक चूकतें यह गति कीन्ही पुनि बैकुंठहि बास।
पतित जानिकै सब जन तारे रही न काहू खोट
तौ जानौं जो मोहूँ तारौ सूर कूर कवि ढोट।

चेतावनी

(१३६) राग आसावरी

छाँड़ि मन हरि बिमुखन को संग ।
जिनके संग कुबुधि उपजति है पुरत भजनमें भंग ॥
कहा होत पय पान कराये, बिष नहिं तजत भुजंग ।
कागहि कहा कपूर चुगाये, खान न्हवाये गंग ॥
खरको कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन अंग ।
गजको कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै खहि छंग ॥
पाहन पतित बाँस नहिं बेधत, रीतो करत निषंग ।
सूरदास खल कारी कामरि, चढ़त न दूजो रंग ॥

(१३७) राग आसावरी

भजन बिनु कूकर सूकर जैसो ।
जैसे घर बिलावके मूसा, रहत विषय-बस तैसो ॥
बकी और बक गीध गीधनी, आइ जनम लिय वैसो ।
उनहूँके ये सुत दारा हैं, इन्हें भेद कहु कैसो ॥
जीव मारिकें उदर भरत हैं, तिनके लेखे ऐसे ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनो ऊँट खर भैंसो ॥

(१३८) राग आसावरी

भगति बिनु बैल बिराने ह्वैहो ॥
पाँव चारि, सिर, सींग, गूँग मुख, तब गुन कैसे जैहै ।
टूटो कंध सु-फूटी नाकनि, को लौं धौं भुस खैहो ॥
लादत जोतत लकुट बाजिहै तब कहँ मूँड़ दुरैहो ।
सीत घाम घन बिपति बहुत बिधि, भार तरे मरि जैहो ॥

हरि-दासनको कह्यो न मानत, कियो आपनो पैहौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मिथ्या जनम गँवैहौ॥

(१३९) राग भीमपलासी

रे मन जनम पदारथ जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वैहैं ज्यों तरवरके पात॥ १॥
सन्निपात कफ कंठ विरोधी, रसना टूटी जात।
प्रान लिये जम जात मूढ़मति, देखत जननी तात॥ २॥
छिन इक माहिं कोटि जुग बीतत फेरि नरककी बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमरकी चाखत ही उड़ि जात॥ ३॥
जमके फंद नहीं पड़ु बौरे, चरनन चित्त लगात।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यों इतरात॥ ४॥

(१४०) राग धनाश्री

सबै दिन गये विषयके हेत।
तीनों पन ऐसे ही बीते, केस भये सिर सेत॥
आँखिन अंध स्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत।
गंगाजल तजि पियत कूप जल, हरि तजि पूजत प्रेत॥
रामनाम बिनु क्यों छूटोगे, चंद गहै ज्यों केत।
सूरदास कछु खरच न लागत, राम नाम मुख लेत॥

(१४१)

सोई भलो जो रामहि गावै।
स्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक, बिनु गुपाल द्विज जन्म न भावै॥ १॥
बाद-बिबाद यज्ञ व्रत साधे, कतहूँ जाय जनम डहकावै।
होइ अटल जगदीश-भजनमें, सेवा तासु [illegible] फल पावै॥ २॥

हूँ ठौर नहिं चरन-कमल विनु, भृंगी ज्यों दसहूं दिसि धावै ।
रदास प्रभु संत-समागम, आनंद अभय निसान वजावै ॥ ३ ॥

(१४२)

सबै दिन नाहिं एक-से जात ।
सुमिरन ध्यान कियो करि हरिको, जब लगि तन कुसलात ॥ १ ॥
कबहूं कमला चपला पाके, टेढ़े टेढ़ जात ।
कबहुंक मग-मग धूरि टटोरत, भोजनको बिलखात ॥ २ ॥
या देहीके गरब बावरा, तदपि फिरत इतरात ।
वाद-विवाद सबै दिन बीते, खेलत ही अरु खात ॥ ३ ॥
हौं बड़, हौं बड़, बहुत कहावत, सूधे करत न बात ।
जोग न जुगुति ध्यान नहिं पूजा, वृद्ध भये अकुलात ॥ ४ ॥
बालापन खेलत ही खोयो, तरुनापन अलसात ।
सूरदास अवसरके बीते, रहिहौ पुनि पछितात ॥ ५ ॥

(१४३)

रे मन मूरख जनम गँवायो ।
कर अभिमान विषयसों राच्यों, नाम सरन नहिं आयो ॥ १ ॥
यह संसार फूल सेमरको सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो ॥ २ ॥
कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास हरि नाम-भजन बिनु सिर धुनि-धुनि पछितायो ॥ ३ ॥

(१४४)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन-तरुवरके सबै पात झरि जैहैं ॥ १ ॥

हरि-दासनको कह्यो न मानत, कियो आपनो पैहो।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मिथ्या जनम गँवैहो॥

(१३९) राग भीमपलासी

रे मन जनम पदारथ जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै हैं ज्यों तरुवरके पात॥ १॥
सन्निपात कफ कंठ विरोधी, रसना टूटी जात।
प्रान लिये जम जात मूढ़मति, देखत जननी तात॥ २॥
छिन इक माँहि कोटि जुग बीतत फेरि नरककी बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमरकी चाखत ही उड़ि जात॥ ३॥
जमके फंद नहीं पडु बौरे, चरनन चित्त लगात।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यों इतरात॥ ४॥

(१४०) राग धनाश्री

सबै दिन गये विषयके हेत।
तीनो पन ऐसे ही बीते, केस भये सिर सेत॥
आँखिन अंध श्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत।
गंगाजल तजि पियत कूप जल, हरि तजि पूजत प्रेत॥
रामनाम बिनु क्यों छूटोगे, चंद्र गहे ज्यों केत।
सूरदास कछु खरच न लागत, राम नाम मुख लेत॥

(१४१)

सोई भलो जो रामहिं गावै।
स्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक, बिनु गुपाल द्विज जन्म न भावै॥ १॥
बाद-बिवाद जग्य ब्रत साधैं, कतहूँ जन्म डहकावै।
होइ अटल जगदीस-भजनमें, सेवा तासु चारि फल पावै॥ २॥

कहुँ ठौर नहिं चरन-कमल बिनु, भृंगी ज्यों दसहूं दिसि धावै ।
सूरदास प्रभु संत-समागम, आनंद अभय निसान बजावै ॥ ३ ॥

(१४२)

सबै दिन नाहिं एक-से जात ।
सुमिरन ध्यान कियो करि हरिको, जब लगि तन कुसलात ॥ १ ॥
कबहूं कमला चपला पाके, टेढ़े टेढ़ जात ।
कबहुंक मग-मग धूरि टटोरत, भोजनको बिलखात ॥ २ ॥
या देहीके गरब बावरा, तदपि फिरत इतरात ।
बाद-बिवाद सबै दिन बीते, खेलत ही अरु खात ॥ ३ ॥
हौं बड़, हौं बड़, बहुत कहावत, सूधे करत न बात ।
जोग न जुगुति ध्यान नहिं पूजा, वृद्ध भये अकुलात ॥ ४ ॥
बालापन खेलत ही खोयो, तरुनापन अलसात ।
सूरदास अवसरके बीते, रहिहौ पुनि पछितात ॥ ५ ॥

(१४३)

रे मन मूरख जनम गँवायो ।
कर अभिमान विषयसों राच्यों, नाम सरन नहिं आयो ॥ १ ॥
यह संसार फूल सेमरको सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो ॥ २ ॥
कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास हरि नाम-भजन बिनु सिर धुनि-धुनि पछितायो ॥ ३ ॥

(१४४)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन-तरुवरके सबै पात झरि जैहैं ॥ १ ॥

घरके कहिहैं बेगहि काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैं।
जा प्रीतमसों प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैं॥ २
कहँ वह ताल कहाँ वह शोभा, देखत धूरि उड़ैहैं।
भाई बन्धू कुटुँब कबीला, सुमिरि-सुमिरि पछितैहैं॥ ३
बिना गुपाल कोऊ नहि अपनों, जस कीरति रहि जैहैं।
सो तो सूर दुर्लभ देवनको, सत-संगति महँ पैहैं॥ ४

(१४५) राग बागेश्री

हरि बिन दरिद्र हरै !
कहत सुदामा सुन सुंदरि जिय मिलन न हरि बिसरै॥
और मित्र ऐसे कुसमै महँ कत पहिचान करै।
बिपति परे कुसलात न बूझै, बात नहीं उचरै॥
उठिके मिले तंदुल हम दीन्हें, मोहन बचन फुरै।
सूरदास स्वामीकी महिमा, विधि टारी न टरै॥

(१४६) राग टोडी

अजहूँ सावधान किन होहि।
माया विषम भुजंगिनिको विष उतरघो नाहिन तोहि।
कृष्ण सुमंत्र सुद्ध बन मूरी जिहि जन मरत जिवायो।
बार-बार स्रवनन समीके होइ गुरु गारुड़ी सुनायो॥
जाग्यौ, मोह मैर मति छूटी सुजस गीतके गाए।
सूर गई अग्यान, मूरछा ग्यान-सुभेषज खाए॥

(१४७) राग मलार

ऐसी करत अनेक जनम गये मन संतोष न पायो।
न दिन अधिक दुरासा लागी सकल लोक फिरि आयो॥१

सुनि सुनि स्वर्ग रसातल भूतल तहीं तहीं उठि धायो।
काम क्रोध मद लोभ अगिन ते जरत न काहु बुझायो ॥ २ ॥
स्रक चंदन बनिता विनोद सुख यह जुर जरत बितायो।
मैं अजान अकुलाइ अधिक लै जरत माँझ घृत नायो ॥ ३ ॥
भ्रमि भ्रमि हौं हारयो हिय अपने देखि अनल जग छायो।
सूरदास प्रभु तुम्हरि कृपा बिनु कैसे जात बुतायो ॥ ४ ॥

(१४८) राग बिलावल

कहा कमी जाके रामधनी ?
मनसा नाथ मनोरथ-पूरन सुखनिधान जाकी मौज घनी ॥ १ ॥
अर्थ धर्म अरु काम मोच्छ फल चार पदारथ देत छनी।
इन्द्र समान हैं जाके सेवक मो बपुरेकी कहा गनी ॥ २ ॥
कहौ कृपनकी माया कितनी करत फिरत अपनी अपनी ?
खाइ न सकै खरच नहिं जानै ज्यों भुजंग सिर रहत मनी ॥ ३ ॥
आनँद मगन रामगुन गावैं दुख संतापकी काटि तनी।
सूर कहत जे भजत रामको तिन सों हरिसों सदा बनी ॥ ४ ॥

(१४९) राग धनाश्री

कितक दिन हरि सुमिरन बिनु खोये।
पर निंदा रसमें रसनाके अपने परत डबोये ॥
तेल लगाइ कियो रुचि मर्दन वस्त्रहिं मलि मलि धोये।
तिलक लगाइ चले स्वामी बनि बिषयनिके मुख रोये ॥
काल बलीते सब जग कंपत ब्रह्मादिक हू रोये।
सूर अधमकी कहौ कौन गति उदरि भरे पर सोये ॥

(१५०) राग धनाश्री

मो सम पतित न और गुसाईं !
औगुन मोते अजहुँ न छूटत, भली, तजी अब ताईं ॥
जनम-जनम योंही भ्रमि आयो, कपि-गुंजाकी नाईं।
परसत सीत जात नहिं क्योंहू, लै लै निकट बनाई ॥
मोह्यो जाइ कनक-कामिनिसों, ममता मोह बढ़ाई।
रसना स्वादु मीन ज्यों उरझी, सूझत नहिं फंदाई ॥
सोवत मुदित भयो सुपनेमें, पाई निधि जो पराई।
जागि परयो कछु हाथ न आयो, यह जगकी प्रभुताई ॥
परसे नाहिं चरन गिरिधरके बहुत करी अनिआई।
सूर पतितकों ठौर और नहिं राखि लेउ सरनाई ॥

(१५१) राग केदारो

तुम्हरो कृष्ण कहत कहा जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वैहैं ज्यों तरवरके पात ॥
सीत बायु कफ कंठ बिरोध्यौ रसना टूटी बात।
प्रान लिये जम जात मूढ़ मति देखत जननी तात ॥
छिनु एक माँह कोटि जुग बीतत, नरककी पाछे बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमर ज्यों चाखत ही उड़ि जात ॥
जमकी त्रास नियर नहिं आवत चरनन चित्त लगात।
गावत सूर बृथा या देही इतनौ कत इतरात ॥

भक्त-महिमा

(१५२)

हम भगतनके भगत हमारे।
सुन अरजुन परतिग्या मोरी यह ब्रत टरत न टारे ॥

भगतन काज लाज हिय धरिकैं पाँय पियादे धायौ।
जहँ-जहँ भीर परै भगतनपै तहँ-तहँ होत सहायौ॥
जो भगतनसों बैर करत है सो निज बैरी मेरो।
देख बिचार भगत-हित कारन हाँकत हौं रथ तेरो॥
जीते जीत भगत अपनेकी हारे हार बिचारौं।
सूरस्याम जो भगत-बिरोधी चक्र सुदरसन मारौं॥

महिमा

(१५३) राग देवगंधार

जाको मनमोहन अंग करै।
ताको केस खसै नहिं सिरतें जो जग बैर परै॥
हिरनकसिपु परहारि थक्यो प्रहलाद न नेकु डरै।
अजहूँ सुत उत्तानपादको राज करत न टरै॥
राखी लाज द्रुपदतनयाकी कुरुपति चीर हरै।
दुर्योधनको मान भंग करि बसन प्रवाह भरै॥
विप्र भगत नृप अंधकूप दियो, बलि पढ़ि बेद छरै।
दीन दयालु कृपालु दयानिधि कापै कह्यो परै॥
जब सुरपति कोप्यो व्रज ऊपर कहिहू कछु न सरै।
राखे व्रजजन नँदके लाला गिरिधर बिरद धरै॥
जाको बिरद है गरबप्रहारी सो कैसे बिसरै।
सूरदास भगवंत-भजन करि, सरन गहे उधरै॥

प्रकीर्ण

(१५४) राग कान्हरो

अविगत गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूँगेहि मीठे फलको रस अंतरगत ही भावै॥

कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं कबहुँ अधर फरकावैं।
सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रही कर कर सैन बतावैं॥
इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरे गावैं।
जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नँद भामिनि पावैं॥

(१५६) राग बिलावल

जसुमति मन अभिलाष करैं।
कब मेरो लाल घुटुरुवन रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरैं॥
कब द्वै दंत दूधके देखौं कब तुतरे मुख बैन झरैं।
कब नन्दहि कहि बाबा बोलै कब जननी कहि मोहि ररैं॥
कब मेरो अँचरा गहि मोहन जोइ-सोइ कहि मोसों झगरैं।
कबधौं तनक तनक कछु खैहै अपने करसों मुखहिं भरैं॥
कब हँसि बात कहैगो मोसों छवि पेखत दुख दूरि टरैं।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े आपु गई कछु काज घरैं॥
एहि अंतर अँधवाइ उठी इक गरजत गगन सहित थहरैं।
सूरदास व्रज लोग सुनत धुनि जो जहँ-तहँ सब अतिहि डरैं॥

(१६०) राग गौरी

लालन हौं वारी तेरे या मुख ऊपर।
माई मेरिहि डीठि न लागै ताते मसिबिंदा दयो भ्रू पर॥ १
सबँसु मैं पहिले ही दीनी नान्ही नान्ही दँतुली दूपर।
अब कहा करौं निछावरि सूर जसोमति अपने लालन ऊपर॥ २

(१६१) राग सारंग

लालन तेरे मुखपर हौं वारी।
बाल-गोपाल लगौ इन नैननि रोगु बलाय तुम्हारी

टट-लटकन मोहन मसि बिंदुका तिलक भाल सुखकारी ।
मनहुँ कमल अलिसाधक पगति उड़त मधुर छबि भारी ॥
लोचन ललित कपोलनि काजर छबि उपजत अधिकारी ।
मुख सनमुख औरै रुचि बाढ़ति हँसत दै दै किलकारी ॥
अल्प दसन कलबल करि बोलनि बिधि नहिं परति बिचारी ।
निकसति दुति अधरन के बिच ह्वै मानो बिधुमें बीजु उज्यारी ॥
सुंदरताको पार न पावति रूप देखि महतारी ।
सूर सिंधुकी बूँद भई मिलि मति गति दीठि हमारी ॥

(१६२) राग देवगंधार

कहन लगे मोहन मैया मैया ।
पिता नंदसों बाबा बाबा अरु हलधरसों भैया ॥
ऊँचे चढ़ि चढ़ि कहत जसोदा लै लै नाम कन्हैया ।
दूरि कहूँ जिनि जाहु लला रे मारेगी काहूकी गैया ॥
गोपी ग्वाल करत कौतूहल घर घर लेत बलैया ।
मनिखंभन प्रतिबिंब बिलोकत नचत कुँवर निज पैया ॥
नंद जसोदाजीके उरतें इह छबि अनत न जइया ।
सूरदास प्रभु तुमरे दरसको चरननकी बलि गइया ॥

(१६३) राग बिलावल

बरनों बाल-भेष मुरारि ।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन नंदलाल निहारि ॥
केस सिर बिन पवनके चहुँ दिसा छिटके झारि ।
सीसपर धरे जटा मानो रूप किय त्रिपुरारि ॥

तिलक ललित ललाट केसरि बिंदु सोभाकारी।
अरुन रेखा जनु त्रिलोचन रह्यो निज पुर जारि॥
कंठ कठुला नील मनि, अभोज-माल संवारि।
गरल ग्रीव कपाल उर यहि भाय भये मदनारि॥
कुटिल हरि नख हिये हरिके हरषि निरखति नारि।
ईस जनु रजनीस राख्यो भालहू ते उतारि॥
सदन-रज तन स्याम सोभित सुभग इहि अनुहारि।
मनहु अंग विभूति, राजत संभु सो मधु-हारि॥
त्रिदसपति-पति असनको अति जननिसों करि आरि।
सूरदास विरंचि जाको जपत निज मुख चारि।

(१६४) राग रामकली

मेरी माई ऐसो हठी बालगोविन्दा।
अपने कर गहि गगन बतावत खेलनको मांगै चंदा।
बासनकें जल धरयो जसोदा हरिको आनि दिखावै।

जो कहति बलकी बेनी ज्यों ह्वैहै लाँबी मोटी।
ाढ़त गुहत न्हवावत ओंछति नागिनि-सी भुइँ लोटी ॥
चो दूध पिवावत पचि पचि देत न माखन रोटी।
र स्याम चिरजिव दोउ भैया हरि-हलधरकी जोटी ॥

(१६६) राग गौरी

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
सो कहत मोलको लीनो तोहि जसुमति कब जायो ॥ १ ॥
हा कहौं एहि रिसके मारे खेलन हौं नहिं जातु।
नि पुनि कहत कौन है माता को है तुम्हरो तातु ॥ २ ॥
रि नंद जसोदा गोरी तुम कत स्याम सरीर।
टकी दै दै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलबीर ॥ ३ ॥
मोहीको मारन सीखी दाउहि कबहुँ न खीझै।
ोहनको मुख रिस समेत लखि जसुमति सुनि सुनि रीझै ॥ ४ ॥
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई जनमत ही को धूत
सूर स्याम मोहि गोधनकी सौं हौ माता तू पूत ॥ ५ ॥

(१६७) राग रामकली

मो देखत जसुमति तेरे ढोटा अबहीं माटी खाई।
इहं सुनिके रिस करि उठि धाई बाँह पकरि लै आई ॥ १ ॥
इक करसों भुज गहि गाढ़े करि इक कर लीने साँटी।
मारति हौं तोहि अबहिं कन्हैया बेगि न उगिलै माटी ॥ २ ॥
ब्रज-लरिका सब तेरे आगे झूठी कहत बनाई।
मेरे कहे नहीं तू मानति दिखरावौं मुँह बाई ॥ ३ ॥

अखिल ब्रह्मांड खंड की महिमा दिखराई मुख माहीं।
सिंधु सुमेरु नदी बन परवत चकित भई मन माहीं॥
करते साँटि गिरत नहिं जानी भुजा छाँड़ि अकुलानी।
सूर कहै जसुमति मुख मूँदेउ बलि गई सारँग पानी॥

(१६८) राग गौरी

मैया री मोहिं माखन भावै।
मधु मेवा पकवान मिठाई मोहिं नाहिं रुचि आवै॥
ब्रजजुवती इक पाछे ठाढ़ी सुनति स्यामकी बातें।
मन मन कहति कबहुँ अपने घर देखौं माखन खातें॥
बैठे जाय मथनियाँके ढिग, मैं तब रहौं छिपानी!
सूरदास प्रभु अंतरजामी ग्वालि मनहिकी जानी॥

(१६९) राग गौरी

जो तुम सुनहु जसोदा गोरी।
नँदनंदन मेरे मंदिरमें आजु करन गये चोरी॥
हौं भई आनि अचानक ठाढ़ी कह्यो भवनमें को री।
रहे छिपाइ सकुचि रंचक ह्वै भई सहज मति भोरी॥
जब गहि बाँह कुलाहल कीनो तब गहि चरन निहोरी।
लगे लेन नैनन भरि आँसू तब मैं कानि न तोरी॥
मोहिं भयो माखनको बिसमय रीती देखि कमोरी।
सूरदास प्रभु करत दिनहिं दिन ऐसी लरकि-सलोरी।

(१७०) राग तिलक

मैया मोरी मैं नहिं माखन खायो।
भोर भयो गैयनके पाछे, मधुबन मोहिं पठायो।
चार पहर बंसीबट भटक्यो, साँझ परे घर आयो॥

मैं बालक बहियनको छोटो, छींको किहि बिधि पायो।
ग्वाल बाल सब बैर परे है बरबस मुख लपटायो॥
तू जननी मनकी अति भोरी, इनके कहे पतिआयो।
जिय तेरे कछु भेद उपजिहैं जानि परायो जायो॥
यह लै अपनी लकुटि कमरिया बहुतहिं नाच नचायो।
सूरदास तब बिहँसि जसोदा, लै उर कंठ लगायो॥

(१७१) राग सोरठ

जसोदा तेरो भलो हियो है माई।
कमलनयन माखनके कारन बाँधे ऊखल लाई॥
जो संपदा देवमुनि दुरलभ सपनेहुँ दइ न दिखाई।
याहीं ते तू गरब भुलानी घर बैठे निधि पाई॥
सुत काहूको रोवत देखति दौरि लेत हिय लाई।
अब अपने घरके लरिकासों इत कहा जड़ताई॥
बारंबार सजल लोचन ह्वै चितवत कुँवर कन्हाई।
कहा करौं बलि जाउँ छोरती तेरी सौंह दिवाई॥
जो मूरति जल थलमें व्यापक निगम न खोजत पाई।
सो मूरति तू अपने आँगन चुटकी दै दै नचाई॥
सुरपालक सब असुर-संहारक त्रिभुवन जाहि डराई।
सूरदास प्रभुकी यह लीला निगम नेति नित गाई॥

(१७२) राग गौरी

नंदनँदन मुख देखो माई।
अंग अंग छवि उगे मनहुँ रवि ससि अरु समर लजाई॥ १॥

खंजन मीन कुरंग भृंग बारिज पर अति रुचि पाई।
स्रुति मंडल कुंडल बिबिमकर सुविलसत मदन सहाई ॥ २ ॥
कंठ कपोत कीर विद्रुमपर दारिम कननि चुनाई।
दुइ सारंग बाँहपर मुरली आई देत दोहाई ॥ ३ ॥
मोहे थिर चर बिटप विहंगम व्योमविमान थकाई।
कुसुमांजुलि वरसत सुर ऊपर सूरदास बलि जाई ॥ ४ ॥

(१७३) राग बिहागरो

नटवर वेप काछे स्याम।
पद कमल नख इंदु सोभा ध्यान पूरन काम ॥
जानु जंघ सुघट निकाई नाहि रंभा तूल।
पीत पट काछनी मानहु जलज केसरि झूल ॥
कनक छुद्रावली पंगति नाभि कटिके भीर।
मनहुं हंस रसाल पंगति रहे हैं हृद तीर ॥
छलक रोमावली सोभा ग्रीव मोतिनहार।
मनहुँ गंगा बीच जमुना चली मिलिकै धार ॥
वाहुदंड बिसाल तट दोउ अंग चंदन रेन।
तीर तरु वनमालकी छवि व्रज जुवति सुख देन ॥
चिबुकपर अधरन दसन दुति बिंब बीजु लजाइ।
नासिका सुक नैन खंजन कहत कवि सरमाइ ॥
स्रवन कुंडल कोटि रबि छवि भृकुटि काम कोदंड।
सूर प्रभु है नीमके तर सिर धरे सीखंड ॥

(१७४) राग गौरी

बिछुरत श्रीव्रजराज आज सखि, नैननिकी परतीति गई।
उड़ि न मिले हरि संग बिहंगम ह्वै न गये घनस्याममई ॥ १ ॥

याते क्रूर कुटिल सह मेचक, वृथा मीन छबि छीन लई।
रूपरसिक लालची कहावत, सो करनी कछु तौ न भई ॥ २ ॥
अब काहे सोचत जल मोचत, समय गये नित सूल नई।
सूरदास याहीतें जड़ भए, जबतें पलकन दगा दई ॥ ३ ॥

(१७५) राग जिल्हा

चले गये दिल के दामनगीर ॥
जब सुधि आवे प्यारे दरसकी उठत कलेजे पीर।
नटवर भेष नयन रतनारे सुन्दर स्याम सरीर ॥
आपन जाय द्वारका छाए खारी नदके तीर।
ब्रजगोपिनको प्रेम बिसारयो ऐसे भए बेपीर ॥
बृन्दावन बंशीबट त्यागो निरमल जमुना नीर।
सूरस्याम ललिता उठ बोली आखिर जाति अहीर ॥

(१७६) राग धनाश्री

ऊधो मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुताकी सुंदर कलरव अरु तरुवनकी छाहीं ॥
वे सुरभी वे बच्छ दोहनी खिरक दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल नाचत गह-गह बाहीं ॥
यह मथुरा कंचनकी नगरी मनि-मुक्ता जिहिं माहीं।
जबहिं सुरत आवत वा सुखकी जिया उगमत सुध नाहीं ॥
अनगिन भाँति करी बहु लीला जसुदा-नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहें मौन मह यह कह-कह पछिताहीं ॥

(१७७) राग बिलावल

ऊधो इतनो कहियो जाई।
हम आवेंगे दोऊ भया मैया जनि अकुलाई ॥

याको बिलग बहुत हम मान्यो जो कहि पठयो धाई।
वह गुन हमको कहा बिसरिहैं बड़े किये पय प्याई॥
और जु मिल्यो नंद बाबासों तौ कहियो समुझाई।
तौलों दुखी होन नहिं पावैं घवरी धूमरि गाई॥
जद्यपि यहां अनेक भांति सुख तदपि रह्यो न जाई।
सूरदास देखो ब्रजबासिन तबहिं हियो हरखाई॥

(१७८) राग सोरठ

मनो हौं ऐसे ही मरि जैहौ।
इहि आंगन गोपाल लालको कबहुंक कनियां जैहौं॥
कब वह मुख बहुरो देखोंगी कब वैसो सचु पैहौं।
कब मोपै माखन मांगेगो कब रोटी धरि दैहौं॥
मिलन आस तन प्रान रहत हैं दिन दस मारग चैहौं।
जो न सूर कान्ह आइहैं तौ जाइ जमुन धँसि जैहौं॥

(१७९) राग रामकली

संदेसो देवकी सों कहियो।
हौं तौ धाइ तुम्हारे सुतको मया करत नित रहियो॥
जदपि टेव तुम जानत उनकी तऊ मोहि कहि आवै।
प्रातहि उठत तुम्हारे कान्हको माखन रोटी भावै॥
तेल उबटनो अरु तातो जल ताहि देखि भगि जावै।
जोइ जोइ मांगत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करि करि न्हावै॥
सूर पथिक सुनि मोहि रैन दिन बढ्यो रहत उर सोच।
मेरो अलक लड़ैतो मोहन ह्वै है करत सकोच॥

(१८०) राग धनाश्री

सुनहु गोपी हरिको संदेस ।
करि समाधि अंतर्गति ध्यावहु यह उनको उपदेस ॥
वह अविगत अबिनासी पूरन सब खट रह्यो समाई ।
निरगुन ग्यान विनु मुक्ति नहीं है बेद पुरानन गाई ॥
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावौ इक चित इक मन लाई ।
यह उपाय करि बिरह तरी तुम मिलै ब्रह्म तब आई ॥
दुसह संदेस सुनत माधोको गोपीजन बिलखानी ।
सूर विरहकी कौन चलावै बूड़त मन बिन पानी ॥

(१८१) राग बिहाग

मधुकर स्याम हमारे चोर ।
मत हर लियो माधुरी मूरत निरख नयनकी कोर ॥
पकरे हुते आन उर अन्तर प्रेम प्रीतिके जोर ।
गये छुड़ाय तोर सब बंधन दै गये हंसन अकोर ॥
उचक परों जागत निसि बीते तारे गिनत भई भोर ।
सूरदास प्रभु हत मन मेरो सरबस लै गयो नंदकिसोर ॥

(१८२) राग सारंग

ऊधो मन न भये दस बीस ।
एक हुतो सो गयो स्याम संग को अवराधै ईस ॥
इन्द्री सिथिल भई केसो बिन ज्यों देही बिन सीस ।
आसा लगी रहत तनु खासा जीजो कोटि बरीस ॥
तुम तो सखा स्यामसुंदरके सकल जोगके ईस ।
सूरदास वा रसकी महिमा जो पूंछैं जगदीस ॥

(१८३) राग केदारो

गोकुल सबै गोपाल उपासी।
जोग अंग साधत जे ऊधो ते सब बसत ईसपुर कासी॥१
जद्यपि हरि हम तजि अनाथ करि तदपि रहति चरनन रस रासी।
अपनी सीतलताहि न छांड़त जद्यपि हैं ससि राहु-गरासी॥२
का अपराध जोग लिखि पठवत प्रेमभजन तजि करत उदासी।
सूरदास ऐसी को विरहिनि माँगति मुक्ति तजे धन रासी॥३

(१८४) राग मलार

हमारे कौन जोग व्रत साधै ?
मृग-त्वच, भस्म, अधारि, जटाको, को इतनो अवराधै॥
जाकी कहूँ थाह नहिं पैये, अगम अपार अगाधै।
गिरधरलाल छबीले मुखपर, इते बाँध को बाँधै ?
आसन पवन भूति मृगछाला ध्याननि को अवराधै।
सूरदास मानिक परिहरिकै, राख गाँठि को बाँधै॥

(१८५) राग सारंग

निर्गुन कौन देसको बासी ?
मधुकर ! हँसि-समुझाय सौंह दै, बूझति साँच न हाँसी॥
को है जनक, जननि को कहियत, कौन नारि को दासी।
कैसो बरन, भेह है कैसो, कोहि रसमें अभिलासी॥
पावैगो पुनि कियो आपनो, जो रे ! कहैगो गाँसी।
सुनत मौ ह्वै रह्यो ठग्यो सो, सूर सबै मति नासी॥

ा बहुत जमुना खग बोलत, बृथा कमल फूलै अलि गुंजैं ।
न, पानि, घनसार, सजीवनि, दधि-सुत-किरन भानु भईं भुंजैं ॥ २ ॥
ऊधो कहियो माधवसों, विरह करत कर मारत लुंजैं ।
दास प्रभुको मग जोवत, अँखियाँ भईं बरन ज्यों गुंजैं ॥ ३ ॥

(१८७) राग सोरठ

अब या तनहिं राखि का कीजैं ।
री सखी ! स्यामसुंदर बिनु, बाँटि बिषम बिष पीजैं ॥ १ ॥
गिरिये गिरि चढ़िकैं सजनी, स्वकर सीस सिव दीजै ।
दहिये दारुन दावानल, जाय जमुन धँसि लीजै ॥ २ ॥
सह बियोग बिरह माधवके, कौन दिनहिं दिन छीजै ।
रदास प्रीतम बिन राधे, सोचि-सोच मन खीजै ॥ ३ ॥

(१८८) राग गौरी.

कहाँ लौं कहिये ब्रजकी बात ।
सुनहु स्यात तुम बिनु उन लोगइ जैसे दिवस बितात ॥
गोपी गाइ ग्वाल गोसुत वह मलिन बदन कृस गात ।
परमदीन जनु सिसिर हिमी हित अंबुजगन बिनु पात ॥
जा कहुँ आवत देखि दूरते सब पूछति कुसलात ।
चलत न देत प्रेम आतुर उर कर चरनन लपटात ॥
पिक चातक बन बसन न पावहि वायस बलिहि न खात ।
सूरस्याम संदेसनके डर पथिक न उहि मग जात ॥

(१८९) राग सारंग

निसिदिन बरसत नैन हमारे ।
सदा रहत पावस ऋतु हमपर जबतें. स्याम सिधारे ॥

अंजन थिर न रहत अँखियनमें कर कपोल भय कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे॥
आँसू सलिल भये पग थाके, बहे जात सित तारे।
सूरदास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे॥

(१९०) राग मलार

मधुकर ! इतनी कहियहु जाइ।
अति कृस-गात भई ये तुम बिन परम दुखारी गाइ॥
जल समूह बरसत दोउ आँखें, हूँकति लीन्हें नाउँ।
जहाँ-जहाँ गोदोहन कीनों, सूँघति सोई ठाउँ॥
परति पछार खाइ छिनहीं छिन, अति आतुर ह्वै दीन।
मानहुँ सूर काढ़ि डारी है, बारि-मध्यतें मीन॥

(१९१) राग धनाश्री

नैना भये अनाथ हमारे।
मदनगुपाल यहाँ ते सजनी, सुनियत दूरि सिधारे॥
वे हरि जल हम मीन बापुरी कैसे जिवहिं नियारे।
हम चातक चकोर स्यामल घन, बदन सुधानिधि प्यारे॥
मधुबन बसत आस दरसनकी नैन जोइ मग हारे।
सूरस्याम करी पिय ऐसी, मृतक हुते पुनि मारे॥

(१९२) राग मलार

रुक्मिनि मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
या क्रीड़ा खेलत जमुना-तट, बिमल कदमकी छाहीं॥
गोपबधूकी भुजा कंठ धरि बिहरत कुंजन माहीं।
अमित बिनोद कहाँ लौं बरनौं, मो मुख बरनि न जाहीं॥

। सखा अरु नंद जसोदा वे चितते न टराहीं।
हित जानि नंद प्रतिपाले, बिछुरत बिपति सहाहीं॥
प सुखनिधान द्वारावति, तोउ मन कहुँ न रहाहीं।
दास प्रभु कुंज-बिहारी, सुमिरि सुमिरि पछिताहीं॥

प्रेम

(१६३) राग सारंग

आजु हौं एक-एक करि टरिहौं।
हमहीं कै तुमहीं माधव, अपुन भरोसे लरिहौं॥
तो पतित सात पीढ़िनको पतितै ह्वै निस्तरिहौं।
हौं उघरि नचन चाहत हौं तुम्हैं बिरद बिनु करिहौं॥
अपनी परतीति नसावत, मैं पायो हरि हीरा।
पतित तबहीं लै उठिहै, जब हँसि देहौ बीरा॥

(१६४)

त्रा पट पीतकी फहरान!
धरि चक्र चरनकी धावनि, नहिं बिसरत वह बान॥
ो उतरि अवनि आतुर ह्वै कच-रजकी लपटान।
ो सिंह सैलतें निकस्यो, महामत्त गज जान॥
गुपाल मेरो प्रन राख्यो, मेटि वेदकी कान।
सूर सहाय हमारे, निकट भये हैं आन॥

(१६५)

ाज जो हरिहिं न सस्त्र गहाऊँ।
लाजौं गंगा-जननीको, सांतनु-सुत न कहाऊँ॥
ं खंडि महारथ खंडौं, कपिध्वज सहित डुलाऊँ।
न करौं सपथ मोहि हरिकी, छत्रिय-गतिहिं न पाऊँ॥

पांडव-दल सनमुख ह्वै धाऊँ सरिता रुधिर बहाऊँ।
सूरदास रनभूमि विजय विनु, जियत न पीठ दिखाऊँ॥

(१९६) राग भीमपलासी

सबसों ऊँची प्रेम सगाई।
दुरजोधनके मेवा त्यागे, साग विदुर घर खाई।
जूठे फल सबरीके खाये, बहु विधि स्वाद बताई।
प्रेमके बस नृप सेवा कीन्हीं आप बने हरि नाई।
राजसु-जग्य जुधिष्ठिर कीन्हों तामें जूंठ उठाई।
प्रेमके बस पारथ रथ हांक्यो, भूलि गये ठकुराई
ऐसी प्रीति वढ़ी वृन्दावन, गोपिन नाच नचाई
सूर कूर इहि लायक नाहीं, कहँ लगि करौं बड़ाई

(१९७) राग खमाच

अब तो प्रगट भई जग जानी।
वा मोहनसों प्रीति निरंतर, क्यों निबहैगी छानी
कहा करौं सुन्दर मूरति, इन नयननि माँझि समानी
निकसत नाहिं बहुत पचि हारी, रोम-रोम अरुझानी
अब कैसे निर्वारि जाति है, मिल्यो दूध ज्यों पानी
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतरकी जानी

(१९८)

सोइ रसना जो हरिगुन गावै।
नैननकी छवि यहै चतुरता, ज्यों मकरंद मुकुन्दहिं ध्यावै
निर्मल चित तौ सोई साँचो, कृष्ण बिना जिय और न भावै
स्रवननकी जु यहै अधिकाई, सुनि हरि-कथा सुधारस प्यावै

तेई जे स्यामहिं सेवैं चरननि चलि बृन्दावन जावैं ।
दास जैये बलि ताके, जो हरिजू सों प्रीति बढ़ावै ॥

(१९९) राग बिलावल

ऐसी प्रीतिकी बलि जाउँ ।
ासन तजि चले मिलनको सुनत सुदामा नाउँ ॥
बांधव अरु बिप्र जानिकै चरनन हाथ पखारे ।
माल दै कुसल बूझिकै सिंहासन बैठारे ॥
धंगी बूझत मोहनको कैसे हितू तुम्हारे ।
ल हीन छीन देखतिहौं पाउँ कहाँ ते धारे ॥
ीपनके हम रु सुदामा पढ़े एक चटसार ।
स्यामकी कौन चलावै भक्तन कृपा अपार ॥

(२००) राग कान्हरा

को मन लाग्यो नंदलालहिं ताहि और नहिं भावे हो ।
ों गूंगो गुर खाइ अधिक रस सुख सवाद न बतावे हो ॥
ो सरिता मिलै सिंधुको बहुरि प्रवाह न आवे हो ।
ा सूर कमललोचन ते चित नहिं अनत डुलावे हो ॥

(२०१) राग सोरठ

मोहन इतनो मोहिं चित धरिये ।
ननी दुखित जानिकै कबहूं मथुरागमन न करिये ॥ १ ॥
ह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै, तुमहिं लेन है आयो ।
रछे भये कर्म कृत पहिले, बिधि यह ठाठ बनायो ॥ २ ॥
र वार जननी कहि मोसों माखन मांगत जौन ।
र तिनहिं लेबेको आयो करिहै सूनों भौन ॥ ३ ॥

(२०२) राग सारंग

प्रीति करि काहूं सुख न लह्यो ।
प्रीति पतंग करी दीपकसों आपै प्रान दह्यो॥
अलिसुत प्रीति करी जलसुतसों करि मुख माँहि गह्यो।
सारंग प्रीति करी जो नादसों सन्मुख बान सह्यो॥
हम जो प्रीति करी माधवसों चलत न कछू कह्यो।
सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो नैननि नीर बह्यो॥

(२०३) राग बिलावल

नाहि रह्यो हियमें ठौर ।
नंद-नंदन अछत कैसे आनिये उर और॥
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदयतें वह स्याम मूरति, छिन न इत उत जात॥
कहत कथा अनेक ऊधो! लोक लाज दिखात।
कहा करौं तन प्रेम-पूरन, घट न सिंधु समात॥
स्यामगात सरोज आनन, ललित गति मृदु हास।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास॥

(२०४) राग सोरठ

हम न भई बृंदावन-रेनु ।
जिन चरनन डोलत नँदनंदन नित प्रति चारत धेनु॥
हमतें धन्य परम ये द्रुम-बन बाल बच्छ अरु धेनु।
सूर सकल खेलत हँसि बोलत ग्वालन संग मधि पीवत धेनु॥

(२०५) राग धनाश्री

अँखियाँ हरिदरसनकी भूखी ।
अब क्यों रहति स्याम रँग राती, ए बातें सुनि रूखी॥

वधि गनत इकटक मग जोवत, तब ए इतों नहिं झूखी ।
ते मान इहि जोग संदेसन सुनि अकुलानी दूखी ॥ २ ॥
र सकत हठ नाव चलावत, ए सरिता हैं सूखी ।
ारक वह मुख आनि देखावहु, दुहि पै पिवत पतूखी ॥ ३ ॥

(२०६)

अँखियाँ हरि दरसनकी प्यासी ।
ख्यो चाहत कमलनैनको, निसिदिन रहत उदासी ॥
सर तिलक मोतिनकी माला, वृंदावनके बासी ।
ह लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल-फांसी ॥
ाहूके मनकी को जानत, लोगनके मन हांसी ।
रदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लैहों करवट कासी ॥

(२०७) राग भैरव

ऐसेहि बसिये व्रजकी बीथिन ।
ाधुनिके पनवारे चुनि चुनि उदर जु भरिये सीतनि ॥ १ ॥
ड़ेमेंके वसन बीनि तन छाया परम पुनीतनि ।
ुंज-कुंज तर लोटि-लोटि रचि रज लागै रंगीतनि ॥ २ ॥
नेसिदिन निरखि जसोदानंदन अरु जमुना जल पीतनि ।
रसन सूर होत तन पावन, दरस न मिलत अतीतनि ॥ ३ ॥

(२०८) राग देवगंधार

मोहि प्रभु तुमसो होड़ परी ।
ा जानों करिहौ जु कहा तुम नागर नवल हरी ॥
पतित समूहन उद्धरिबेको तुम जिय जक पकरी ।
मैं जू राजिवनैननि दूरी गयो पाप-पहार दरी ॥

एक अधार साधु-संगतिको रचि-पचि कै सँचरी।
भई न सोचि सोचि जिय राखी अपनी धरनि धरी॥
मेरी मुकति बिचारत हौ प्रभु पूंछत पहर घरी।
स्रमतें तुम्हें पसीनो ऐहै कत यह जकनि करी॥
सूरदास बिनती कहा बिनवै दोसहिं देह भरी।
अपनो बिरद सँभारहुगे तब यामें सब निनुरी॥

श्रीकबीरदासजी

नाम-महिमा

(२०९) राग खमाच

भजो रे भैया राम गोविंद हरी।
जप तप साधन नहिं कछु लागत, खरचत नहिं गठरी॥ १॥
संतत संपत सुखके कारन, जासों भूल परी॥ २॥
कहत कबीरा राम न जा मुख ता मुख धूल भरी॥ ३॥

(२१०) राग केदारो

तू तो राम सुमर जग लड़वा दे।
कोरा कागज काली स्याही, लिखत पढ़त वाको पढ़वा दे॥
हाथी चलत है अपनी गतमें, कुतर भुकत वाको भुकवा दे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, नरक पचत वाको पचवा दे॥

नाम

(२११)

जो जन लेहि खसमका नाऊँ तिनके सद बलिहारी जाऊँ।
जो गुरके निर्मल गुन गावैं, सो भाई मोरे मन भावैं॥

जेहि घट नाम रह्यो भरपूर, तिनकी पग-पंकज हम धूर।
जाति जुलाहा मतिका धीर, सहज-सहज गुनि लेहि कबीर॥

(२१२) राग भैरवी—ताल तेवरा

मत कर मोह तू, हरि भजनको मान रे।
नयन दिये दरसन करनेको, स्रवन दिये सुन ज्ञान रे॥
बदन दिया हरिगुन गानेको, हाथ दिये कर दान रे।
कहत कबीर सुनो भई साधो, कंचन निपजत खान रे॥

चेतावनी

(२१३) राग आसावरी-दीपचन्दी

मन तोहे किहि बिध मैं समझाऊँ।
सोना होय तो सुहाग मँगाऊँ बंकनाल रस लाऊँ॥
ग्यान सबदकी फूंक चलाऊँ, पानी कर पिघलाऊँ।
घोड़ा होय तो लगाम लगाऊँ, ऊपर जीन कसाऊँ॥
होय सवार तेरेपर बैठूँ, चाबुक देके चलाऊँ।
हाथी होय जंजीर गढ़ाऊँ, चारों पैर बँधाऊँ॥
होय महावत तेरे गर बैठूँ अंकुश लेके चलाऊं।
लोहा होय तो ऐरण मँगाऊँ, ऊपर धुवन धुवाऊं॥
धूवनकी घनघोर मचाऊँ, जंतर तार खिंचाऊँ।
ग्यानी न हो ग्यान सिखाऊँ, सत्यकी राह चलाऊँ॥
कहत कबीर सुनो भई साधू अमरापुर पहुँचाऊँ॥

(२१४) राग बरवा काफी—तीन ताल

जन्म तेरा बातों ही बीत गयो। तूने कबहूँ न कृष्ण कह्यो। ध्रु०।

पाँच बरसका भोला-भाला अब तो बीस भयो।
मकरपचीसी माया कारन देस विदेस गयो॥
तीस बरसकी अब मति उपजी लोभ बढ़ै नित नयो।
माया जोरी लाख करोरी अजहुँ न तृप्त भयो॥
वृद्ध भयो तब आलस उपजी कफ नित कंठ रह्यो।
संगति कबहूँ न कीनी विरथा जन्म लियो॥
यह संसार मतलबका लोभी झूँठा ठाट रच्यो।
कहत कबीर समझ मन मूरख तू क्यों भूल गयो॥

(२१५) राग काफी

तोरी गठरीमें लागे चोर बटोहिया का सोवै॥टेक॥
पाँच पचीस तीन है चुरवा, यह सब कीन्हा सोर।
जागु सबेरा बाट अनेरा, फिर नहिं लागै जोर॥
भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाव बोर।
कहे कबीर सुनो भई साधो! जागत कीजै भोर॥

(२१६)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो॥ टेक॥
चंदन काठ कै बनल खटोलना, तापर दुलहिन सूतल हो॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो दुलहा मोसे रूठल हो।
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन अँसुवा टूटल हो॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन चहुँदिसि धू धू ऊठल हो।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! जगसे नाता छूटल हो॥

(२१७) राग बिलावल

रहना नहिं देस बिराना है ॥
यह संसार कागदकी पुड़िया, बूँद पड़े घुल जाना है।
यह संसार काँटकी बाड़ी, उलझ पुलझ मरि जाना है॥
यह संसार झाड़ औ झाँखर, आग लगे बरि जाना है।
कहत कबीर सुनो भई साधो ! सतगुरु नाम ठिकाना है॥

(२१८) राग बागेश्री

बीत गये दिन भजन बिना रे !
बाल अवस्था खेल गँवायो, जब जवानि तब मान घना रे॥
लाहे कारन मूल गँवायो, अजहुँ न गई मन की तृसना रे।
कहत कबीर सुनो भई साधो! पार उतर गये संत जना रे॥

(२१९) राग सारंग

माया महा ठगिनि हम जानी।
निरगुन फाँस लिये कर डोलै बोलै मधुरी बानी॥
केसवके कमला ह्वै बैठी, शिवके भवन भवानी।
पंडाके मूरति ह्वै बैठी, तीरथमें भइ पानी॥
जोगीके जोगिन ह्वै बैठी, राजाके घर रानी।
काहूके हीरा ह्वै बैठी, काहूके कौड़ी कानी॥
भगतनके भगतिन ह्वै बैठी, ब्रह्माके ब्रह्मानी।
कहत कबीर सुनो हो संतो ! यह सब अकथ कहानी॥

(२२०)

मैं केहि समुझावौं सब जग अंधा॥
इक-दुइ होय उन्हैं समुझावौं, सबहि भुलाना पेटके धंधा।

पानीके घोड़ा पवन असवरवा, ढरकि परै जस ओसके बुंदा॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा खेवनहाराके पड़िगा फंदा।
घरकी वस्तु नजर नहिं आवत, दियना बारिके ढूंढ़त अंधा॥
लागी आग सबै बन जरिगा, बिनु गुरु ज्ञान भटकिगा बंदा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो! इक दिन जाय लंगोटी झार बंदा॥

(२२१) राग सारंग

धुबिया जल बिच मरत पियासा ॥ टेक ॥
जलमें ठाढ़ पिये नहिं मूरख अच्छा जल है खासा।
अपने घरके मरम न जानै करै धुबियनकै आसा॥
छिनमें धुबिया रोवै, धोवै, छिनमें होय उदासा।
आपे बँधे करमकी रस्सी, आपन गरकै फाँसा॥
सच्चा साबुन लेहि न मूरख, है संतनके पासा।
दाग पुराना छूटत नाहीं, धोवत बारह मासा॥
एक रातिको जोरि लगाव, छोरि दिये भरि मासा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो! आछत अन उपासा॥

(२२२)

जागु पियारी, अबका सोवै। रैन गई दिन काहेको खोवै॥
जिन जागा तिन मानिक पाया। तैं बौरी सब सोय गँवाया॥
पिय तेरे चातुर तू मूरख नारी। कबहुँ न पियकी सेज सँवारी॥
तैं बौरी बौरापन कीन्हीं। भर जोवन पिय अपन न चीन्हीं॥
जागु देख पिय सेज न तेरे। तोहि छाँड़ि उठि गये सबेरे॥
कहै कबीर सोई धुन जागे। शब्द-बाण [illegible] लागे॥

प्रेम

(२२३) राग काफी

नैहरवा हमकों न भावै ॥ टेक ॥

साईंकी नगरी परम अति सुन्दर, जहँ कोई जाय न आवै।
चाँद सूरज जहँ पवन न पानी, को सँदेस पहुँचावै॥
दरद यह साईं को सुनावै ॥ १ ॥
आगे चलौं पंथ नहिं सूझै, पीछे दोष लगावै।
केहि बिधि ससुरे जाउँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावै॥
बिषैरस नाच नचावै ॥ २ ॥
बिन सतगुरु अपनो नहिं कोई, जो यह राह बतावै।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सुपने न पीतम पावै॥
तपन यह जियकी बुझावै ॥ ३ ॥

(२२४) गजल

हमन है इश्क मस्ताना हमनको होशियारी क्या ?
रहैं आजाद या जगमें, हमन दुनियाँसे यारी क्या ?
जो बिछुड़े हैं पियारेसे भटकते दर-बदर फिरते।
हमारा यार है हममें, हमनको इंतजारी क्या ?
खलक सब नाम अपनेको, बहुत कर सर पटकता है।
हमन हरि-नाम राँचा है, हमन दुनियाँसे यारी क्या ?
न पल बिछुड़े पिया हमसें, न हम बिछुड़े पियारेसे।
उन्हींसे नेह लागा है, हमनको बेकरारी क्या ?
कबीरा इश्कका माता दुईको दूर कर दिलसे।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सर बोझ भारी क्या ?

(२२५) राग काफी

कौन मिलावै मोहि जोगिया हो,
जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥ टेक ॥
हो हिरनी पिय पारधी हो, मारे सबदके बान।
जाहि लगी सो जान ही हो, और दरद नहिं जान ॥
मैं प्यासी हौं पीवकी हो, रटत सदा पिय पीव।
पिया मिले तो जीव है, नातो सहजै त्यागो जीव ॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहैं तन रोग।
छह-छह लाँघन मैं किया रे, पिया मिलनके जोग ॥
कहै कबीर, सुनु जोगिनी हो तनमें मनहिं मिलाव।
तुम्हरी प्रीतिके कारने हो बहुरि मिलहिंगे आय ॥

(२२६)

अबिनासी दुलहा कब मिलिहौ भगतनके रछपाल ॥
जल उपजी जलही सों नेहा रटत पियास पियास।
मैं ठाढ़ी बिरहिन मग जोऊँ प्रियतम तुमरी आस ॥
छोड़े गेह नेह लगि तुमसों, भई चरन लौलीन।
ताला बेलि होति घट भीतर, जैसे जल बिन मीन ॥
दिवस न भूख रैन नहिं निंदिया, घर अँगना न सुहाय।
सेजरिया बैरिन भई हमको, जागत रैन बिहाय ॥
हम तो तुमरी दासी सजना, तुम हमरे भरतार।
दीन दयाल दया कर आओ, समरथ सिरजनहार ॥
कै हम प्रान तजत हैं प्यारे, कै अपनी कर लेव।
दास कबीर बिरह अति बाढ़्यो हमको दरसन देव ॥

(२२७)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरैं नाहीं।
नजर करो अब मेहरकी मोहि मिलौ गुसाईं॥
बिरह सतावै हाय अब जिव तड़प मेरा।
तुम देखनको चाव है प्रभु मिलौ सबेरा॥
नैंना तरसैं दरसको पल पलक न लागै।
दरदवंद दीदारका निसि बासर जागै॥
जो अबके प्रीतम मिलैं करूँ निमिष न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाइया मिला प्रान पियारा॥

(२२८) राग कान्हरा—दीपचन्दी

घूँघटका पट खोल री तोहे पीव मिलेंगे॥—ध्रु०॥
घट घट रमता राम रमैया कटुक बचन मत बोल रे॥—तोहे०॥१॥
रंगमहलमें दीप बरत हैं आसनसे मत डोल रे॥—तोहे०॥२॥
कहत कबीर सुनो भई साधू अनहद बाजत ढोल रे॥—तोहे०॥३॥

वैराग्य

(२२९)

मन लागो मेरो यार फकीरी में॥ टेक॥
जो सुख पावों नाम-भजनमें, सो सुख नाहिं अमीरीमें॥ १॥
भला बुरा सबको सुनि लीजै, करि गुजरान गरीबीमें॥ २॥
प्रेमनगरमें रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरीमें॥ ३॥
हाथमें कूँड़ी बगलमें सोंटा चारो दिसा जगीरीमें॥ ४॥
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरीमें॥ ५॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिल सबूरीमें॥ ६॥

(२३०) राग काफी

आई गवनवाँकी सारी, उमिरि अबही मोरि बारी ॥ टेक ॥
साज समाज पिया लै आये और कहरिया चारी ।
बम्हना बेदरदी अँचरा पकरिकै जोरत गँठिया हमारी ॥
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥
बिधिगति बाम कछु समुझि परति ना, बैरी भई महतारी ।
रोय रोय अँखियाँ मोरि पोंछत घरवासे देत निकारी ॥
भई सबको हम भारी ॥ २ ॥
गौन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी ।
छूटत गाँव नगरसों नाता, छूटै महल अटारी ॥
कर्म गति टरै न टारी ॥ ३ ॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घूँघट पट टारी ।
थरथराय तनु काँपन लागे, काहू न देख हमारी ॥
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥

(२३१)

हमका ओढ़ावै चदरिया चलती बिरिया ।
प्रान राम जब निकसन लागे उलटि गई दोउ नैन पुतरिया ।
भीतर से जब बाहर लाये छूट गई सब महल अटरिया ॥
चार जने मिलि खाट उठाइनि, रोवत ले चले डगर डगरिया ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो संग चली वह सूखी लकरिया ॥

अपना बोझ धरे सिर ऊपर, सुरति बरतपर लावै ॥
जैसे भुवंगम चरत बनहिंमें, ओस चाटने आवै ।
कबहुँ चाटै कबहुँ मनि चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै ॥
जैसे कामिन भरे कूप जल, कर छोड़े बरतावै ।
अपना रंग सखियन सँग राचै, सुरति गगरपर लावै ॥
जैसी सती चढ़ी सत ऊपर, अपनी काया जरावै ॥
मातु पिता सब कुटुँब तियागै, सुरति पिया घर लावै ॥
धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञानकी आरत लावै ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जन्म नहिं पावै ॥

(२३३) राग पीलू–दीपचन्दी

तनकी धनकी कौन बड़ाई ।
देखत नैनोंमें माटी मिलाई ॥ ध्रु० ॥
अपने खातर महल बनाया ।
आपहि जाकर जंगल सोया ॥ १ ॥
हाड़ जले जैसे लकरिकी मोली ।
बाल जले जैसे घासकी पोली ॥ २ ॥
कहत कबीरा सुन मेरे गुनिया ।
आप मुवे पिछे डूब गई दुनिया ॥ ३ ॥

(२३४)

ऐसी नगरियामें किहि बिधि रहना ।
नित उठ कलक लगावे सहना ॥ १ ॥
एकै कुवा पाँच पनिहारी ।
एकै लेजुर भरे नौ नारी ॥ २ ॥

फट गया कुवाँ बिनस गइ बारी।
बिलग भई पाँचो पनिहारी॥ ३॥
कहैं कबीर नाम बिनु बेरा।
उठ गया हाकिम लुट गया डेरा॥ ४॥

वेदान्त

(२३५)

दरस दिवाना बावला अलमस्त फकीरा।
एक अकेला ह्वै रहा अस मतका धीरा॥
हिरदेमें महबूब है, हरदमका प्याला।
पीवेगा कोइ जौहरी गुरु मुख मतवाला॥
पियत पियाला प्रेमका सुधरे सब साथी।
आठ पहर झूमत रहै जस मैगल हाथी॥
बंधन काट मोहके बैठा निरसंका।
वाके नजर न आवता क्या राजा क्या रंका॥
धरती तो आसन किया, तम्बू असमाना।
चोला पहिरा खाकका रह पाक समाना॥
सेवकको सतगुरु मिलै कछु रहि न तवाही।
कह कबीर निज घर चलो जहँ काल न जाही॥

दसवें द्वारे ताली अलख पुरख जाको ध्यान धरै।
काल कराल निकट नहिं आवै, काम क्रोध मद लोभ जरै॥
जुगन जुगन की तृषा बुझाती करम भरम अघ व्याधि टरै।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, अमर होय, कबहूँ न मरै॥

प्रकीर्ण

(२३७)

रमैया की दुलहिन लूटा बजार।
सुरपुर लूट नागपुर लूटा, तीन लोक मच हाहाकार॥ १॥
ब्रह्मा लूटे महादेव लूटे, नारद मुनिके परी पिछार।
स्रिंगीकी भिंगी करि डारी, पारासरके उदर बिदार॥ २॥
कनफूंका चिदकासी लूटे लूटे जोगेसर करत बिचार।
हम तो बचिगे, साहब दयासे, सब्दडोर गहि उतरे पार॥ ३॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, इस ठगनीसे रहो हुसियार॥ ४॥

(२३८)

डर लागै औ हांसी आवै अजब जमाना आया रे॥
धन दौलत ले माल खजाना, वेस्या नाच नचाया रे।
मुट्ठी अन्न साधु कोई मांगे, कहैं नाज नहिं आया रे॥
कथा होय तहँ स्रोता सोवै, वक्ता मूंड़ पचाया रे।
होय जहाँ कहिं स्वांग, तमासा, तनिक न नींद सताया रे॥
भंग तमाखू सुलफा गांजा सूखा खूब उड़ाया रे।
गुरु चरनामृत नेम न धारै, मधुवा चाखन आया रे॥
उलटी चलन चली दुनियामें ताते जिय घबराया रे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो का पाछे पछताया रे॥

(२३९)

बाबू ऐसो है संसार तिहारो, है यह कलि व्यवहारा
को अब अनख सहै प्रतिदिनको नाहिन रहन हमारा
सुमति सुभाव सबै कोई जानै, हृदया तत्त न बूझै।
निरजीव आगे सरजीव थापे, लोचन कछुव न सूझै
तजि अमरत विष काहे अँचवूँ गाँठी बाँधू खोटा।
चोरनको दिय पाट सिंहासन साहुहिं कीन्हों ओटा।
कह कबीर झूठो मिली झूठा ठग ही ठग व्यवहारा।
तीन लोक भरपूर रह्यो है, नाहीं है पतियारा।

हितहरिवंश

(२४०) गौरी

यह जु एक मन बहुत ठौर करि कहि कौने सचु पायो।
जहँ तहँ विपति जारि जुवती ज्यों प्रगट पिंगला गायो॥
द्वै तुरंग पर जोर चढ़त हठि परत कौन पै धायो।
कहि धौं कौन अंक पर राखै ज्यों गनिका सुत जायो॥
हितहरिवंस प्रपंच वंच सब काल व्यालको खायो।
यह जिय जानि स्याम-स्यामा पद कमल संगि सिर नायो।

(२४१) पद

तातें भैया, मेरी सौं, कृष्ण-गुन-संचु।
कुत्सित बाद विकारहि परधन सुनु सिख परतिय वंचु।
मनि गुन पुंज व्रजपति छाड़त हितहरिवंस सुकर गरि कंचु॥
पायो जानि जगतमें सब जन कपटी कुटिल कलिजुगी टंचु।
इहि परलोक सकल सुख पावत, मेरी सौं, कृष्ण-गुन संचु॥ २

(२४२) विलावल

मोहन लालके रँग राची ।
मेरे ख्याल परौ जिन कोऊ, बात दसो दिसि माची ॥
कंत अनंत करौ किन कोऊ, नाहिं धारना साँची ।
यह जिय जाहु भले सिर ऊपर, हौं तु प्रगट ह्वै नाची ॥
जाग्रत सयन रहत ऊपर मनि, ज्यों कंचन सँग पाँची ।
हितहरिवंस डरौं काके डर, ही नाहिन मति काँची ॥

(२४३) भैरवी

रहौ कोउ काहू मनहि दियें ।
मेरे प्राननाथ श्रीस्यामा, सपथ करों तिन छियें ॥
जे अवतार कदंब भजत हैं, धरि दृढ़ व्रत जु हियें ।
तेऊ उमगि तजत मरजादा, वन विहार रस पियें ॥
खोये रतन फिरत जे घर-घर कौन काज इमि जिये ।
हितहरिबंस अनतु सचु नाही, बिन या रसहिं लियें ॥

(२४४) बिहाग

प्रीति न काहु कि कानि विचारै ।
मारग अपमारग बिथकित मन, को अनुसरत निवारै ॥
ज्यों पावस सरिता जल उमगत, सनमुख सिंधु सिधारै ।
ज्यों नादहि मन दिये कुरंगनि, प्रगट पारधी मारै ॥
हितहरिबंसहिं लग सारँग ज्यों, सलभ सरीरहिं जारै ।
नाइक, निपुन नवल मोहन बिनु, कौन अपनपौ हारै ॥

स्वामी हरिदास

(२४५) विभास

ज्योहीं ज्योंहीं तुम राखत हौ त्योंहीं त्योंहीं रहियतु है हो हरि
और अचरचै पाइ धरों, सु तौ कहों कौनके पैंड भरि
जदपि हौं अपनो भायो कियो चाहौं, कैसे करि सकौं जो तुम राखौ पकरि
कहिहरिदासपिंजराकेजनावरलौं, तरफराइरह्योउड़िबे[illegible]तो उकरि

(२४६)

काहूको बस नाहिं तुम्हारी कृपा तें, सब होय बिहारी बिहारिनि ।
और मिथ्या प्रपंच काहेको भाषियै, सो तो है हारनि ॥
जाहि तुमसों हित ताहि तुम हित करौ, सब सुख कारनि ।
श्रीहरिदासके स्वामी स्यामा कुंजबिहारी, प्राननिके आधारनि ॥

(२४७) आसावरी

हित तौ कीजै कमलनैनसों, जा हित आगे और हित लागो फीको ।
कै हित कीजै . साधुसँगतिसों, जावै कलमष जी को ॥
हरिको हितऐसोजैसोरंग मजीठ, संसारहित कसूंभिदिन दुतीको ।
कहि हरिदासहित कीजै बिहारीसों और न निवाहु जानि जी को ॥

(२४८)

तिनका बयारिके बस ।
ज्यों भावै त्यों उड़ाइ लै जाइ आपने रस ॥
ब्रह्मलोक, सिवलोक और लोक अस ।
कह हरिदास विचारि देख्यो बिना बिहारी नाहीं जस ॥

(२४९)

नामको आलस क्यों करत है रे काल फिरत सर साँधै ।
बहुत जवाहर संचे, कहा भयो हस्ती दर बाँधें ॥
कुबेर कछू नहिं जानत, चढो फिरत है काँधें ।
हरिदास कछू न चलत जब, आवत अंत की आँधें ॥

(२५०)

गाइ प्रीति कीजै कर करवा सों, व्रजबीथिन दीजै सोहिनी ।
न सों, बन उपबन सों, गुंज माल कर पोहिनी ॥
ोसुतन सों मृग मृगसुतन सों, और तन नेक न जोहिनी ।
रदासके स्वामी स्यामा कुंजबिहारी सों, चित ज्यों सिरपर दोहिनी॥

(२५१) कल्यान

हरिको ऐसोइ सब खेब ।
मृग-तृस्ना जग व्याप रही हैं, कहूँ बिजोरो न वेल ॥
धनमद जोबनमद और राजमद, ज्यों पंछिनमें डेल ।
कह हरि यहै जिय जानौ, तीरथको सो मेल ॥

(२५२)

गौ लौं जीवै तौ लौं हरि भजु रे मन, और बात सब बादि ।
दिवस चारिको हला भला तू कहा लेइगो लादि ॥
मायामद गुनमद जोबनमद, भूल्यौ नगर बिवादि ।
कहि हरिदास लोभ चरपट भयो काहेकी लागै फिरादि ॥

(२५३)

मसमुद्र रूपरस गहिरे, कैसे लागें घाट ।
थो दै जानि कहावत जानि पनोकी कहा परी बाट ॥

(२५९) सारंग

हरि हरि हरि हरि रट रसना मम।
पीवति खाति रहति निधरक भई होत कहा तो को स्र
तैं तो सुनी कथा नहिं मोसे, उधरे अमित महाप
ग्यान ध्यान जप तप तीरथ व्रत, जोग जाग बिनु संज
हेमहरन द्विजद्रोह मान मद, अरु पर गुरु दाराग
नामप्रताप प्रवल पावकके, होत जात सलभा स
इहि कलिकाल कराल व्याल, बिपज्वाल बिषम भोये ह
बिनु इहि मंत्र गदाधरके क्यों, मिटिहै मोह महात

(२६०) आसावरी

है हरिते हरिनाम बड़ेरो ताकों मूढ़ करत कत झेरो ॥ १
प्रगट दरस मुचुकुंदहिं दीन्हों, ताहू आयुसु भो तप केरो ॥ २
सुतहित नाम अजामिल लीनों, या भवमें न कियो फिर फेरो ॥ ३
पर-अपवाद स्वाद जिय राच्यो, बृथा करत बकवाद घनेरो ॥ ४
कौन दसा ह्वै है जु गदाधर, हरि हरि कहत जात कहा तेरो ॥ ५

(२६१) सारंग

कबै हरि, कृपा करिहौ सुरति मेरी।
और न कोऊ काटनको मोह बेरी ॥ १
काम लोभ आदि ये निरदय अहेरी।
मिलिकै मन मति मृगि चहूँधा घेरी ॥ २
रोपी आइ पास-पासि दुरासा केरी।
देत वाहीमें फिरि फिरि फेरी ॥ ३

परी कुपथ कंटक आपद घनेरी ।
नैक ही न पावति भजि भजन सेरी ॥ ४ ॥
दंभके आरंभ ही सतसंगति डेरी ।
करै क्यों गदाधर बिनु करुना तेरी ॥ ५ ॥

(२६२) दंडक

जयति श्रीराधिके सकलसुखसाधिके
तरुनिमनि नित्य नवतन किसोरी ।
कृष्णतनु लीन मन रूपकी चातकी
कृष्णमुख हिमकिरिनकी चकोरी ॥ २ ॥
कृष्णदृग भृंग बिस्रामहित पद्मिनी
कृष्णदृग मृगज बन्धन सुडोरी ।
कृष्ण-अनुराग मकरंदकी मधुकरी
कृष्ण-गुन-गान रस-सिंधु बोरी ॥ २ ॥
बिमुख परचित्त ते चित्त जाको सदा
करत निज नाहकी चित्त चोरी ।
प्रकृति यह गदाधर कहत कैसे बनै
अमित महिमा इतं बुद्धि थोरी ॥ ३ ॥

(२६३) दंडक

जय महाराज व्रजराज-कुल-तिलक
गोविंद गोपीजनानंद राधारमन ।
नंद-नृप-गेहिनी गर्भ आकर रतन
सिष्ट-कष्टद धृष्ट दुष्ट दानव-दमन ॥ १ ॥

बल-दलन-गर्व-पर्वत-विदारन
ब्रज-भक्त-रच्छा-दच्छ गिरिराजधर धीर।
विबिध वेला कुसल मुसलधर संग लै
चारु चरणांक चित्त तरनि तनया तीर ॥ २ ॥
कोटि कंदर्प दर्पापहर लावन्य धन्य
वन्दारन्य भूपन मधुर तरु।
मुरलिकानाद पियूपनि महानंदन
विदित सकल ब्रह्म रुद्रादि सुरकरु ॥ ३ ॥
गदाधरविपै वृष्टि करुना दृष्टि करु
दीनको त्रिविध संताप ताप तवन।
मैं सुनी तुव कृपा कृपन जन-गासिनी
बहुरि पैहै कहा सो वरावर कवन ॥ ४ ॥

(२६४) हिंडोल

झूलत नागरि नागर लाल।
मंद मंद सब सखी झुलावति गावति गीत रसाल ॥
फरहराति पट पीत नीलके, अंचल चंचल चाल।
मनहुँ परसपर उमँगि ध्यान छवि, प्रगट भई तिहि काल ॥
सिलसिलात अति प्रिया सीस तें, लटकति बेनी नाल।
जनु पिय मुकुट बरहि भ्रम वसतहूँ, व्याली विकल विहाल ॥
मल्ली माल प्रियाकी उरझी, पिय तुलसी दल माल।
जनु सुरसरि रवितनया मिलिकै, सोभित स्रेनि मराल ॥
स्यामल गौर परसपर प्रति छवि, सोभा विसद बिसाल।
निरखि गदाधर रसिक कुँवरि मन, परयो सुरस जंजाल ॥

(२६५) गौरी

आजु ब्रजराज को कुँवर बनते बन्यो,
देखि आवत मधुर अधर रंजित वेनु।
मधुर कलगान निज नाम सुनि स्रवन-पुट,
परम प्रमुदित वदन फेरि हूँकति धेनु ॥ १ ॥
मदविघूर्णित नैन मंद विहँसनि वैन,
कुटिल अलकावली ललित गोपद रेनु।
ग्वाल-बालनि जाल करत कोलाहलनि,
सृंग दल ताल धुनि रचत संचत कैनु ॥ २ ॥
मुकुटकी लटक अरु चटक पटपीतकी
प्रगट अकुरित गोपी मनहिं मैनु।
कहि गदाधरजु इहि न्याय ब्रजसुन्दरी
विमल वनमालके बीच चाहतु ऐनु ॥ ३ ॥

(२६६) गारी

सुंदर स्याम सुजानसिरोमनि, देउँ कहा कहि गारी हो।
लोगके औगुन बरनत, सकुचि उठत मन भारी हो ॥ १ ॥
करि सकै पिताको निरनौ जाति-पाँति को जाने हो।
मन जैसीयै आवत तैसिय भाँति बखानै हो ॥ २ ॥
कुटिल नटी तन चितवत कौन बड़ाई पाई हो।
चंचल सब जगत बिगोयो जहँ तहँ भई हँसाई हो ॥ ३ ॥
पुनि प्रगट होइ बारे तें कौन भलाई कीनो हो।
तें-बधू उत्तम जन लायक लै अधमनिकों दीनी हो ॥ ४ ॥
दस मास गरभ माताके इहि आसा करि जाये हो।
घर छाँड़ि जीभके लालच भयो हो पूत पराये हो ॥ ५ ॥

बारेतें गोकुल गोपिनके सूने घर तुम डाटे हो।
पैठे तहाँ निसंक रंक लौं दधिके भाजन चाटे हो॥
आपु कहाइ धनीको ढोटा भात कृपन लौं माँग्यो हो।
मान भंग मर दूजें जाचतु नैंकु सँकोच न लाग्यो हो॥
लोलुप तातें गोपिनके तुम सूने भवन ढँढोरे हो।
जमुना न्हात गोप-कन्यनिके निलज निपट पट चोरे हो॥
बेनु बजाइ विलास करत बन बोलि पराई नारी हो।
ते बातें मुनिराज सभामें ह्वै निसंक बिस्तारी हो॥
सब कोउ कहत नंदबाबाका घर भरयो रतन अमोलै हो।
गर गुंजा सिर मोर-पखौवा गायनके सँग डोलै हो॥
साधु-सभामें बैठनिहारो कौन तियन सँग नाचै हो।
अग्रज संग राज-मारगमें कुबजहिं देखत राचै हो॥
अपनि सहोदरि आपुहि छल करि अरजुन संग नसाई हो।
भोजन करि दासी-सुतके घर जादव जाति लजाई हो॥
लै लै भजे नृपतिकी कन्या यह धौं कौन बड़ाई हो।
सतभामा गोतमें बिबाही उलटी चाल चलाई हो॥
बहिन पिताकी सास कहाई नैंकहु लाज न आई हो।
ऐसेइ भाँति बिधाता दीन्हीं सकल लोक ठकुराई हो॥
मोहन बसीकरन चट चेटक मंत्र जंत्र सब जानै हो।
तात भले जु भले सब तुमको भले भले करि मानै हो॥
बरनौं कहा जथा मति मेरी बेदहु पार न पावै हो।
भट्ट गदाधर प्रभुकी महिमा गावत ही उर आवै हो॥

नन्ददास

(२६७)

राम-कृष्ण कहिये उठि भोर ।
अवधि-ईस वे धनुष धरे हैं, यह व्रज-माखनचोर ।।
उनके छत्र चँवर सिहासन, भरत सत्रुहन लछमन जोर ।
इनके लकुट मुकुट पीताम्वर, नित गायन सँग नंद-किसोर ।।
उन सागरमें सिला तराई, इन राख्यौ गिरि नखकी कोर ।
'नंददास' प्रभु सब तजि भजिये, जैसे निरखत चंद चकोर ।।

(२६८)

जो गिरि रुचै तौ बसौ श्रीगोवर्धन, गाम रुचै तौ बसौ नँदगाम ।
नगर रुचै तौ बसौ श्रीमधुपुरी, सोभासागर अति अभिराम ।। १ ।।
सरिता रुचै तौ बसौ श्रीजमुनातट, सकल मनोरथ पूरन काम ।
'नंददास' कानन रुचै तौ, बसौ भूमि वृन्दावन-धाम ।। २ ।।

कुम्भनदास

(२६९) सारंग

भगतको कहा सीकरी काम ।
आवत जात पन्हैया टूटी बिसरि गयो हरिनाम ।।
जाको मुख देखे दुख लागै ताकों करन परी परनाम ।
कुंभनदास लाल गिरधर बिन यह सब झूठौ धाम ।।

(२७०) धनाश्री

नैन भरि देख्यौ नंदकुमार ।
ता दिनते सब भूलि गयौं हौं बिसरचौ पन परव
बिन देखे हौं बिकल भयौं हौं अंग-अंग सब हा
ताते सुधि है साँवरि मूरतिकी लोचन भरि भरि बा
रूप-रास पैमित नहीं मानों कैसें मिलै लो कन्ह
कुंभनदास प्रभु गोबरधन-धर मिलियै बहुरि री म

(२७१)

हिलगिन कठिन है या मनकी ।
जाके लिये देखि मेरी सजनी लाज गयी सब तनव
धरम जाउ अरु लोग हँसौ सब अरु गावौ कुल गा
सो क्यों रहै ताहि बिनु देखे जा जाकी हितका
रसुलुबधक निमिख न छाँड़त है ज्यों अधीन मृग गा
कुंभनदास सनेह परम श्रीगोवरधन-धर जान

(२७२) सारंग

जो पै चोंप मिलनकी होय ।
तौ क्यों रहै ताहि बिनु देखे लाख करौ जिन को
जो यह बिरह परस्पर व्यापै जो कछु जीवन ब
लोकलाज कुलकी मरजादा एकौ चित न ग
कुंभनदास प्रभु जाय तन लागी और न कछु सुहा
गिरधर लाल तोहि बिनु देखे छिन-छिन कलप बिहा

परमानन्ददास

(२७३) बिहागरौ

ब्रजके बिरही लोग बिचारे।
बिन गोपाल ठगेसे ठाढ़े अति दुरबल तन हारे॥
मात जसोदा पंथ निहारत निरखत साँझ सकारे।
जो कोइ कान्ह कान्ह कहि बोलत अँखियन वहत पनारे॥
यह मथुरा काजरकी रेखा जे निकसे ते कारे।
परमानंद स्वामि बिनु ऐसे ज्यों चंदा बिनु तारे॥

(२७४) कान्हरा

कौन रसिक है इन बातन कौ।
नंद-नँदन बिन कासों कहिये
सुन री सखी मेरौ दुख या मनकौ॥ १॥
कहाँ वह जमुनापुलिन मनोहर
कहाँ वह चंद सरद रतिनकौ।
कहाँ वह मंद सुगन्ध अमल रस
कहाँ वहे षटपद जलजातनकौ॥ २॥
कहाँ वह सेज पौढ़िबी बनकौ
फूल बिछौना मृदु पातनकौ।
कहाँ वह दरस परस परमानँद
कोमल तन कोमल गातनकौ॥ ३॥

(२७५) सारंग

जियकी साधन जिय ही रही री।
बहुरि गोपाल देखि नहिं पाये बिलपत कुंज अहीरी॥

एक दिन साँज समीप यहि मारग बेचन जात दही री।
प्रीतके लए दानमिस मोहन मेरी बाँह गही री।
बिन देखे घड़ि जात कलप सम बिरहा अनल दही री
परमानंद स्वामि बिनु दरसन नैनन नींद गई री।

(२७६) बिलावल

जसौदा तेरे भागकी कही न जाय।
जो मूरति ब्रह्मादिक दुरलभ सो प्रगटे हैं आय।
सिव नारद सनकादि महामुनि मिलिबे करत उपाय।
ते नँदलाल धूरि-धूसर-बपु रहत गोद लिपटाय।
रतन जड़ित पौढ़ाय पालनै बदन देखि मुसुकाइ
झूलौ मेरे लाल बलिहारी परमानंद जस गाइ

(२७७) पूरवी

मेरौ माई माधो सों मन लाग्यौ।
मेरौ नैन अरु कमलनैनकौ इकठौरौ करि मान्यौ॥
लोक बेदकी कानि तजी मैं न्यौती अपने आन्यौ।
इन गोबिंद चरनके कारन बैर सबनसों ठान्यौ॥
अबको भिन्न होय मेरी सजनी ! दूध मिल्यौ जैसे पान्यौ।
परमानंद मिलि गिरधर सों है पहली पहचान्यौ॥

कृष्णदास

(२७८) देवगंधार

जब तें स्याम सरन हौं पायौ।
तबतें भेंट भई श्रीवल्लभ, निज पति नाम बतायौ॥

ं र अविद्या छाँड़ि मलिन मति, स्तुतिपथ आय दृढ़ायौ ।
ंगदास जन चहुँ जुग खोजत, अब निहचै मन आयौ ॥

(२८२) बिलावल

ंल दसा गोपालकी सब काहू प्यारी ।
लै गोद खिलावहीं, जसुमति महतारी ॥ १ ॥
त अँगुलि तन सोहहीं, सिर कुलहि बिराजै ।
्षुघंटिका कटि बनी, पाय नूपुर वाजै ॥ २ ॥
रे मुरि नाचै मोर ज्यों सुर नर मुनि मोहै ।
ष्णदास प्रभु नंदके आँगनमें सोहै ॥ ३ ॥

(२८०) गौरी

मो मन गिरिधरछबिपै अटक्यो ।
लित त्रिभंग चालपै चलिकै,
चिबुक चारु गड़ि ठटक्यो ॥ १ ॥
जल स्याम घन बरन लीन ह्वै,
फिर चित अनत न भटक्यो ।
ष्णदास किये प्रान निछावर,
यह तन जग सिर पटक्यो ॥ २ ॥

व्यासजी

(२८१) सारंग

राधा वल्लभ मेरौ प्यारौ ।
सरबोपरि सबहीकौ ठाकुर, सब सुखदानि हमारौ ॥
व्रज वृन्दावन नाइक सेवालाइक स्याम उज्यारौ ।
प्रीत रीत पहचानै जानै रसिकनकौ रखवारौ ॥

स्याम कमल-दल-लोचन मोचन दुख नैननकी तारी।
अवतारी सब अवतारनकी महतारी महतारी॥
मूरतिवंत काम गोपिनको गाय गोप को गारी।
व्यासदासकी प्रान सजीवन छिनभर हृदय ना टारी॥

(२८२) सारंग

बृन्दावनकी सोभा देखे मेरे नैंन सिरात।
कुंज निकुंज पुंज सुख बरसत हरपत सबको गात॥
राधा मोहनके निज मंदिर महाप्रलय नहिं जात।
ब्रह्मातें उपज्यो न अखंडित कबहूँ नाहिं नसात॥
फनिपर रवि तरि नहिं बिराट महँ नहिं संध्या नहिं प्रात।
माया कालरहित नित नूतन सदा फूल फल पात॥
निरगुन सगुन ब्रह्मतें न्यारी बिहरत सदा सुहात।
व्यास बिलास रास अदभुत गति, निगम अगोचर बात॥

(२८३) चर्चरी

नव चक्र चूड़ा नृपति मन साँवरी,
राधिका तरुनिमनि पट्टरानी।
सेस ग्रह आदि बैकुंठ परिजन्त सब,
लोक थानैत ब्रज राजधानी॥
मेघ छ्यानवे कोटि बाग सींचत जहाँ,
मुक्ति चारी तहा भरति पानी।
सूर ससि पाहरू पवन जन इंदिरा,
चरनदासी भाट निगम बानी॥ २

धर्म कुतवाल सुक सूत नारद चारु,
फिरत चर चारि सनकादि ग्यानी ।
सत्तगुन पैरियां काल बँधुवा जहाँ,
कर्म बस कामरति सुख निसानी ॥ ३ ॥
कनक मरकत धरनि कुंज कुसुमुति महल,
मध्यकमनीय सयनीय ठानी ।
पल न बिछुरत दुऊ जात नहिं तहँ कोऊ,
व्यास महलनि लिये पीकदानी ॥ ४ ॥

(२८४) धनाश्री

हरिदासनके निकट न आवत प्रेत पितर जमदूत ।
जोगी भोगी संन्यासी अरु पंडित मुंडित धूत ॥
ग्रह गन्नेस सुरेस सिवा सिव डर करि भागत भूत ।
सिधि निधि विधि निषेध हरिनामहि डरपत रहत कुपूत ॥
सुख-दुख पाप-पुन्य मायामय ईति-भीति आकूत ।
सबकी आसत्रास तजि व्यासहिं भवत भगत सपूत ॥

(२८५) सारंग

रसिक अनन्य हमारी जाति ।
कुलदेवी राधा, बरसानौ खेरौ,
व्रजबासि सों पाँति ॥ १ ॥
गोत गोपाल, जनेऊ माला,
सिखा सिखंडि, हरि-मंदिर भाल ।
हरिगुन नाम बेद धुनि सुनियत,
मूंज पखावज कुस करताल ॥ २ ॥

साखा जमुना, हरि-लीला पटकरम,
प्रसाद प्रान धन रास।
सेवा बिधि-निषेध जड़ संगति,
बृत्ति सदा बृन्दाबन बास ॥ ३
समृति भागवत, कृष्ण नाम संध्या,
तरपन गायत्री जाप।
बंसी रिपि जजमान कलपतरु
ब्यास न देत असीस सराप ॥ ४

(२८६)

ऐसे ही बसिये ब्रजबीथिन।
साधुनके पनवारे चुनि चुनि, उदर पोषियत सीथिन ॥ १
घूरनमेंके बीनि चिनगटा रच्छा कीजै सीतन।
कुंज कुंज प्रति लोटि लगै उड़ि रज ब्रजकी अंगीतन ॥ २
नितप्रति दरस स्याम-स्यामाको नित जमुना जल पीतन।
ऐसेहि व्यास रुचै तन पावन ऐसेहि मिलत अतीतन ॥ ३

(२८७)

जैये कौनके अब द्वार।
जो जिय होय प्रीति काहूके दुख सहिये सौ बार ॥
घर-घर राजस तामस बाढ़्यो, धन-जोबनको गार।
काक-बिवस ह्वै दान देत नीचनकों होत उदार ॥
साधु न सूझत बात न बूझत ये कलिके ब्यौहार।
ब्यासदास मत भाजि उबरियै परियै मांसीधार ॥

(२८८)

कहा-कहा नहिं सहत सरीर।
स्वाम-सरन बिनु, करम सहाइन जनम-मरनकी पीर ॥
करुनावंत साधु-संगति बिनु, मनहि देय को धीर।
भगति भागवत बिनु, को मेटै, सुख दै दुखकी भीर ॥
बिनु अपराध चहूँ दिसि बरषत पिसुन बचन अति तीर।
कृष्ण-कृपा कवचीतें उबरै पावै तबही सीर ॥
चेतहु भैया, बेगि बढ़ी कलिकाल नदी गंभीर।
व्यास बचन बलि वृंदावन बसि, सेवहु कुंज कुटीर ॥

(२८९)

भजौ सुत, साँचे स्याम पिताहि।
जाके सरन जात ही मिटिहै दारुन दुखकी दाहि ॥
कृपावंत भगवंत सुने मैं छिनि छाड़ी जिनि ताहि।
तेरे सकल मनोरथ पूजैं जो मथुरा लौं जाहिं ॥
वै गोपाल दयाल दीन तू, करिहैं कृपा निवाहि।
और न ठौर अनाथ दुखिन कौं मैं देख्यौ जग माँहि ॥
करुना बरुनालयकी महिमा मोपै कही न जाहि।
व्यासदासके प्रभुको सेवत हारि भई कहु काहि ?॥

(२९०) सारंग

धरम दुरचो कलिराज दिखाई ॥
कीनों प्रगट प्रताप आपनौ सब विपरीत चलाई।
धन भौ मीत, धरम भौ बैरी पतितन सो हितवाई ॥

जोगी जती तपी संन्यासी व्रत छाँड़्यो अकुलाई।
बरनास्रमकी कौन चलावै संतनहूमें आई॥
देखत संत भयानक लागत भावतें ससुर जमाई।
संपति सुकृत सनेह मान चित ग्रह ब्यौहार बड़ाई॥
कियो कुमंत्री लोभ आपुनों महामोह जु सहाई।
काम क्रोध मद मोह मत्सरा दीन्हीं देस दुहाई॥
दान लैनकौं बड़े पातकी मचलनकौं बँभनाई।
लरन मरनकौं बड़े तामसी वारौं कोटि कसाई॥
उपदेसनकौं गुरू गोसाईं आचरनें अधमाई।
ब्यासदासके सुकृत साँकरेमें गोपाल सहाई॥

(२९१)

साधन बैरागी जड़ बंग।
धातु रसायन औषध सेवत निसिदिन बढ़त अनंग॥
गुरु-वचननकौ रंग न लाग्यौ भयौ न संसै भंग।
बिष विकारगुन उपजै चित लगि सबै करत चित भंग॥
बनमें रहत गहत कामिनि कुच सेवत पीन उतंग।
धनि धनि साधु! दंभकी मूरति, दियो छाड़ि हरि संग॥
लोभ बचन बाननि अँग-अंगनि सोभित निकर निषंग।
व्यास आस जम पासि गरे, निहि भावै रंग न रंग॥

(२९२)

जो दुख होत विमुख घर आये।
ज्यों कारी लागे कारी निसि, को
दुपहर जेठ जरत बारूमें धा
काँटन माँझ फिरै बिनु पनहीं,

ज्यों बाँझहिं दुख होत सौतिकी सुंदर बेटा जाये।
देखतही मुख होत जिती दुख बिसरत नहिं बिसराये॥
भटकत फिरत निलज बरजत ही कूकुर ज्यों झहराये।
गारी देत बिलग नहिं मानत फूलत दमरी पाये॥
अति दुख दुष्ट जगतमें जेते नैंक न मेरे भाये।
भूलि दरस नहिं कीजौ वाकौ, व्यास बचन बिसराये॥

(२९३)

सुने न देखे भगत भिखारी।
तिनके दाम कामकौ लोभ न जिनके कुंजबिहारी॥
सुक नारद अरु सिव सनकादिक, जे अनुरागी भारी।
तिनको मत भागवत न समुझैं सबकी बुधि पचि हारी॥
रसना इंद्री दोऊ बैरिन जिनकी अनी अन्यारी।
करि आहार बिहार परसपर बैर करन बिभचारी॥
बिषइनिकी परतीति न हरिसों प्रीति रीति बाजारी।
व्यास आस-सागरमें बूड़े आई भगति बिसारी॥

(२९४)

जो सुख होत भगत घर आये।
सो सुख होत नहीं बहु संपति, बाँझहिं बेटा जाये॥
जो सुख होत भगत चरनोदक पीवत गात लगाये।
सो सुख सपनेहू नहिं पैयत कोटिक तीरथ न्हाये॥
जो सुख भगतनकौ मुख देखत उपजत दुख बिसराये।
सो सुख होत न कामिहिं कबहूँ कामिनि उर लपटाये॥

जो सुख कबहुँ न पैयत पितु घर, सुतकौ पूत खिलाये।
सो सुख होत भगत वचननि सुनि नैननि नीर वहाये॥
जो सुख होत मिलत साधुनसों छिन-छिन रंग बढ़ाये।
सो सुख होत न नेक व्यासकौं लंक सुमेरहु पाये॥

(२६५)

हरि विनु को अपनौ संसार।
माया मोह बँध्यो जग बूड़त, काल नदीकी धार॥
जैसे संघट होत नावमें रहत न पैले पार।
सुत संपति दारा सों ऐसे बिछुरत लगै न वार॥
जैसे सपने रंक पाय निधि जानै कछू न सार।
ऐसे छिनभंगुर देहीके गरबहिं करत गँवार॥
जैसे अंधरे टेकत डोलत गनत न खाइ पनार।
ऐसे व्यास बहुत उपदेसे सुनि-सुनि गये न पार॥

(२६६)

कहत सुनत बहुतै दिन बीते भगति न मनमें आई।
स्यामकृपा बिनु, साधुसंग बिनु कहि कौने रति पाई॥
अपने अपने मत-मद भूले करत आपनी भाई।
कह्यो हमारौ बहुत करत हैं, बहुतनमें प्रभुताई॥
मैं समझीं सब काहु न समझी, मैं सबहिन समझाई।
भोरे भगत हुते सब तबके, हमरे बहु चतुराई॥
हमही अति परिपक्व भये औरनिकैं सबै कचाई।
कहनि सुहेली रहनि दुहेली बातनि बहुत बड़ाई॥
हरि मंदिर माला धरि, गुरु करि जीवनके सुखदाई।
दया दीनता दासभाव बिनु मिलें न व्यास कन्हाई॥

(२९७) कान्हरा

परमधन राधे नाम अधार।
जाहि स्याम मुरलीमें टेरत, सुमिरत बारंबार ॥
जंत्र-मंत्र औ वेद तंत्रमें सबै तारको तार।
श्रीसुक प्रगट कियो नहिं यातें जानि सारको सार ॥
कोटिन रूप धरे नँद-नंदन, तऊ न पायो पार।
व्यासदास अब प्रगट बखानत, डारि भारमें भार ॥

श्रीभट्ट

(२९८) पद

मदनगुपाल, सरन तेरी आयौ।
चरनकमलकी सरन दीजिये, चेरौ करि राखौ घर जायौ ॥ १ ॥
धनि-धनि मात-पिता सुत-बंधू, धनि जननी जिन गोद खिलायौ।
धनि-धनि चरन चलत तीरथकों, धनि गुरुजन हरिनाम सुनायौ ॥ २ ॥
जे नर विमुख भये गोबिंदसों, जनम अनेक महादुख पायो।
श्रीभटके प्रभु दियौ अभय पद, जम डरप्यौ जब दास कहायौ ॥ ३ ॥

(२९९)

ब्रजभूमि मोहिनी मैं जानी।
मोहन कुंज मोहन वृन्दावन मोहन जमुना पानी ॥ १ ॥
मोहन नारि सकल गोकुलकी बोलति अमरतबानी।
श्रीभटके प्रभु मोहन नागर मोहनि राधारानी ॥ २ ॥

(३००)

सेव्य हमारे हैं पिय प्यारे वृन्दा विपिन-विलासी।
नँद-नंदन वृषभानु-नंदिनी चरन अनन्य उपासी ॥ १ ॥

मत्त प्रनयबस सदा एकरस बिबिध निकुंजनिवासी।
श्रीभट जुगुलरूप बंसीबट सेवत सब सुखरासी ॥ २॥

(३०१)

स्यामा स्याम पद पावैं सोई ।
मन-बच-क्रम करि सदा नित्य जेहि हरि गुरु पदपंकज रति होई॥१॥
नंदसुवन वृषभानुसुता पद भजै तजै मन आनै जाई।
श्रीभट अटकि रहे स्वामीपन आन व्रतै यानै सब छोई॥२॥

(३०२)

जुगुलकिसोर हमारे ठाकुर ।
सदा सरबदा हम जिनके हैं, जनम जनम घरजाये चाकर॥
चूक परैं परिहरैं न कबहूँ, सबही भाँति दयाके आकर।
जै श्रीभट्ट प्रगट त्रिभुवनमें, प्रनतनि पोषत परम सुधाकर॥

(३०३)

बलि-बलि श्रीराधे-नँदनँदना ।
मेरे मनकी अमित अघटनी को जानै तुम बिना ॥
भलेई चारू चरन दरसाये ढूँढ़त फिरिहौं वृन्दावना ।
जै श्रीभट स्यामा स्यामरूप पै निवछावर तन-मना ॥

(३०४)

राधे, तेरे प्रेमकी कापै कहि आवै ।
तेरीसी गोपकी तोपै बनि आवै ॥
मन-बच-क्रम दुरगम सदा तापै चरन छुवावै ।
जै श्रीभट मति वृजभानु तेज प्रताप जनावै ॥

(३०५)

वसौ मेरे नैननिमें दोउ चंद ।
गौरवदनि वृषभानुनंदिनी, स्यामवरन नँदनंद ॥ १ ॥
गोकुल रहे लुभाय रूपमें निरखत आनँदकंद ।
जै श्रीभट्ट प्रेमरस-बंधन, क्यों छूटै दृढ फंद ॥ २ ॥

सूरदास मदनमोहन

(३०६) बधाई

नंदजू मेरे मन आनंद भयो, हौं गोवरधन तें आयौ ।
तुम्हरे पुत्र भयो, हौं सुनिकै अति आतुर उठि धायौ ॥
बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि सुनि देस-देस तें आये ।
इक पहले ही आसा लागे बहुत दिनन तें छाये ॥
ते पहिरें कंचन मनि मुकता नाना वसन अनूप ।
मोहि मिले मारगमें मानो जात कहूके भूप ॥
तुम तौ परम उदार नंदजू जइ माँग्या सोइ दीनौं ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवनमें तुम सरि साकौ कीनौं ॥
लच्छ हेतु तौ परयौ रहौं हौं बिनु देखे नहिं जैहौं ।
नंदराइ सुनि विनती मेरी तबै विदा भलि ह्वैहौं ॥
दीजै मोहिं कृपा करि साईं जो हौं आयौ माँगन ।
जसुमति सुत अपने पाइनि चलि खेलत-आवै आँगन ॥
जब तुम मदनमोहन कहि टेरौ यह सुनि हौं घर जाउँ ।
हौं तौ तेरो घरकौ ढाढ़ी सूरदास मो नाउँ ॥

(३०७).

प्रगट भई सोभा त्रिभुवनकी भानु गोपके आइ
अदभुत रूप देखि ब्रजवनिता रीझीं- लेत वलाइ
नहिं कमला, नहिं सची, नहीं रति उपमाहू न समाइ
जा हित प्रगठ भये ब्रजभूषन धन्य पिता धन माइ॥
जुग जुग राज करो दोऊ जन इत तुव उत नँदराइ।
उनके मदनमोहन तेरे स्यामा सूरदास बलि जाइ॥

(३०८) देस

मेरे गति तुमहीं अनेक तोप पाऊँ।
चरन कमल-नख-मनिपर बिपै-सुख वहाऊँ।
घर घर जो डोलौं तौ हरि तुम्हें लजाऊँ॥ १॥
तुम्हरो कहाइ कहौ कौन को कहाऊँ।
तुमसे प्रभु छाँड़ि कहा दीननकौं धाऊँ॥ २॥
सीस तुम्हें नाय कहौ कौनकौ नवाऊँ।
कंचन उर हार छाँड़ि काच क्यों बनाऊँ॥ ३॥
सोभा सब हानि करूँ जगतको हसाऊँ।
हाथीतें उतरि कहा गदहा चढ़ि धाऊँ॥ ४॥
कुमकुमको लेप छाँड़ि काजर मुँह लाऊँ।
कामधेनु घरमें तज अजा क्यों दुहाऊँ॥ ५॥
कनकमहल छाँड़ि क्योंऽब परन कुटी छाऊँ।
पाइन जो पेलो प्रभु तौ न अनत जाऊँ॥ ६॥
सूरदास मदनमोहन जनम जनम गाऊँ।
संतनकी पनहीको रच्छक कहाऊँ॥ ७॥

(३०९) बिलावल

मधुके मतवारे श्याम, खोलौ प्यारे पलकें।
सीस मुकुट लटा छुटी और छुटी अलकें॥ १ ॥
सुर-नर मुनि द्वार ठाढ़ दरसहेतु किलकें।
नासिकाके मोति सोहैं बीच लाल ललकें॥ २ ॥
कटि पीताम्बर मुरली कर स्रवन-कुंडल झलकें।
सूरदास मदनमोहन दरस देहौ भलकें॥ ३ ॥

(३१०) देस

चलौ री, मुरली सुनिये, कान्ह बजाई जमुना तीर।
तजि लोकलाज कुलकी कानि गुरुजनकी भीर॥
जमुनाजल थकित भयो बछा ना पीवें छीर।
सुरविमान थकित भये थकित कोकिल-कीर॥
देहकी सुधि बिसरि गई बिसरौ तनकौ चीर।
मात तात बिसरि गये बिसरे बालक बीर॥
मुरली-धुनि मधुर बाजै कैसेकै धरौं धीर।
सूरदास मदनमोहन जानत हौ परपीर॥

नागरीदास

(३११)

हमारैं मुरलीवारौ स्याम।
बिनु मुरली बनमाल चन्द्रिका, नहिं पहिचानत नाम॥
गोपरूप बृन्दाबन-चारी, ब्रजा-जन पूरन काम।
याही सों हित चित बढ़ौ नित, दिन-दिन पल-छिन जाम॥

नंदीसुर गोबरधन गोकुल बरसानों बिलास।
नागरिदास द्वारका मथुरा, इनसों कैसो काम॥

(३१२)

चरचा करी कैसे जाय।
बात जानत कछुक हमसों, कहत जिय थहराय॥
कथा अकथ सनेहकी, उर नाहि आवत और।
वेद समृती उपनिषदकों, रही नाहिन ठौर॥
मनहिमें है कहनि ताकी, सुनत श्रोता नैन।
सोऽब नागर लोग बूझत, कहि न आवत बैन॥

(३१३)

जो मेरे तन होते दोय।
मैं काहू तें कछु नहिं कहतौ,
मोतें कछु कहतौ नहिं कोय॥ १॥
एक जु तन हरि-विमुखनके,
सँग रहतो देस-विदेस।
विविध भाँति के जग-दुख सुख जहँ,
नही भगति-लवलेस॥ २॥
एक जु तन सतसंग रंग रँगि,
रहतौ अति सुख पूर।
जनम सफल कर लेतौ ब्रज बसि,
जहँ ब्रज जीवनमूल॥ ३॥
द्वै तन बिन द्वै काज न ह्वैहैं,
आयु सु छिन-छिन छीजै।
नागरिदास एक तनते अब,
कहौ कहा करि लीजै॥ ४॥

(३१४)

दरपन देखत, देखत नाहीं।
बालापन फिर प्रगट स्याम कच, बहुरि स्वेत ह्वै जाहीं॥
तीन रूप या मुखके पलटे, नहिं अयानता छूटी।
नियरे आवत मृत्यु न सूझत, आखें हियकी फूटी॥
कृष्ण भगति सुख लेत न अजहूँ वृद्ध देह दुखरासी।
नागरिया सोई नर निहचे, जीवत नरकनिवासी॥

(३१५)

हरि जू अजुगत जुगत करेंगे।
परबत ऊपर बहल काँचकी, नीके लै निकरेंगे॥
गहिरे जल पाषान नाव बिच आछी भाँति तरेंगे।
मैन तुरंग चढ़े पावक बिच, नाहीं पिघरि परेंगे॥
याहू ते असमंजस हो किन, प्रभु दृढ़ कर पकरेंगे।
नागर सब आधीन कृपाके, हम इन डर न डरेंगे॥

(३१६)

दुहूँ भाँतिनकौ मैं फल पायौ।
पाप किये ताते बिमुखन सँग, देस देस भटकायौ।
तुच्छ कामना हित कुसंग बसि, झूठे लोभ लुभायौ॥
कौन पुन्य अब वृन्दावन बरसाने सुबस बसायौ।
आनँदनिधि व्रज अनन्य-मंडली, उर लगाय अपनायौ॥
सुनिबेहूकों दुरलभ सो सब रस बिलास दरसायौ।
स्यामा-स्याम दास नागरकौ, कियो मनोरथ भायौ॥

छैलविहारी, लालविहारी, वनवारी रसकंद।
गोपीनाथ, मदनमोहन, पुनि बंसीधर, गोविंद॥
व्रजलोचन, व्रजरमन, मनोहर, व्रजउत्सव व्रजनाथ।
व्रजजीवन, व्रजवल्लभ सबके, व्रजकिसोर, सुमगाथ॥
व्रजमोहन, व्रजभूषन, सोहन, व्रजनायक, व्रजचंद।
व्रजनागर, व्रजछैल, छबीले, व्रजवर, श्रीनँदनंद॥
व्रज आनँद, व्रजदूलह नितहीं, अति सुंदर व्रजलाल।
व्रज गउवनके पाछे आछे, सोहत व्रजगोपाल॥
व्रज संबंधी नाम लेते ये, व्रजकी लीला गावैं।
नागरिदासहि मुरलीवारो, व्रजको ठाकुर भावैं॥

भगवतरसिक

(३२२) पद

लखी जिन लालकी मुसक्यान।
तिनहि बिसरी वेदविधि, जप, जोग, संयम, ध्यान॥
नेम, व्रत, आचार, पूजा, पाठ, गीता-ज्ञान।
रसिक भागवत दृग दई असि, ऐंचिकै मुख म्यान॥

(३२३)

परसपर दोउ चकोर दोउ चंदा।
दोउ चातक, दोउ स्वाती, दोउ घन, दोउ दामिनी अमंदा॥
दोउ अरविंद, दोऊ अलि लंपट, दोउ लोहा, दोउ चुंबक।
दोउ आसिक, महबूब दोउ मिलि, जुरे जुराफा अंबक॥

उ मेघ, दोउ मोर, दोउ मृग, दोउ राग-रस-भीते ।
उ मनि बिसद, दोइ वर पन्नग, दोउ बारि, दोउ मीने ॥ ३ ॥
वितरसिक बिहारिनि प्यारी, रसिक विहारी प्यारे ।
उ मुख देखि जियत अधरामृत पियत होत नहिं न्यारे ॥ ४ ॥

(३२४) सारंग

वेषधारी हरिके उर सालैं ।
लोभी दंभी, कपटी नट-से, सिस्नोदरको पालैं ॥ १ ॥
गुरू भये घर धरमें डोलैं, नाम धनीको बेंचैं ।
परमारथ सपने नहिं जानैं पैसनहीको खैंचैं ॥ २ ॥
कवहुँक वकता ह्वै वनि बैठ, कथा भागवत गावैं ।
अरथ अनरथ कछू नहिं भाषैं, पैसनहीकों धावैं ॥ ३ ॥
कवहुँक हरिमंदिरकों सेवैं, करैं निरंतर वासा ।
भाल भगतिकी लेस न जानैं, पैसनहीकी आसा ॥ ४ ।
नाचैं, गावैं, चित्र वनावैं, करैं काव्य चटकीली ।
साँच विना हरि हाथ न आवैं, सब रहनी है ढीली ॥ ५ ।
विनु विवेक-बैराग भगति विनु सत्य न एकौ मानौ ।
भगवत विमुख कपट चतुराई, सो पाखंडै जानौ ॥ ६ ।

(३२५)

इतने गुन जामें सों संत ।
श्रीभागवत मध्य जस गावत, श्रीमुख कमलाकंत ।
हरिकौ भजन साधुकी सेवा सर्वभूत पर दाया ।
हिंसा, लोभ, दंभ, छल त्यागै, विषसम देखै माया ॥

सहनसील, आसय उदार अति, धीरजसहित विवेकी।
सत्य वचन सबसों सुखदायक, गहि अनन्य व्रत एकी॥
इंद्रीजित, अभिमान न जाके, करै जगतकों पावन।
भगवतरसिक तासुकी संगति तीनहुँ ताप नसावन॥

(३२६) गौरी

नमो नमो वृंदावनचंद।
नित्य, अनन्त, अनादि, एकरस, पिय प्यारी विहरत स्वच्छन्द॥
सत्त-चित्त-आनंदरूपमय खग-मृग, द्रुम-बेली बर बृन्द।
भगवतरसिक निरंतर सेवत, मधुप भये पीवत मकरंद॥

(३२७) ईमन

जय जय रसिक रवनीरवन।
रूप, गुन, लावन्य प्रभुता, प्रेम पूरन भवन॥
विपति जनकी भानवेकों, तुम बिना कहु कवन।
हरहु मनकी मलिनता, व्यापै न माया पवन॥
विषय रस इंद्री अजीरन अति करावहु वमन।
खोलिये हियके नयन, दरसै सुखद बन अवन॥
चतुर, चिंतामनि, दयानिधि, दुसह दारिद दवन।
मेटिये भगवत व्यथा, हँसि भेंटिये तजि भवन॥

नारायण स्वामी

(३२८) आसावरी

सखि, मेरे मनकी को जानै।
कासों कहौं सुनै जो चित दै, हितकी बात बखानै॥

ऐसो को है अंतरजामी, तुरत पीर पहिचानै ।
नारायन जो बीत रही है, कब कोई सच मानै ॥

(३२९) सोरठ

जाहि लगन लगी घनस्यामकी ।
कहूँ पग, परत हैं कितहूँ, भूल जाय सुधि धामकी ॥ १ ॥
निहार नहिं रहत सार कछु, घरि पल निसिदिन जामकी ।
मूँह उठै तितै ही धावै, सुरति न छाया धामकी ॥ २ ॥
तुति निन्दा करो भलै ही, मेंड़ तजी कुल गामकी ।
ायन बौरी भइ डोलै, रही न काहू कामकी ॥ ३ ॥

(३३०)

मोहन बसि गयो मेरे मनमें ।
लोक-लाज कुल-कानि छूटि गई, याकी नेह-लगनमें ॥
जित देखों तितही वह दीखै, घर-बाहर, आँगनमे ।
अंग-अंग प्रति रोम-रोममें, छाइ रह्यो तन-मनमें ॥
कुंडल-झलक कपोलन सोहै, बाजूबंद भुजनमें ।
कंकन कलित ललित बनमाला, नूपुर धुनि चरननमें ॥
चपल नैन,भ्रकुटी बर बाँकी, ठाढ़ो सघन लतनमें ।
नारायन बिन मोल बिकी हौं याकी नेंक हसनमें ॥

(३३१)

मोहन जाकी दृष्टि परत, ताकी गति होत है और और ।
सुहात भवन, तन असन बसन, बनहीको धावत दौर दौर ॥ १ ॥
इं धरत धीर, हिय बरत पीर, ब्याकुल ह्वै भटकत ठौर ठौर ।
अँसुवन भर नारायन मन, झाँकत डोलत पौर पौर ॥ २ ॥

(३३२) खमाच

प्रीतम, मोहिं प्रान ते प्यारी ।
जो तोहि देखि हियौ सुख पावत, सो बड़ भागनवारी ॥
तू जीवनधन सरवस तू ही, तू ही दृगनकौ तारी।
जो तोकों पलभर न निहारूँ, दीखत जग अँधियारी ॥
मोद बढ़ावनके कारन हम, मानिनि रूपहिं धारी।
नारायन हम दोउ एक हैं, फूल सुगंध न न्यारी।

(३३३) बिहाग

करु मन, नंदनँदनको ध्यान ।
यहि अवसर तोहिं फिर न मिलैगौ, मेरौ कह्यौ अब मान ॥
घूँघरवारी अलकें मुखपै, कुंडल झलकत कान।
नारायन अलसाने नैना, झूमत रूप निधान॥

(३३४) झंझोटी

स्याम दृगनकी चोट बुरी री ।
ज्यों ज्यों नाम लेति तू वाकौ, मो घायलपै नॉन पुरी री ॥ १
ना जानों अब सुध-बुध मेरी, कौन बिपिनमें जाय दुरी री। १
नारायन नहिं छूटत सजनी' जाकी जासों प्रीति जुरी री ॥ १

(३३५) कान्हरा

नंदनंदनके ऐसे नैन ।
अति छवि भरे नागके छौना, डरति डसैं करि सैन ॥
इन सम सावर मंत्र न होई, जादू, जंत्र, तंत्र नहिं कोई।
एक दृष्टिमें मन हरि लेवैं करि देवैं बेचैन ॥
चितवनमें घायल करि डारे इनपै कोटि बान लै वारें।
अति पैने, तिरछे हिय कसकें, स्वास न देवैं लेन ॥

चंचल चपल मनोहर कारे, खंजन-मान-लजावन हारे।
नारायन सुन्दर मतवारे, अनियारे, दुख दैन ॥

(३३६) काफी

या साँवरेसों मैं प्रीति लगाई।
कुल-कलंकतें नाहिं डरौंगी, अब तौ करौं अपनी मन भाई ॥
बीच बजार पुकार कहौं मैं चाहे करौ तुम कोटि बुराई।
लाज मजाद मिली औरनकों मृदु मुसकनि मेरे बट आई ॥
बिनु देखे मनमोहन कौ मुख, मोहि लगत त्रिभुवन दुखदाई।
नारायन तिनकों सब फीकी, जिन चाखी यह रूप-मिठाई ॥

(३३७)

बेदरदी तोहि दरद न आवै।
चितवनमें चित बस करि मेरौ, अब काहेकों आँख चुरावै ॥
कबसों परी द्वारपै तेरे, बिन देखे जियरा घबरावै।
नारायन महबूब साँवरे घायल करि फिर गैल बतावै ॥

(३३८) नट

सखी नव छैल छबीलौ, प्रातसमय इततें को आवै।
कमलसमान बड़े दृग जाके, स्याम सलौनो मृदु मुसकावै ॥ १ ॥
जाकी सुन्दरता जग बरनत, मुख-सोभा लखि चंद लजावै।
नारायन यह किधौं वही है, जो जसुमतिकौ कुँवर कहावै ॥ २ ॥

(३३९) ईमन

मोपै कैसी यह मोहिनी डारी।
चितचोर छैल गिरिधारी ॥
ग्रहकारजमें जी न लगत हैं, खानपान लगै खारी।
निपट उदास रहत हौं जबते, सूरत देखि तिहारी ॥

संगकी सखी देति मोहिं धीरज, बचन कहत हितकारी।
एक न लगत कही काहूकी कहति कहति सब हारी॥
रही न लाज सकुच गुरुजनकी, तन मन सुरति बिसारी।
नारायन मोहिं समुझि बावरी, हँसत सकल नर नारी॥

(३४०) कबित्त

चाहे तू योग करि भृकुटीमध्य ध्यान धरि,
चाहे नाम रूप मिथ्या जानिकै निहार लै।
निरगुन, निरभय, निराकार ज्योति व्याप रही,
ऐसो तत्त्वज्ञान निज मनमें तू धार लै॥
नारायन अपनेको आप ही बखान करि,
'मोतें वह भिन्न नहीं' या बिधि पुकार लै।
जौलौं तोहि नन्दको कुमार नाहिं दृष्टि पर्यो,
तौलौं तू भलै बैठि ब्रह्मकों बिचार लै॥

(३४१) बिहाग

नयनों रे, चित-चोर बतावौ।
तुम्हीं रहत भवन रखवारे, बाँके बीर कहावौ॥
तुम्हरे बीच गयौ मन मेरौ, चाहे सौंहैं खावौ।
अब क्यों रोवत हौ दइमारे, कहुँ तौ थाह लगावौ॥
घरके भेदि बैठि द्वार पै, दिनमें घर लुटवावौ।
नारायन मोहि वस्तु न चहिये, लेनेहार दिखावौ॥

(३४२) लावनी

रूपरसिक, मोहन, मनोज-मन-हरन, सकल-गुन-गरबीले।
छैल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥ टे

न-जटित सिर मुकुट लटक रहि सिमट स्याम लट घुँघरारी ।
ल विहारी कन्हैयालाल, चतुर, तेरी बलिहारी ॥
लक मोती कान कपोलन झल बनी निरमल प्यारी ।
ोति उज्यारी, हमैं हरबार दरस दै गिरिधारी ॥
ज्जुछटा-सी दंतछटा मुख देखि सरदससि सरमीले ।
न-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले ॥

र हसन, मृदु वचन तोतले, वय किसोर भोली-भाली ।
रत चोचले, अमोलक अधर पीक रच रही लीला ॥
ल गुलाब चिबुक सुंदरता, रुचिर कंठछबिबनमाली ।
र सरोजमें, बुंद मेहँदी अति अमंद है प्रतिपाली ॥
लछरी-सी नरम कमर करधनीसब्द है तुरसीले ।
ल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले ॥
गुली झीन जरीपट कछनी, स्यामल गात सुहात भले ।
ाल निराली, चरन कोमल पंकजके पात भले ॥
ग नूपुर झनकार परम उत्तमजसुमतिके तात भले ।
ग सखनके, जमुनतट गो-बछरान चरात भले ॥
ज-जुवतिनको प्रेम निरखि कर घर-घर माखन गटकीले ।
ल-छबीले, चपललोचन चकोर चित चटकीले ॥
वें बाग बिलास चरित हरि सरद-रैन-रस रास करें ।
निजन मोहैं, कृष्ण कंसादिक खल-दल नास करें ॥
ारिधारी महाराज सदा श्रीब्रजबृन्दावन वास करें ।
रिचरित्रकों स्रवन सुन-सुन करि अति अभिलाष करें ॥

हाथ जोरि करि करे वीनती 'नारायन' दिल दरदीले।
छैल-छवीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥

(३४३)कालिंगड़ा

मूरख, छाड़ि वृथा अभिमान ।
औसर वीती चल्यो है तेरी, दो दिनको मेहमान॥
भूप अनेक गये पृथिवीपर, रूप तेज बलवान।
कौन बच्यो या काल ब्याल तें मिटि गये नाम निसान॥
धवल धाम, धन, गज, रथ, सेना नारी चंद्र समान।
अंतसमै सबहीकों तजिकें, जाय बसे समसान॥
तजि सतसंग भ्रमत बिषयनमें, जा विधि मरकट स्वान।
छिन भरि बैठि न सुमिरन कीन्हों, जासों होय कल्यान॥
रे मन मूढ़, अनत जनि भटकै, मेरी कह्यौ अब मान।
नारायन ब्रजराज कुँवरसों, बेगहि करि पहिचान॥

(३४४)

टेर सुनों ब्रजराज-दुलारे ।
दीन मलीन हीन सब गुनते, आप परयो हौं द्वार तिहारे॥
काम क्रोध अरु कपट मोह मद, सो जाने प्रीतम प्यारे।
भ्रमत रह्यों सँग इन बिषयनके, तुव पदकमल न मैं उर धारे॥
कौन कुकर्म किये नहि मैंने, जो गये भूल सो लिये उधारे।
ऐसो सेप भरी रचि पचिकें चकित भये लखिकै बनिजारे॥
अब तो एक बार कहो हँसिके, आजहिते तुम भये हमारे।
वाहि कृपाते नारायनको बेगि लगैगी नाव किनारे॥

ललितकिशोरी

(३४५) झँझोटी

मन, पछितैहौ भजन बिनु कीने ।
लत कछु काम न आवै, कमल-नयन-गुन चित बिनु दीने ॥ १ ॥
ौ यह जगत सँगाती, तात-मात अपने सुख भीने ।
किसोरी दुंद मिटै ना, आनँदकंद बिना हरि चीने ॥ २ ॥

(३४६) गौरी

मुसाफिर, रैन रही थोरी ।
ागु-जागु सुख-नींद त्यागि दै, होत वस्तुकी चोरी ॥
ंजिल दूरि भूरि भवसागर, मान क्रूर मरि मोरी ।
ालितकिसोरी हाकिमसों डरु, करै जोर बरजोरी ॥

(३४७) पीलू

अब का सोवै सखि ! जाग जाग ।
ेन बिहात जातरस-बिरियाँ, चोलीके बँद ताग ताग ॥
ोवन उमँग सकल कर बौरी, आन-कान सब त्याग त्याग ।
ालितकिसोरी लूट अनँदवा, पीतमके गर लाग लाग ॥

(३४८)

लटक लटक मनमोहन आवनि ॥
ूमि झूमि पग धरत भूमिपर गति मातंग लजावनि ॥
ोखुर-रेनुअंग अँग मंडित उपमा दृग सकुचावनि ।
व घनपै मनु झीन बदरिया, सोभा-रस बरसावनि ॥
िगसति मुखलौं कानि दामिनी दसनावलि दमकावनि ।
ीच-बीच घनघोर माधुरी, मधुरी बेन बजावनि ॥

उरझत पट नूपुरसों पाछे झुकि कै सुरझावै।
ललितकिसोरी ललितलाड़िली, दृग संकेत बतावै॥

(३५६) खमाच

नैन चकोर, मुखचंदहूको वारि डारौं,
वारि डारौं चित्तहि मनमोहन चितचोरपै।
प्रानहूकों वारि डारौं हँसन दसन लाल,
हेरन कुटिलता औरु लोचनकी कोरपै॥
वारि डारौं मनहि सुअंग अंग स्यामा स्याम,
महल मिलाप रस रासकी झकोरपै।
अतिहि सुघर वर सोहत त्रिभंगीलाल,
सरबस वारौं वा ग्रावाकी मरोरपै॥

(३५७)

अब तौ तेरिय हाथ बिकानी।
मृदु बोलन मुसक्यान माधुरी, तन मन नैन समानी॥
लोक-लाज, कुल-कानि तजी सब, जामें तुव रुचि चीनी।
धरम करम व्रत नेम सबै सो, तोई रँग रस भीनी॥
तुव कारन यह भेष बनायो प्रगट उघरि करि नाची।
नाउँ कुनाउँ धरो किन कोऊ हौं नाहिन मति काँची॥
होनी होय सो होय भले ही, तन मन लगन लगी है।
ललितकिसोरी लाल तिहारे, मति अनुराग पगी है।

(३५८) अल्हैया

मैं तुव पदतर रेनु रसीली।
तेरी सरवरि कौन करि सकै, प्रेममई मूरति गरबीली॥

कोटिहु प्रान वारनें करिकै उरिनि न तोसों प्रीति रँगीली ।
अपनी प्रेम छटा, करुना करि दीजै दान दयाल छबीली ॥
का मुख करौं बड़ाई राई, ललितकिसोरी केलि हठीली ।
प्रीति दसांस सतांस तिहारी, मोमें नाहिन नेह नसीली ॥

(३५९) प्रभाती

कमलमुख खोलो आजु पियारे ।
बिगसित कमल कुमोदिनि मुकलित, अलिगन मत्त गुंजारे ।
प्राची दिसि रवि थार आरती लिये ठनी निवछारे ॥
ललितकिसोरी सुनि यह बानी कुरकुट बिहद पुकारे ।
रजनी राज बिदा माँगै बलि निरखौ पलक उघारे ॥

(३६०) अल्हैया

अब कुलकानि तजे ही बनैगी ।
ओट सत कोटि कलप सम, बिछुरत हिये कटारि हनैगी ॥ १ ॥
तकिसोरी अंत एक दिन, तजिबेई जब तान तनैगी ।
का सोच देहु तिल अंजुलि, लेहु अंक रसकेलि छनैगी ॥ २ ॥

दादूदयाल

(३६१) गौरी

मेरे मन भैया राम कहौ रे ॥ टेक ॥
रामनाम मोहिं सहजि सुनावैं ।
उनहिं चरन मन कीन रहौ रे ॥ १ ॥
रामनाम ले संत सुहावैं ।
कोई कहै सब सीस सहौ रे ॥ २ ॥

वाहीसों मन जोरे राखौ।
नीकै रासि लिये निवहौ रे॥३॥
कहत सुनत तेरौ कछू न जावे।
पाप निछेदन सोई लहौ रे॥४॥
दादू जन हरि-गुण गाओ।
कालहि जालहि फेरि दहौ रे॥५॥

(३६२)

बिरहणिकौं सिंगार न भावै।
है कोइ ऐसा राम मिलावै॥टेक॥
बिसरे अंजन-मंजन, चीरा।
बिरह-बिथा यह व्यापै पीरा॥१॥
नौ-सत थाके सकल सिंगारा।
है कोइ पीड़ मिटावनहारा॥२॥
देह-गेह नहिं सुद्धि सरीरा।
निसदिन चितवत चातक नीरा॥३॥
दादू ताहि न भावत आना।
राम बिना भई मृतक समाना॥४॥

(३६३)

तौलगि जिनि मारै तूं मोहि।
जौलगि मैं देखौं नहिं तोहि॥टेक॥
इबके बिछुरे मिलन कैसे होइ।
इहि बिधि बहुरि न चीन्है कोइ॥१॥

नदयाल दया करि जोइ।
सब सुख-आनँद तुम सूँ होइ ॥ २ ॥
नम-जनमके बन्धन खोइ।
देखण दादू अहि निशि रोइ ॥ ३ ॥

(३६४)

ग न छाँड़ौं मेरा पावन पीव।
मैं बलि तेरे जीवन जीव ॥टेक॥
ंगि तुम्हारे सब सुख होइ।
चरण-कँवलमुख देखौं तोहि ॥ १ ॥
नेक जतन करि पाया सोइ।
देखौं नैनौं तौ सुख होइ ॥ २ ॥
रण तुम्हारी अंतरि बास।
चरण-कँवल तहँ देहु निवास ॥ ३ ॥
अब दादू मन अनत न जाइ।
अंतर बेधि रह्यो लौ लाइ ॥ ४ ॥

(३६५)

ऐसा राम हमारे आवै।
वार पार कोइ अंत न पावै ॥टेक॥
हलका भारी कह्या न जाइ। मोल-माप नाहिं रह्या समाइ ॥ १ ॥
कीमत लेखा नहिं परिणाम। सब पचि हारे साध सुजाण ॥ २ ॥
आगौ पीछौ परिमित नाहीं। केते पारिष आवहिं जाहीं ॥ ३ ॥
आदि अंत-मधि लखै न कोइ। दादू देखे अचरज होइ ॥ ४ ॥

(३६६)

राम रस मीठा रे, कोइ पीवै साधु सुजाण।
सदा रस पीवै प्रेमसूं, सो अबिनासी प्राण ॥
इहि रस मुनि लागे सबैं, ब्रह्मा-बिसुन-महेस।
सुर नर साधू संत जन, सो रस पीवैं सेस ॥
सिध साधक जोगी-जती, सती सबैं सुखदेव।
पीवत अंत न आवई, ऐसा अलख अभेव ॥
इहि रस राते नामदेव, पीपा अरु रैदास।
पिवत कबीरा नाथ थया, अजहूँ प्रेम पियास ॥
यह रस मीठा जिन पिया, सो रस ही माहिं समाइ।
मीठे मीठा मिलि रह्या, दादू अनत न जाइ ॥

(३६७)

सोई सुहागनि साँच सिंगार। तन-मन लाइ भजै भरतार ॥
भाव-भगत प्रेम-लौ लावै। नारी सोई सुख पावै ॥
सहज सँतोष सील जब आया। तब नारी नाह अमोलिक पाया ॥
तन मन जोबन सौंपि सबदीन्हा। तब कंत रिझाइ आप बस कीन्हा ॥
दादू बहुरि बियोग न होई। पिवसूं प्रीति सुहागनि सोई ॥

(३६८)

तब हम एक भये रे भाई। मोहन मिल साँची मति आई ॥
पारस परस भये सुखदाई। तब दुनिया दुरमत दूरि गमाई ॥
मलयागिरि मरम मिलि पाया। तब बंस बरण-कुल भरम गँवाया ॥
हरिजन नीर निकट जब आया। तब बूँद-बूँद मिल सहज समाया ॥
नाना भेद भरम सब भागा। तब दादू एक रंग रँग लागा ॥

(३६६)

नीर नहावन जोग । अनतहि भरम भूला रे लोग ॥ टेक ॥
तटि न्हाये निर्मल होई । वस्तु अगोचर लखै रे सोइ ॥ १ ॥
घाट अरु तिरिबौ तीर । बैठे तहाँ जगत-गुर पीर ॥ २ ॥
न जार्ण तिनका भेव । आप लखावैं अंतर देव ॥ ३ ॥

(३७०) माली गौड़ी

मेरा छोड़ गंवारा, सिरपर तेरे सिरजनहारा ।
जीव बिचारत नाहीं, क्या ले गइला वंस तुम्हारा ॥ टेक ॥
मेरा कत करता नाहीं, आवत है हंकारा ।
-चक्रसूं खरी परी रे, बिसर गया घर-बारा ॥ १ ॥
तहाँका संयम कीजै, बिकट पंथ गिरधारा ।
रे तन अपना नाहीं, तो कैसे भयो सँसारा ॥ २ ॥

(३७१) कल्यान

ूँ कहा हमारा । जब देख्या नूर तुम्हारा ॥ टेक ॥
तेज घर मेरा । सुख-सागर माँहि वसेरा ॥ १ ॥
मिल अति आनंदा । पाया परमानंदा ॥ २ ॥
त अपार अनंता । खेलैं फाग बसंता ॥ ३ ॥
दि अंत असथाना । दादू सो पहिचाना ॥ ४ ॥

(३७२) कान्हड़ा

पियारे मीत हमारे । निस-दिन देखूँ पाँव तुम्हारे ॥ टेक ॥
हमारी पीव सँवारी । दासि तुम्हारी सो धन वारी ॥ १ ॥
तुझ पाऊँ अंग लगाऊँ । क्यूं समझाऊँ वारण जाऊँ ॥ २ ॥
निहारूँ बाट सँवारूँ । दादू तारूँ तन मन वारूँ ॥ ३ ॥

(३७३) केदारा

अरे मेरा अमर उपावणहार रे। खालिक आशिक तेरा॥
तुमसूं राता तुमसूं माता। तुमसूं लागा रंग रे खालिक॥
तुमसूं खेला तुमसूं मेला। तुमसूं प्रेम-सनेह रे खालिक॥
तुमसूं लैणा तुमसूं दैणा। तुमहीसूं रत होइ रे खालिक॥
खालिक मेरा आशिक तेरा। दादू अनत न जाइ रे खालिक॥

(३७४)

बटाऊ रे चलना आज कि काल।
समझ न देखै कहा सुख सोवै,
रे मन राम सँभाल॥
जैसें तरवर विरख बसेरा,
पंखी बैठे आइ।
ऐसें यह सब हाट पसारा,
आप आप कूं जाइ॥
कोइ नहिं तेरा सजन सँगाती,
जिनि खोवै मन मूल।
यह संसार देखि मत भूलै,
सबही सँवल फूल॥
तन नहिं तेरा, धन नहिं तेरा,
कहा रह्यो इहि लागि।
दादू हरि बिन क्यूं सुख सोवै,
काहे न देखै जागि॥

(३७५)

कोइ जानैं रे मरम माधइया केरौ।
कैसें रहै करै का सजनी प्राण मेरौ॥ टेक॥
कौण बिनोद करत री सजनी, कौणनि संग बसेरौ।
संत-साध गति आये उनके करत जु प्रेम घनेरौ॥ १॥
कहाँ निवास बास कहँ, सजनी गवन तेरौं।
घट-घट माहैं रहै निरंतर, ये दादू नेरौ॥ २॥

(३७६) मारू

क्यों बिसरै मेरा पीव पियारा।
जीवकी जीवन प्राण हमारा॥ टेक॥
क्योंकर जीवैं मीन जल बिछुरें,
तुम बिन प्राण सनेही।
चिंतामणि जब करतें छूटै,
तब दुख पावै देही॥ १॥
माता बालक दूध न देवैं,
सो कैसे करि पीवैं।
निरधनका धन अनत भुलाना,
सो कैसे करि जीवैं॥ २॥
बरखहु राम सदा सुख अमरित,
नीझर निरमल धारा।
प्रेम पियाला भर भर दीजैं,
दादू दास तुम्हारा॥ ३॥

(३७३) केदारा

अरे मेरा अमर उपावणहार रे । खालिक आशिक तेरा ॥
तुमसूँ राता तुमसूँ माता । तुमसूँ लागा रंग रे खालिक ॥
तुमसूँ खेला तुमसूँ मेला । तुमसूँ प्रेम-सनेह रे खालिक ॥
तुमसूँ लैणा तुमसूँ दैणा । तुमहीसूँ रत होइ रे खालिक ॥
खालिक मेरा आशिक तेरा । दादू अनत न जाइ रे खालिक ॥

(३७४)

बटाऊ रे चलना आज कि काल ।
समझ न देखै कहा सुख सोवै,
रे मन राम सँभाल ॥
जैसें तरवर बिरख बसेरा,
पंखी बैठे आइ ।
ऐसें यह सब हाट पसारा,
आप आप कूँ जाइ ॥
कोइ नहिं तेरा सजन सँगाती,
जिनि खोवै मन मूल ।
यह संसार देखि मत भूलै,
सबही सेंबल फूल ॥
तन नहिं तेरा, धन नहिं तेरा,
कहा रह्यो इहिं लागि ।
दादू हरि बिन क्यूँ सुख सोवै,
काहे न देखै जागि ॥

(३७५)

कोइ जानै रे मरम माधइया केरौ।
कैसें रहै करै का सजनी प्राण मेरौ ॥ टेक ॥
कौण बिनोद करत री सजनी, कौणनि संग बसेरौ।
संत-साध गति आये उनके करत जु प्रेम घनेरौ ॥ १ ॥
कहाँ निवास बास कहँ, सजनी गवन तेरौ।
घट-घट माहैं रहै निरंतर, ये दादू नेरौ ॥ २ ॥

(३७६) मारू

क्यों विसरै मेरा पीव पियारा।
जीवकी जीवन प्राण हमारा ॥ टेक ॥
क्योंकर जीवै मीन जल बिछुरें,
तुम बिन प्राण सनेही।
चिंतामणि जब करतै छूटै,
तब दुख पावै देही ॥ १ ॥
माता बालक दूध न देवै,
सो कैसैं करि पीवै।
निरधनका धन अनत भुलाना,
सो कैसे करि जीवै ॥ २ ॥
बरखहु राम सदा सुख अमरित,
नीझर निरमल धारा।
प्रेम पियाला भर भर दीजै,
दादू दास तुम्हारा ॥ ३ ॥

(३७७)

कबहूँ ऐसा बिरह उपावै रे।
पिव विन देखें जीव जावै रे॥ टेक॥
विपत हमारी सुनौ सहेली।
पिव विन चैन न आवै रे॥
ज्यों जल मीन भीन तन तलफै।
पिव विन वज्र बिहावै रे॥ १॥
ऐसी प्रीति प्रेमकी लागै।
ज्यों पंखी पीव सुनावै रे॥
त्यो मन मेरा रहै निसवासुर।
कोइ पीवकूं आणि मिलावै रे॥ २
तौ मन मेरा धीरज धरई।
कोइ आगम आणि जणावै रे॥
तौ सुख जीव दादूका पावै।
पल पिवजी आप दिखावै रे॥ ३

(३७८)

जागि रे सब रैण विहाणी।
जाइ जनम अँजुलीको पाणी॥ टेक
घड़ी घड़ी घड़ियाल बजावै।
जे दिन जाइ सो बहुरि न आवै॥ १
सूरज-चंद कहैं समुझाइ।
दिन-दिन आव घटती जाइ॥ २

सरवर-पाणी तरवर-छाया ।
निसदिन काल गरासै काया ॥ ३ ॥
हंस बटाऊ प्राण पयाना ।
दादू आतम राम न जाना ॥ ४ ॥

(३७९) रामकली

अहो नर नीका है हरिनाम ।
दूजा नहीं नाँउ बिन नीका, कहिले केवल राम ॥टेक॥
निरमल सदा एक अविनासी, अजर अकल रस ऐसा ।
दृढ़ गहि राखि मूल मन माहीं, निरख देखि निज कैसा ॥ १ ॥
यह रस मीठा महा अमीरस, अमर अनूपम पीवै ।
राता रहै प्रेमसूँ माता, ऐसैं जुगि जुगि जीवै ॥ २ ॥
दूजा नहीं और को ऐसा, गुर अंजन करि बूझै ।
दादू मोटे भाग हमारे, दास बमेकी बूझै ॥ ३ ॥

(३८०)

पंडित राम मिलै सो कीजै ।
पढ़ि-पढ़ि वेद पुराण बखाने,
सोई तत कहि दीजै ॥टेक॥
आतम रोगी बिपय बियाधी,
सोइ करि औषध सारा ।
परसत प्राणी होइ परम मुख,
छूटै सब संसारा ॥ १ ॥
ये गुण इंद्री अगिनि अपारा
तासन जले सरीरा ।

तन मन सीतल होइ सदा सुख,
सो जल नावौं नीरा ॥ २

सोई मारग हमहिं वतावौं,
जिहि पँथ पहुँचै पारा।

भूल न परै उलट नहिं आवै,
सो कुछ करहु विचारा ॥ ३

गुर उपदेस देहु कर दीपक,
तिमर मिटै सब सूझै।

दादू सोई पंडित ग्याता,
राम-मिलनकी बूझै ॥

(३८१) आसावरी

तूं हीं मेरे रसना तूं ही मेरे वैना।
तूं ही मेरे स्रवना तूं ही मेरे नैना ॥

तूं हीं मेरे आतम कँवल मँझारी।
तूं हीं मेरे मनसा तुम्ह परिवारी ॥

तूं हीं मेरे मनही तूं हीं मेरे साँसा।
तूं हीं मेरे सुरतैं प्राण निवासा ॥

तूं हीं मेरे नख-सिख सकल सरीरा।
तूं हीं मेरे जिय रे ज्यूं जलनीरा ॥

तुम्ह विन मेरे और कोइ नाहीं।
तूं हीं मेरी जीवनि दादू माँहीं ॥

(३८२)

बाबा नाहीं दूजा कोई।
एक अनेकन नाँव तुम्हारे, मो पै और न होई।

अलख इलाही एक तूं तूंहीं राम रहीम।
तूं हीं मालिक मोहना, कैंसो नाँउ करीम ॥ १ ॥
साँई सिरजनहार तूं, तूं पावन तूं पाक।
तूं काइम करतार तूं, तूं हरि हाजिर आप ॥ २ ॥
रमिता राजिक एक तूं, तूं सारँग सुबहान।
कादिर करता एक तूं, तूं साहिब सुल्तान ॥ ३ ॥
अविगत अल्लह् एक तूं, गनी गुसाईं एक।
अजब अनूपम आप है, दादू नांव अनेक ॥ ४ ॥

(३८३) देवगंधार

मन मूरिखा तैं यौंहीं जनम गँवायौ।
साँईंकेरी सेवा न कीन्हीं, इहि कलि काहेकूं आयौ ॥टेक॥
जिन बातन तेरौ छूटिक नाहीं, सोई मन तेरौ भायौ।
कामी ह्वै विषयासँग लाग्यो रोम रोम लपटायौ ॥ १ ॥
कुछ इक चेति बिचारी देखौ, कहा पाप जिय लायौ।
दादूदास भजन करि लीजै, सुपिने जग डहकायौ ॥ २ ॥

(३८४) परंज

नूर रह्या भरपूर, अमीरस पीजिये।
रस मौहैं रस होई, लाहा लीजिये ॥टेक॥
परगट तेज अनंत, पार नहिं पाइये।
झिलमिल-झिलमिल होइ, तहाँ मन लाइये ॥ १ ॥
सहजैं सदा प्रकास, ज्योति जल पूरिया।
तहाँ रहै निज दास, सेवग सूरिया ॥ २ ॥
सुख-सागर वार न पार, हमारा बास है।
हंस रहैं ता माहिं, दादू दास है ॥ ३ ॥

(३८५) टोड़ी

तू साँचा साहिब मेरा ।
करम करीम कृपाल निहारी, मैं जन बंदा तेरा ॥टेक॥
तुम दीवान सबहिनकी जानौ, दीनानाथ दयाला ।
दिखाइ दीदार मौज बंदेकूं, काइम करौ निहाला ॥
मालिक सबै मुलिकके साँइ, समरथ सिरजनहारा ।
खैर खुदाइ खलकमें खेलंत, दे दीदार तुम्हारा ॥
मैं सिकस्ता दरगह तेरी हरि हजूर तूं कहिये ।
दादू द्वारै दीन पुकारै, काहे न दरसन लहिये ॥

(३८६) बिलावल

सोई साध-सिरोमणि, गोबिंद गुण गावै ।
राम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै ॥टेक॥
मिथ्या मुख बोलै नहीं पर-निंद्या नाहीं ।
औगुण छोड़ै गुण गहै, मन हरिपद-माहीं ॥ १
नरवैरी सब आतमा, पर आतम जानै ।
सुखदाई समता गहै, आपा नहिं आनै ॥ २
आपा पर अंतर नहीं, निरमल निज सारा ।
सतवादी साचा कहै, लै लीन बिचारा ॥ ३
निरभै भज न्यारा रहै, काहू लिपत न होई ।
दादू सब संसारमें, ऐसा जन कोई ॥ ४

(३८७) गौरी

हिंदू तुरक न जाणौं दोइ ।
साँई सबका सोई है रे, और न दूजा देखौं कोइ ॥टेक॥

ट-पतंग सबै जोनिनमें, जल-थल संगि समाना सोइ।
र पैगम्बर देव-दानव, मीर-मलिक मुनि-जनकौं मोहि ॥ १ ॥
ता है रे सोई चीन्हौं, जिन वै क्रोध करै रे कोइ।
तैं आरसी मंजन कीजै, राम-रहीम देही तन धोइ ॥ २ ॥
ईकेरीं सेवा कीजै पायौ धन काहेकौं खोइ।
दू रे जन हरि भज लीजै, जनम-जनम जे सुरजन होइ ॥ ३ ॥

रैदास

(३८८)

गाइ गाइ अब का कहि गाऊँ।
गावनहार को निकट बताऊँ ॥ टेक ॥
बलग है या तनकी आसा, तबलग करै पुकारा।
व मन मिल्यौ आस नहिं तनकी, तब को गावनहारा ॥ १ ॥
बलग नदी न समुद समावै, तबलग बढ़ै हँकारा।
न मन मिल्यो राम-सागरसों, तब यह मिटी पुकारा ॥ २ ॥
बलग भगति मुकतिकी आसा, परम तत्व सुनि गावै।
हँ-जहँ आस धरत है यह मन, तहँ-तहँ कछू न पावै ॥ ३ ॥
ड़ै आस निरास परमपद, तब सुख सति कर होई।
ह रैदास जासों और करत है, परम तत्त्व अब सोई ॥ ४ ॥

(३८९)

ऐसो कछु अनुभव कहत न आवै।
साहिब मिलै तो को बिलगावै ॥ टेक ॥

सबमें हरि है हरिमें सब है, हरि अपनो जिन जाना।
साखी नहीं और कोइ दूसर, जाननहार सयाना ॥ १
बाजीगरसों राचि रहा, बाजीका मरम न जाना।
बाजी झूठ साँच बाजीगर, जाना मन पतियाना ॥ २
मन थिर होइ तो कोइ न सूझै, जानै जाननहारा।
कह रैदास बिमल बिवेक सुख, सहज सरूप सँभारा ॥ ३

(३९०)

जब रामनाम कहि गावैगा, तब भेद अभेद समावैगा ॥ टेक
जे सुख ह्वै या रसके परसे, सो सुखका कहि गावैगा ॥ १
गुरु परसाद भई अनुभौ मति, विस अमरित सम धावैगा ॥ २
कह रैदास मेटि आपा-पर, तब वा ठौरहि पावैगा ॥ ३

(३९१)

रामा हो जगजीवन मोरा।
तूँ न विसारि राम मैं जन तोरा ॥ टेक
संकट सोच पोच दिनराती।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥ १ ॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव।
चरण न छाड़ौं जाव सो जाव ॥ २ ॥
कह रैदास कछु देहु अलंबन।
वेगि मिलौ जनि करो बिलंबन ॥ ३ ॥

(३९२)

अब हम खूब वतन घर पाया।
ऊँचा खेड़ा सदा मेरे भाया ॥ टेक ॥

बेगमपूर सहरका नाम।
फिकर अंदेश नहीं तेहि ग्राम ॥ १ ॥
नहिं जहाँ सांसत लानत मार।
हैफ न खता न तरस जवाल ॥ २ ॥
आव न जान रहम औजूद।
जहाँ गनी आप बसै माबूद ॥ ३ ॥
जोई सैलि करै सोई भावै।
मरहम महलमें को अटकावै ॥ ४ ॥
कह रैदास खलास चमारा।
जो उस सहर सो मीत हमारा ॥ ५ ॥

(३६३)

राम मैं पूजा कह चढ़ाऊँ।
फल अरु फूल अनूप न पाऊँ ॥टेक॥
थर तर दूध जो बछरू जुठारी।
पुहुप भँवर जल मीन बिगारी ॥ १ ॥
मलयागिरि बेधियो भुअंगा।
विष अमृत दोउ एकै संगा ॥ २ ॥
मन ही पूजा मन ही धूप।
मन ही सेऊँ सहज सरूप ॥ ३ ॥
पूजा अरचा न जानूं तेरी।
कह रैदास कवन गति मोरी ॥ ४ ॥

(३६४)

देहु कलाली एक पियाला।
ऐसा अवधू है मतवाला ॥टेक॥

सबमें हरि है हरिमें सब है, हरि अपनो जिन जाना।
साखी नहीं और कोइ दूसर, जाननहार सयाना ॥ १
बाजीगरसों राचि रहा, बाजीका मरम न जाना।
बाजी झूठ साँच बाजीगर, जाना मन पतियाना ॥ २
मन थिर होइ तो कोइ न सूझै, जानै जाननहारा।
कह रैदास विमल विवेक सुख, सहज सरूप सँभारा ॥ ३

(३९०)

जब रामनाम कहि गावैगा, तब भेद अभेद समावैगा ॥ टेक
जे सुख ह्वै या रसके परसे, सो सुखका कहि गावैगा ॥ १
गुरु परसाद भई अनुभौ मति, विस अमरित सम धावैगा ॥ २
कह रैदास मेटि आपा-पर, तब वा ठौरहि पावैगा ॥ ३

(३९१)

रामा हो जगजीवन मोरा।
तूँ न विसारि राम मैं जन तोरा ॥ टेक
संकट सोच पोच दिनराती।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥ १
हरहू बिपति भावै करहु सो भाव।
चरण न छाड़ौं जाव सो जाव ॥ २
कह रैदास कछु देहु अलंवन।
वेगि मिलो जनि करो विलंवन ॥ ३

(३९२)

अब हम खूब वतन घर पाया।
ऊँचा खेड़ा सदा मेरे भाया ॥ टेक ।

बेगमपूर सहरका नाम।
फिकर अंदेश नहीं तेहि ग्राम ॥ १ ॥
नहिं जहाँ साँसत लानत मार।
हैफ न खता न तरस जवाल ॥ २ ॥
आव न जान रहम औजूद।
जहाँ गनी आप बसै मादूद ॥ ३ ॥
जोई सैलि करै सोई भावै।
मरहम महलमें को अटकावै ॥ ४ ॥
कह रैदास खलास चमारा।
जो उस सहर सो मीत हमारा ॥ ५ ॥

(३६३)

राम मैं पूजा कह चढ़ाऊँ।
फल अरु फूल अनूप न पाऊँ ॥टेक॥
थर तर दूध जो बछरू जुठारी।
पुहुप भँवर जल मीन बिगारी ॥ १ ॥
मलयागिरि बेधियो भुअंगा।
बिष अमृत दोउ एकै संगा ॥ २ ॥
मन ही पूजा मन ही धूप।
मन ही सेऊँ सहज सरूप ॥ ३ ॥
पूजा अरचा न जानूँ तेरी।
कह रैदास कवन गति मोरी ॥ ४ ॥

(३६४)

देहु कलाली एक पियाला।
ऐसा अवधू है मतवाला ॥टेक॥

हे रे कलाली तैं क्या किया !
सिरका-सा तैं प्याला दिया ॥ १ ॥
कहँ कलाली प्याला देऊँ ।
पीवनहारेका सिर लेऊँ ॥ २ ॥
चंद-सूर दोऊ सनमुख होई ।
पीवै प्याला मरै न कोई ॥ ३ ॥
सहज सुन्नमें भाठी सखे ।
पावै रैदास गुरुमुख दखे ॥ ४

(३६५)

पार गया चाहै सब कोई ।
रहि उर वार पार नहिं होई ॥टेक
पार कहै उर वारसे पारा ।
बिन पद-परचे भ्रमै गँवारा ॥ १
पार परम पद मंझ मुरारी ।
तामें आप रमै बनवारी ॥ २
पूरन ब्रह्म बसै सब ठाईं ।
कह रैदास मिलै सुख साईं ॥ ३

(३६६)

यह अंदेस सोच जिय मेरे ।
निसिवासर गुन गाऊँ तेरे ॥ टेक
तुम चिंतित मेरी चितहु जाई ।
तुम चिंतामनि हो इक नाईं ॥ १

भगत-हेत का का नहिं कीन्हा।
हमरी बेर भए बलहीना ॥ २ ॥
कह रैदास दास अपराधी।
जेहि तुम द्रवौ सो भगति न साधी ॥ ३ ॥

(३९७)

जो तुम तोरौ राम मैं नाहिं तोरौ।
तुमसे तोरि कवनसे जोरौ ॥ टेक ॥
तीरथ वरत न करौं अंदेसा।
तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥ १ ॥
जहँ तहँ जाओं तुम्हरी पूजा।
तुमसा देव और नहिं दूजा ॥ २ ॥
मैं अपनो मन हरिसों जोरयों।
हरिसों जोरि सवन सों तोरयों ॥ ३ ॥
सवही पहर तुम्हारी आसा।
मन क्रम वचन कहै रैदासा ॥ ४ ॥

(३९८)

सो कहा जानै पीर पराई।
जाके दिलमें दरद न आई ॥ टेक ॥
दुखी दुहागिनि होइ पियहीना,
नेह निरति करि सेव न कीना।
स्याम-प्रेमका पंथ दुहेला,
चलन अकेला कोई संग न हेला ॥ १ ॥

सुखकी सार सुहागिनि जानै,
तन-मन देय अंतर नहिं आनै।
आन सुनाय और नहिं भावै,
राम रसायन रसना चाखै॥ २॥
खालिक तो दरमंद जगाया,
बहुत उमेद जवाब न पाया।
कह रैदास कवन गति मेरी,
सेवा बंदगी न जानूं तेरी॥ ३॥

(३९९) गौड़

आज दिवस लेऊँ बलिहारा।
मेरे घर आया रामका प्यारा॥ टेक॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन।
हरिजन बैठे हरिजस गावन॥ १॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ।
तन-मन-धन उन ऊपरि वारूँ॥ २॥
कथा कहैं अरु अरथ विचारैं।
आप तरैं औरन को तारैं॥ ३॥
कह रैदास मिलैं निज दासा।
जनम जनमके काटैं पासा॥ ४॥

(४००)

कवन भगतिते रहै प्यारो पाहुनो रे।
घर घर देखों मैं अजब अभावनो रे॥ टेक॥

ऽ मैला कपड़ा केता एक धोऊँ।
आवै आवै नींदहि कहाँलों सोऊँ॥ १ ॥
ज्यों जोड़े त्यों त्यों फाटै।
झूठै सबनि जरै उड़ि गये हाटै॥ २ ॥
ह रैदास परी जब लेख्यौ।
जोई जोई कियो रे सोई सोई देख्यौ॥ ३ ॥

(४०१)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी॥ टेक॥
प्रभुजी, तुम चन्दन, हम पानी।
जाकी अँग अँग बास समानी॥ १ ॥
प्रभुजी, तुम घन बन, हम मोरा।
जैसे चितवत चंद चकोरा॥ २ ॥
प्रभुजी, तुम दीपक, हम बाती।
जाकी जोति बरै दिन राती॥ ३ ॥
प्रभुजी, तुम मोती, हम धागा।
जैसे सोनहि मिलत सुहागा॥ ४ ॥
प्रभुजी, तुम स्वामी, हम दासा।
ऐसी भगति करै रैदासा॥ ५ ॥

मलूकदास

(४०२)

समान दाता कोउ नाहीं। सदा बिराजैं संतनमाहीं॥ १
बिसंभर बिस्व जिआवैं। सांझ बिहान रिजिक पहुँचावैं॥

देइ अनेकन मुखपर ऐने। औगुन करै सो गुन करि माने॥
काहू भाँति अजार न देई। जाही को अपना कर लेई॥
घरी घरी देता दीदार। जन अपनेका खिजमतगार॥
तीन लोक जाके औसाफ। जनका गुनह करै सब माफ॥
गरुवा ठाकुर है रघुराई। कहैं मलूक क्या करूँ बड़ाई॥

(४०३)

सदा सोहागिन नारि सो, जाके राम भतारा।
मुख माँगे सुख देत है, जगजीवन प्यारा॥
कवहुँ न चढ़ै रँडपुरा, जाने सब कोई।
अजर अमर अबिनासिया, ताकौ नास न होई॥
नर-देही दिन दोयकी, सुन गुरुजन मेरी।
क्या ऐसोंका नेहरा, मुए बिपति घनेरी॥
ना उपजै ना बीनसै, संतन सुखदाई।
कहैं मलूक यह जानिकै, मैं प्रीति लगाई॥

(४०४)

अब तेरी सरन आयो राम॥
जबै सुनियो साधके मुख, पतित पावन नाम॥
यही जान पुकार कीन्हीं अति सतायो काम॥
बिषयसेती भयो आजिज कह मलूक गुलाम॥

(४०५)

साँचा तू गोपाल, साँच तेरा नाम है।
जहवाँ सुमिरन होय, धन्य सो ठाम है॥

ाँचा तेरा भगत, जो तुझको जानता ।
तीन लोकको राज़, मनें नहिं आनता ॥ २ ॥
झूठा नाता छोड़ि, तुझै लौ लाइया ।
सुमिरि तिहारो नाम, परम पद पाइया ॥ ३ ॥
जिन यह लाहा पायो, यह जग आय कै ।
उतरि गयो भवपार, तेरो गुन गाइ कै ॥ ४ ॥
तुही मातु तुही पिता, तुही हित वन्धु है ।
कहत मलूका दास, विना तुझ धुंध है ॥ ५ ॥

(४०६)

ा मिलावै जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
जो प्यासी पीवकी, रटत फिरौं पिउ पीव ।
जोगिया नहिं मिलिहै हो, तो तुरत निकासूं जीव ॥ १ ॥
जी अहेरी मैं हिरनी, गुरु मारैं प्रेमका बान ।
ह लागै सोई जानई हो, और दरद नहिं जान ॥ २ ॥
मलूक सुनु जोगिनी रे, तनहिंमें मनहिं समाय ।
प्रेमके कारने जोगी सहज मिला मोहिं आय ॥ ३ ॥

(४०७)

तेरा मैं दीदार-दीवाना ।
घड़ी घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहेब रहमाना ॥
हुआ अलमस्त खबर नहिं तनकी, पीया प्रेम-प्याला ।
ठाढ़ होऊँ तो गिरगिर परता, तेरे रँग मतवाला ॥
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घरका बंदाजादा ।
नेकीकी कुलाह सिर दिये, गले पैरहन साजा ॥

तौजी औरनिमाज न जानूँ ना जानूँ धरि रोजा।
बाँग जिकर तबहीसे बिसरी, जबसे यह दिल खोजा॥
कह मलूक अब कजा न करिहौं दिलहीसों दिल लाया।
मक्का हज्ज हियेमें देखा, पूरा मुरसिद पाया॥

(४०८).

दरद-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा।
एक अकीदा लै रहे, ऐसे मन धीरा॥
प्रेमी पियाला पीवते, बिसरे सब साथी।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक।
बंधन तोड़े मोहके, फिरते निहसंक॥
साहेब मिल साहेब भये, कछु रही न तमाई।
कहैं मलूक किस घर गये, जहँ पवन न जाई॥

(४०९)

हमसें जनि लागै तू माया।
थोरेसे फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया॥
अपनेमें है साहेब हमारा, अजहूँ चेतु दिवानी।
काहू जनके बस परि जैहो, भरत मरहुगी पानी॥
तरहै चितै लाज करु जनकी, डारु हाथ की फाँसी।
जनतें तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अविनासी॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई।
जो जन उबरै राम नाम कहि, तातें कछु न बसाई॥

(४१०)

नाम हमारा खाक है, हम खाकी बन्दे।
खाकही ते पैदा किये, अति गाफ़िल गन्दे ॥ १ ॥
कबहुँ न करते बंदगी, दुनियामें भूले।
आसमानको ताकते, घोड़े चढ़ि फूले ॥ २ ॥
जोरू-लड़के खुस किये, साहेब बिसराया।
राह नेकीकी छोड़िके, बुरा अमल कमाया ॥ ३ ॥
हरदम तिसको यादकर, जिन वजूद सँवारा।
बै खाक दर खाक है, कुछ समुझ गँवारा ॥ ४ ॥
ाथी घोड़े खाकके, खाक खानखानी।
हैं मलूक रहि जायगा, औसाफ निसानी ॥ ५ ॥

(४११)

अजीज ईमान तू, काहेको खोवै।
हय राखै दरगाहमें, तो प्यारा होवै ॥ १ ॥
ह दुनिया नाचीजके, जो आसिक होवै।
लै जात खोदायको सिर धुनि-धुनि रोवै ॥ २ ॥
त दुनिया नाचीजके, तालिब हैं कुत्ते।
ज्जतमें मोहित हुए, दुख सहे बहूते ॥ ३ ॥
बलगि अपने आपको, तहकीक न जानै।
स मलूका रब्बको, क्योंकर पहिचानै ॥ ४ ॥

(४१२)

ब न कीजै बावरे, हरि गरब प्रहारी।
बहितें रावन गया, पाया दुख भारी ॥ १ ॥

जरन खुदी रघुनाथके, मन नाहिं सुहाती।
जाके जिय अभिमान है, ताकी तोरत छाती॥२॥
एक दया और दीनता, ले रहिये भाई।
चरन गहौ जाय साधके, रीझै रघुराई॥३॥
यही बड़ा उपदेश है, पर द्रोह न करिये।
कह मलूक हरि सुमिरिके, भौसागर तरिये॥४॥

(४१३)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतमका जारे।
ना वह रीझै धोती टाँगे, ना कायाके पखारे॥
दाया करै धरम मन राखै, घरमें रहे उदासी।
अपना-सा दुख सबका जानै, ताहि मिलै अविनासी॥
सहै कुसब्द बादहूँ त्यागै, छाँड़ै गरब गुमाना।
यही रीझ मेरे निरंकारकी, कहत मलूक दिवाना॥

(४१४)

राम कहो राम कहो, राम कहो बावरे।
अवसर न चूक भोंदू, पायो भलो दाँव रे॥१॥
जिन तोकों तन दीन्हों, ताको न भजन कीन्हों।
जनम सिरानो जात, लोहे कैसो ताव रे॥२॥
रामजीको गाय, गाय रामजीको रिझाव रे।
रामजीके चरन-कमल, चित्तमाहिं लाव रे॥३॥
कहत मलूकदास, छोड़ दे तैं झूठी आस।
आनँद मगन होइके, हरिगुन गाव रे॥४॥

(४१५)

निबन्धु दीनानाथ, मेरी तन हेरिये ॥ टेक ॥
ाई नाहिं, बन्धु नाहिं, कुटुम-परिवार नाहिं,
सा कोई मित्र नाहिं, जाके ढिग जाइये ॥ १ ॥
ोनेकी सलैया नाहिं, रूपेका रुपैया नाहिं,
ौड़ी-पैसा गाँठ नाहिं, जासे कछू लीजिये ॥ २ ॥
तो नाहिं, बारी नाहिं, बनिज-ब्योपार नाहिं,
सा कोई साहु नाहिं, जासों कछु माँगिये ॥ ३ ॥
हत मलूकदास, छोड़ि दे पराई आस,
ामधनी पाइकै अब काकी सरन जाइये ॥ ४ ॥

चरनदास

(४१६) सोठना

सुन सुरत रँगीली हो कि हरि-सा यार करौ ॥ टेक ॥
जब छूटै बिघन बिकार कि भौ जल तुरत तरौ ॥ १ ॥
तुम त्रैगुन छैल बिसारि गगनमें ध्यान धरौ ॥ २ ॥
रस अमरित पीवो हो कि बिषया सकल हरौ ॥ ३ ॥
करि सील-संतोष सिंगार छिमाकी माँग भरौ ॥ ४ ॥
अब पाँचों तजि लगवार अमर घर पुरुष वरौ ॥ ५ ॥
कहै चरनदास गुरु देखि पियाके पाँव परौ ॥ ६ ॥

(४१७)

टुक रंगमहलमें आव कि निरगुन सेज बिछी।
जहँ पवन गवन नहिं होय जहाँ जा सुरति बसी ॥ १ ॥

जहँ त्रैगुन बिन निरवान जहाँ नहिं सूर-ससी।
जहँ हिल मिलकै सुख मान मुकतिकी होय हँसी ॥ २ ॥
जहँ पिय-प्यारी मिलि एक कि आसा दुईनसी।
जहँ चरनदास गलतान कि सोभा अधिक लसी ॥ ३ ॥

(४१८)

टुक निगुन छैला सूँ, कि नेह लगाव री।
जाकी अजर अमर है देश, महल बेगमपुर री ॥ १ ॥
जहँ सदा सुहागिनि होय, पियासूँ मिलि रहु री।
जहँ आवागमन न होय, मुकति चेरी तेरी ॥ २ ॥
कहँ चरनदास गुरु मिले, सोई ह्वाँ रहु बौरी।
तब सुख सागरके बीच, कलहरी ह्वै रहु री ॥ ३ ॥

(४१९) हिंडोला हेली

तरसै मेरे नैन हेली, राम मिलन कब होयगो ॥ टेक ॥
पिय दरसन बिन क्यों जिऊँ री हेली कैसे पाऊँ चैन।
तीर्थ वर्त बहुत किये री चित दै सुने पुरान ॥ १ ॥
बाट निहारत ही रहूँ री हेली, सुधि नहिं लीनी आय।
यह जोवन यों ही चलो री चालो जनम सिराय ॥ २ ॥
विरहा दल साजे रहे री हेली, छिन-छिनमें दुख देहि।
मन लालनके बस परी, भई भाकन्सी देहि ॥ ३ ॥
गुरु सुकदेव कृपा करी जी हेली, दीजै विरह छुटाय।
चरनदास पियनू मिले सरन तुम्हारी धाय ॥ ४ ॥

(४२०)

मो विरहिनकी बात हेली, बिरहिन होइ जानिहै।
नैन बिछोहा जानती री हेली, बिरहै कीन्हों घात ॥ टेक ॥

या तनकूं विरहा लगो री हेली, ज्यों घुन लागो काठ।
निसदिन खाये जातु है, देखूं हरिकी वाट॥
हिरदेमें पावक जरै री हेली, तपि नैना भय लाल।
आसूंपर आसूं गिरै, यही हमारो हाल॥
प्रीतम बिन कल ना परै री हेली, कलकल सब अकुलाहिं।
डिगी परूँ, सत ना रहौ कब पिय पकरै बाँहि॥
गुरु सुकदेव दया करें री हेली, मोहि मिलावै लाल।
चरनदास दुख सब भजें, सदा रहूँ पति नाल॥

(४२१) होली

प्रेमनगरके माँहि होरी होय रही।
जब सों खेली हमहूँ चित दे, आपनहूँ को खोय रही॥
बहुतन कुल अरु लाज गँवाई, रही न कोई काम।
नाचि उठें, कभी गावन लगें, भूले-तन-धन-धाम॥
बहुतनकी मति रंग रँगी है, जिनकी लागी प्रेम।
बहुतनकों अपनी सुधि नाहीं कौन करै अस नेम।
बहुतनकी गदगद ही बानी, नैनन नीर ढराय॥
बहुतनको बौरापन लागो ह्वाँकी कही न जाय॥
प्रेमीकी गति प्रेमी जानै, जाके लागी होय।
चरनदास उस नेहनगरकी, सुकदेवा कहि सोय॥

(४२२) मंगल

समझ रस कोइक पावै हो।
गुरु बिन तपन बुझै नहीं, प्यासा नर जावै हो॥ १॥
बहुत मनुप ढूंढ़त फिरैं अंधरे गुरु सेवैं हो।
उनहूँकों सूझै नहीं, औरनको देवैं हो॥ २॥

अँधरेकों अँधरा मिले नारीकों नारी हो।
ह्वाँ फल कैसे होयगा, समझैं न अनारी हो॥
गुरु सिष दोऊ एक से एकै व्यवहारा हो।
गयो भरोसे डूबिकै वँ, नरक मँझारा हो॥
सुकदेव कहैं चरनदाससूँ, इनका मत कूरा हो।
ग्यान मुकति जब पाइये, मिलै सतगुरु पूरा हो॥

(४२३) सोरठ

वह पुरुपोत्तम मेरा प्यार। नेह लगी टूटै नहिं तार।
तीरथ जाऊँ न व्रत करूँ। चरनकमलको ध्यान धरूँ।
प्रानपियारे मेरेहि पास। बन-बन माहिं न फिरूँ उदास।
पढ़ूँ न गीता-वेद-पुरान। एकहि सुमिरूँ श्रीभगवान।
औरनकों नहिं नाऊँ सीस। हरि ही हरि है बिस्वे बीस।
काहूकी नहिं राखूँ आस। तृस्ना काटि दई है फाँस।
उद्यम करूँ न राखूँ दाम। सहजहिं ह्वै रहैं पूरन काम।
सिद्धि मुकति फल चाहौं नाहिं। नित ही रहूँ हरि संतन माहिं।
गुरु सुकदेव यही मोहिं दीन। चरनदास आनँद लवलीन।

(४२४) हिंडोला

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने॥
पौन उमाह उछाह धरती सोच सावन मास।
लाजके जहँ उड़त बगुले मोर हैं जग हाँस॥
हरख-सोक दोउ संग रोपे सूरत डोरी लाय।
बिरह पटरी बैठि सजनी उमँग आयँ जाय॥

सकल बिकल तहँ देत झोके बिपत गावनहार।
सखी बहुतक रंग राती रँगी पाँचौं नार ॥ ३ ॥
नैन बादल उमँगि बरसै दामिनी दमकात।
बुद्धिकौ ठहराव नाहीं, नेह की नहि जात ॥ ४ ॥
सुकदेव कहैं, कोइ बली झूले, सीस देत अकोर।
चरनदास भये बौरे जाति-बरन-कुल छोर ॥ ५ ॥

(४२५) बिहाग

साधो निंदक मित्र हमारा।
निंदककों निकटे ही राखो, होन न देउँ नियारा॥
पाछे निंदा करि अघ धोवै, सुनि मन मिटै विकारा।
जैसे सोना तापि अगिनमें, निरमल करै सोनारा॥
घन अहरन कसि हीरा निवटै, कीमत लच्छ हजारा।
ऐसे जाँचत दुष्ट संतकूं, करन जगत उँजियारा॥
जोग-जग्य-जप पाप कटन हितु करै सकल संसारा।
बिन करनी मम करम कठिन सब, मेटै निंदक प्यारा॥
सुखी रहो निंदक जग माहीं रोग न हो तन सारा।
हमरी निंदा करनेवाला, उतरै भवनिधि पारा॥
निंदके चरनोंकी अस्तुति, भाखौं बारंबारा।
चरनदास कहैं सुनियो साधो, निंदक साधक भारा॥

(४२६) परज

जिन्हैं हरिभगति पियारी हो।
मात-पिता सहजै छुटैं, छुटैं सुत अरु नारी हो ॥ १ ॥
लोकभोग फीके लगैं, सम अस्तुति गारी हो।
हानि-लाभ नहि चाहिये, सब आसा हारी हो ॥ २ ॥

जगसूं मुख मोरे रहैं, करैं ध्यान मुरारी हो।
जित मनुवाँ रहैं, भइ घट उँजियारी हो॥३॥
गुरु सुकदेव बताइया, प्रेमी गति भारी हो।
चरनदास चारौं वेदसूं, औरै कछु न्यारी हो॥४॥

(४२७)

गुरु हमरे प्रेम पियायौ हो।
ता दिन ते पलटी भयौ, कुल गोत नसायौ हो॥१॥
अलम चढ़ौ गगनै लगौ, अनहद मन छायौ हो।
तेजपुंजकी सेजपै, प्रीतम गल लायौ हो॥२॥
गये दिवानै देसड़े, आनँद दरसायौ हो।
सब किरिया सहजै छुटी तप नेम भुलायौ हो॥३॥
त्रैगुनतें ऊपर रहूँ, सुकदेव बसायौ हो।
चरनदास दिन रैन, नहिं तुरिया पद पायौ हो॥४॥

(४२८) सोरठ

अब घर पाया हो मोहन प्यारा॥टेक॥
लख्यो अचानक अज अविनासी, उघरि गये दृगतारा॥१॥
झूमि रह्यौ मेरे आँगनमें, टरत नहीं कहुँ टारा॥२॥
रोम-रोम हिय माहीं देखो, होत नहीं छिन न्यारा॥३॥
भयो अचरज चरनदास न पैये खोज किये बहु बारा॥४॥

(४२९) काफी

कोइ दिन जीवै तो कर गुजरान।
कहुर गम्री छाँड़ि दिवाने, तजो अकसकी बान॥

चुगली-चोरी अरु निंदा लै, झूठ कपट अरु कान ।
इनकूं डारि गहै जत सत कूं सोई अधिक सयान ॥
हरिहरि सुमिरौ, छिन नहिं बिसरौ, गुरुसेवा मन ठानि ।
साधुनकी संगति कर निस-दिन आवैं ना कछु हानि ॥
मुड़ौ कुमारग, चलौ सुमारग, पावौ निज पुर बास ।
गुरु सुकदेव चेतावैं तोकूं, समुझ चरन हीं दास ॥

गुरु नानक

(४३०)

राम सुमिर, राम सुमिर, एही तेरो काज है ॥ टेक ॥
मायाकौ संग त्याग, हरिजूकी सरन लाग ।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठौ सब साज है ॥ १ ॥
सुपने ज्यो धन पिछान, कांहे पर करत मान ।
बारूकी भीत तैसें, बसुधाकौ राज है ॥ २ ॥
नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात ।
छिन छिन करि गयौ काल्ह तैसे जान आज है ॥ ३ ॥

(४३१)

सब कछु जीवतकौ व्यौहार ।
मातु-पिता, भाई-सुत, बांधव-अरु पुनि गृहकी नारि ॥
तनतें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार ।
आध घरी कोऊ नहिं राखै घरतें देत निकार ॥
मृग तृस्ना ज्यों जग रचना यह देखौ हृदै विचार ।
कह नानक, भजु रामनाम नित, जातें होत उधार ॥

(४३२)

हौं कुरबाने जाउँ पियारे, हौं कुरबाने जाउँ।
हौं कुरबाने जाउँ तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हौं सद कुरबाने जाउँ।
काया रँगन जे थियें प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ।
रंगनवाला जे रँगे साहिब, ऐसा रंग न डीठ।
जिनके चोलड़े रत्तड़े प्यारे कत तिन्हाँ ते पास।
धूड़ तिन्हाँ कोजे मिले जीको, नानकदी अरदास।

(४३३)

मुरसिद मेरा मरहमी, जिन मरम बताया।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन्ह पाया।
तसबी एक अजूब है, जामे हरदम दाना।
कुंज किनारे बैठिके, फेरा तिन्ह जाना।
क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपनो जाया।
सबको लोहू एक है, साहिब फरमाया।
पीर पैगम्बर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारियें, पोपनको काया॥
हिरिस हिये हैवान है, बस करिलै भाई।
दाद इलाही नानका, जिसे देवै खुदाई॥

(४३४)

काहे रे बन खोजन जाई।
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संग समाई॥
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकर माहि जस छाई।
तैसे ही हरि बसे निरंतर, घट ही खोजो भाई॥

ाहर भीतर एकै जानों यह गुरु ज्ञान बताई।
ांन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई ॥ ३ ॥

(४३५)

 प्रभु मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
ंम भगति निज नाम दीजिये, दयाल अनुग्रह धारे ॥
ुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, हृदै तिहारी आसा।
ंत जनांपै करौं बेनती मन दरसनकौ प्यासा ॥
ेछुरत मरनजीवन हरि मिलते, जनको दरसन दीजै।
नाम अधार, जीवन-धन नानक प्रभु मेरे किरपा कीजै ॥

(४३६)

अब मैं कौन उपाय करूँ।
जेहि बिधि मनको संसय छूटै, भव निधि पार करूँ।
जनम पाय कछु भलौ न कीन्हों, तातें अधिक डरूँ ॥
गुरुमत सुन कछु ग्यान न उपजौ, पशुवत उदर भरूँ।
कह नानक, प्रभु बिरद पिछानौ, तबहीं पतित तरूँ ॥

(४३७)

या जग मीत न देख्यो कोई।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो दुखमें संग न होई ॥
दारा-मीत, पूत संबंधी सगरे धनसों लागे।
जबहीं निरधन देख्यौ नरकों संग छाड़ि सब भागे ॥
कहा कहूँ या मन बौरेकौं, इनसौं नेह लगाया।
दीनानाथ सकल भय भंजन, जस ताको विसराया ॥
स्वांन-पूंछ ज्यों भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हौं।
नानक लाज बिरदकी राखौ नाम तिहारो लीन्हौं ॥

(४३८)

जो नर दुखमें दुख नहिं मानै।
सुख-सनेह अरु भय नहिं जाके, कंचन माटी जानै॥
नहिं निंदा, नहिं अस्तुति जाके, लोभ-मोह अभिमाना।
हरष सोकतें रहै नियारो, नाहिं मान-अपमाना॥
आसा-मनसा सकल त्यागिकै, जगतें रहै निरासा।
काम-क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहि घट ब्रह्म निवासा॥
गुरु कृपा जेहिं नरपै कीन्ही, तिन्ह यह जुगति पिछानी।
नानक लीन भयो गोविंदसों, ज्यों पानी सँग पानी॥

(४३९)

यह मन नेक न कह्यो करै।
सीख सिखाय रह्यो अपनी सी, दुरमतितें न टरै॥
मद-माया-बस भयो बावरो, हरिजस नहिं उचरै।
करि परपंच जगतके डहकै अपनो उदर भरै॥
स्वान-पूँछ ज्यों होय न सूधो कह्यो न कान धरै।
कह नानक, भजु राम नाम नित, जातें काज सरै॥

(४४०)

जगतमें झूठी देखी प्रीत।
अपने ही सुखसों सब लागे क्या दारा क्या मीत॥
मेरो मेरो सभी कहत हैं, हित सों बाध्यो चीत।
अंतकाल संगी नहिं कोऊ, यह अचरज की रीत॥
मन मूरख अजहूँ नहिं समुझत, सिख दै हारयो नीत।
नानक भव-जल-पार परै जो गावै प्रभु के गीत॥

दरिया साहब

(४४१)

के उर उपजी नहिं भाई।
सो क्या जाने पीर पराई ॥ टेक ॥
विर जाने पीरकी सार।
वाँझ नार क्या लखै विकार ॥ १ ॥
तिव्रता पतिको व्रत जानै।
विभिचारिन मिल कहा बखानै ॥ २ ॥
रा-पारख जौहरी पावै।
मूरख निरखकै कहा बतावै ॥ ३ ॥
गा घाव कराहे सोई।
कोगतहार के दरद न कोई ॥ ४ ॥
ामनाम मेरा प्रान-अधार।
सोई रामरस पावनहार ॥ ५ ॥
न दरिया जानेगा सोई।
(जाके) प्रेमकी माल कलेजे पोई ॥ ६ ॥

(४४२)

ो धुनियाँ तौ भी मैं राम तुम्हारा।
कमीन जाति मतिहीना, तुम तौ हौ सिरताज हमारा ॥ टेक ॥
ा जंत्र सबद मन मुठिया, सुखमन ताँत चढ़ाई।
ंडलमें धुनुआँ बैठा, मेरे सतगुर कला सिखाई ॥ १ ॥
ान हर कुबुध काँकड़ा, सहज सहज झड़ जाई।
ांठ रहन नहिं पावै, इकरंगी होय आई ॥ २ ॥

इकरंग हुआ भरा हरि चोला, हरि कहँ कहा दिलाऊँ।
मैं नाहीं मेहनतका लोभी, वकसी मौज भगति निज पाऊँ॥
किरपा कर हरि बोले बानी, तुम तौ हो मम दास।
दरिया कहै, मेरे आतम भीतर, मेली राम भगति विस्वास॥

(४४३)

बावल कैसे विसरो जाई।
यदि मैं पति सँग रल खेलूंगी, आपा धरम समाई॥
सतगुरु मेरे किरपा कीनी, उत्तम वर परणाई।
अब मेरे साईंको सरम पड़ैगी लेगा हृदय लगाई॥
थे जानराय, मैं बाली-भोली, थे निरमल, मैं मैली।
थे बतलाओ, मैं बोल न जानूं, भेद न सकूं सहेली॥
थे ब्रह्मभाव, मैं आतप कन्या, समझ न जानूं बानी।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निश्चै कर जानी॥

(४४४) भैरव

कहा कहूँ मेरे पिउकी बात।
जो रे कहूँ सोई अंग सुहात ॥टेक॥
जब मैं रही थी कन्या क्वाँरी।
तब मेरे कर्म हता सिर भारी ॥ १॥
जब मेरी पिउसे मनसा दौड़ी।
सतगुरु आन सगाई जोड़ी ॥ २॥
जब मैं पिउका मंगल गाया।
तब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥ ३॥

लेवा कर बैठी संगा।
तंउ मोहि लीनी बायें अंगा ॥ ४ ॥
नदरिया कहै मिट गई दूती।
आपो अरप पीवसँग सूती ॥ ५ ॥

(४४५)

मजाम नहिं हिरदे घरा।
जैसा पसुवा तैसा नरा ॥ १ ॥
सुवा नर उद्यम कर खावै।
पसुवा तो जंगल चर आवै ॥ २ ॥
सुवा आवै, पसुवा जाय।
पसुवा चरै औ पसुवा खाय ॥ ३ ॥
मनाम ध्याया नहिं माई।
जनम गया पसुवाकी नाई ॥ ४ ॥
मनामसे नाहीं प्रीत।
यह ही सब पसुवोंकी रीत ॥ ५ ॥
वित सुखदुखमें दिन परै।
मुवा पछे चौरासी परै ॥ ६ ॥
न दरिया जिन राम न ध्याया।
पसुवा ही ज्यों जनम गँवाया ॥ ७ ॥

मीराबाईजी

प्रार्थना

(४४६) राग श्याम कल्याण - ताल रूपक

हरी तुम हरो जनकी भीर ।
द्रौपदीकी लाज राखी तुरत बढ़ायो चीर ॥
भगत कारण रूप नरहरि धरयो आप शरीर ।
हिरण्याकुश मारि लीन्हों धरयो नाहिन धीर ॥
बूड़तो गजराज राख्यो कियो बाहर नीर ।
दासी मीरा लाल गिरधर चरणकँवलपर सीर ॥

(४४७) राग दरबारी – ताल तिताला

तुम सुणो दयाल म्हांरी अरजी ॥
भवसागरमें बही जात हूँ काढ़ो तो थांरी मरजी ।
इण संसार सगो नहिं कोई सांचा सगा रघुवरजी ॥
मात पिता औ कुटुम कबीलो सब मतलबके गरजी ।
मीराकी प्रभु अरजी सुण लो चरण लगावो थांरी मरजी ॥

(४४८) राग पीलू—ताल कहरवा

हमनें सुणी छै हरी अधम उधारण ।
अधम उधारण सब जग तारण ॥ टेक ॥
गजकी अरज गरज उठ ध्यायो,
संकट पड़्यो तब कष्ट निवारण ॥ १ ॥
द्रुपदसुताको चीर बढ़ायो,
दूसासनको मान पद मारण ॥

ाहलादकी परतिग्या राखी,
हरणाकुस नख उद्र बिदारण ॥ २ ॥
ेखिपतनीपर किरपा कीन्हीं,
बिप्र सुदामाकी बिपति बिदारण ।
ोरा के प्रभु मो बंदीपर,
एति अबेरि भई किण कारण ॥ ३ ॥

(४४९) राग बिहाग—ताल दीपचन्दी

स्याम मोरी बाँहड़ली जी गहो ।
। भवसागर मँझधारमें थे ही निभावण हो ॥
हमें औगण घड़ा छँ हो प्रभुजी थे ही सहो तो सहो ।
ीराके प्रभु हरि अबिनासी लाज बिरदकी गहो ॥

(४५०) राग सारंग—ताल कहरवा

ं तो तेरी सरण परी रे, रामा ज्यूं जाड़े ज्यूं तार ।
ाड़सठ तीरथ भ्रम भ्रम आयो, मन नहिं मानी हार ॥
ा जगमें कोई नहिं आपणा सुणियो श्रवण मुरार ।
ीरा दासी राम भरोसे जमका फंदा निवार ॥

(४५१) राग धुन पीलू—ताल कहरवा

हरि बिन कूण गती मेरी ।
ुम मेरे प्रतिपाल कहिये मैं रावरी चेरी ॥
ादि अंत निज नाँव तेरो हीयामें फेरी ?
ार बेर पुकार कहूँ प्रभु आरति है तेरी ॥
ौं संसार बिकार सागर बीचमें घेरी ।
ाव फाटी प्रभु पाल बांधो बूड़त है बेरी ॥

(४५६) राग सारंग—ताल तिताला

सुण लीजो बिनती मोरी, मैं शरण गही प्रभु तेरी
तुम (तो) पतित अनेक उधारे, भव सागरसे तारी
मैं सबका तो नाम न जानूं कोई कोई नाम उचारे
अम्बरीष सुदामा नामा, तुम पहुँचाये निज धाम
ध्रुव जो पाँच वर्षके बालक, तुम दरस दिये घनश्याम
धना भक्तका खेत जमाया, कबिराका बैल चराया
सबरीका जूंठा फल खाया, तुम काज किये मन भाया
सदना औ सेना नाईको तुम कीन्हा अपनाई
करमाकी खिचड़ी खाई, तुम गणिका पार लगाई
मीरा प्रभु तुमरे रँग राती या जानत सब दुनियाई

(४५७) राग आसावरी—ताल तिताला

प्यारे दरसन दीज्यो आय,
तुम बिन रह्यो न जाय ॥टे॰
जळ बिन कमल, चंद बिन रजनी,
ऐसे तुम देख्यां बिन सजनी।
आकुळ व्याकुळ फिरूँ रैन दिन,
बिरह कलेजो खाय ॥
दिवस न भूख, नींद नहिं रैना,
मुख सूं कथत न आवे बैना।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे,
मिलकर तपत बुझाय ॥
क्यूं तरसावो अंतरजामी,
आय मिलो किरपाकर स्वामी।

दासी जनम-जनम की,
पड़ी तुम्हारे पाय ॥ ३ ॥

(४५८) राग रामकली—ताल तिताला

तो निभायाँ सरेगी, बाँह गहेकी लाज !
रथ सरण तुम्हारी सइयाँ, सरब सुधारण काज ॥ १ ॥
सागर संसार अपरबल, जामें तुम हो झचाज ।
धाराँ आधार जगत गुरु तुम बिन होय अकाज ॥ २ ॥
जुग भीर हरी भगतनकी, दीनी मोक्ष समाज ।
रा सरण गही चरणनकी, लाज रखो महाराज ॥ ३ ॥

(४५९) राग सूहा—ताल कहरवा

मी सब संसारके हो साँचे श्रीभगवान ॥
वर जंगम पावक पाणी धरती बीज समान ।
में महिमा थाँरी देखी कुदरतके करबान ॥
र सुदामाको दाळद खोयो बालेकी पहचान ।
मुट्ठी तंदुलकी चाबी दीन्ह्यों द्रव्य महान ॥
रतमें अर्जुनके आगे आप भया रथवान ।
नि कुळका लोग निहारया छुट गया तीर कमान ॥
कोई मारे ना कोइ मरतो, तेरो यो अग्यान ।
न जीव तो अजर अमर है, यो गीतारो ग्यान ॥
पर प्रभु किरपा कीजो, बाँदी अपणी जान ।
ाके प्रभु गिरधर नागर चरण कँवलमें ध्यान ॥

(४५६) राग सारंग—ताल तिताला

सुण लीजो बिनती मोरी, मैं शरण गही प्रभु तेरी।
तुम (तो) पतित अनेक उधारे, भव सागरसे तारे।
मैं सबका तो नाम न जानूं कोई कोई नाम उचारे
अम्बरीष सुदामा नामा, तुम पहुँचाये निज धामा
ध्रुव जो पाँच वर्षके बालक, तुम दरस दिये घनस्यामा
धना भक्तका खेत जमाया, कबिराका बैल चराया
सबरीका जूंठा फल खाया, तुम काज किये मन भाया
सदना औ सेना नाईको तुम कीन्हा अपनाई
करमाकी खिचड़ी खाई, तुम गणिका पार लगाई।
मीरा प्रभु तुमरे रँग राती या जानत सब दुनियाई॥

(४५७) राग आसावरी—ताल तिताला

प्यारे दरसन दीज्यो आय,
तुम बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
जळ बिन कमल, चंद बिन रजनी,
ऐसे तुम देख्यां बिन सजनी।
आकुळ व्याकुळ फिरूँ रैन दिन,
बिरह कलेजो खाय ॥ १॥
दिवस न भूख, नींद नहिं रैना,
मुख सूं कथत न आवे बैना।
कहा कहूँ कछु कहत न आवै,
मिलकर तपत बुझाय ॥ २॥
क्यूं तरसावो अंतरजामी,
आय मिलो किरपाकर स्वामी।

दासी जनम-जनम की,
पड़ी तुम्हारे पाय ॥ ३ ॥

(४५८) राग रामकली—ताल तिताला

तो निभायाँ सरेगी, बाँह गहेकी लाज !
थ सरण तुम्हारी सइयाँ, सरब सुधारण काज ॥ १ ॥
ागर संसार अपरबल, जामें तुम हो झचाज।
धाराँ आधार जगत गुरु तुम बिन होय अकाज ॥ २ ॥
जुग भीर हरी भगतनकी, दीनी मोक्ष समाज।
ा सरण गही चरणनकी, लाज रखो महाराज ॥ ३ ॥

(४५९) राग सूहा—ताल कहरवा

ामी सब संसारके हो साँचे श्रीभगवान ॥
ावर जंगम पावक पाणी धरती वीज समान।
में महिमा थाँरी देखी कुदरतके करबान ॥
सुदामाको दाळद खोयो बालेकी पहचान।
मुट्ठी तंदुलकी चाबी दीन्ह्यों द्रव्य महान ॥
रतमें अर्जुनके आगे आप भया रथवान।
नि कुळका लोग निहारया छुट गया तीर कमान ॥
कोई मारे ना कोइ मरतो, तेरो यो अग्यान।
न जीव तो अजर अमर है, यो गीतारो ग्यान ॥
पर प्रभु किरपा कीजो, बाँदी अपणी जान।
राके प्रभु गिरधर नागर चरण कँवलमें ध्यान ॥

बिरह

(४६०) राग प्रभाती—ताल चर्चरी

राम मिलण रो घणो उमावो नित उठ जोऊँ वाटड़ियाँ।
दरस बिना मोहि कछु न सुहावै जक न पड़त है आँखड़ियाँ॥
तड़फत तड़फत बहु दिन बीते पड़ी बिरहकी फाँसड़ियाँ।
अब तो बेग दया कर प्यारा मैं छूँ थारी दासड़ियाँ॥
नैण दुखी दरसणकूँ तरसै नाभि न बैठे साँसड़ियाँ।
रात दिवस हिय आरत मेरो कब हरि राखै पासड़ियाँ॥
लगी लगन छूटणकी नाहीं अब क्यूँ कीजै आँटड़ियाँ।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे पूरो मनका आसड़ियाँ॥

(४६१) राग जैजैवंती—ताल चर्चरी

गली तो चारों बंद हुईं मैं हरिसे मिलूँ कैसे जाय
ऊँची-नीची राह लपटीली, पाँव नहीं ठहराय
सोच सोच पग धरूँ जतनसे, बार-बार डिग जाय
ऊँचा नीचा महल पियाका म्हाँसूँ चढ़यो न जाय
पिया दूर पंथ म्हारो झीणो, सुरत झकोला खाय।
कोस कोसपर पहरा बैठ्या, पैंड पैंड बटमार।
हे विधना कैसी रच दीनी दूर बसायो म्हारो गाँव॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर सतगुरु दई बताय।
जुगन-जुगनसे बिछड़ी मीरा घरमें लीनी लाय॥

(४६२) राग जोगिया—ताल दीपचंदी

हे री मैं तो दरद दिवानी मेरो दरद न जाणै कोय॥

घायलकी गति घायल जाणै जो कोइ घायल होय।
जौहरिकी गति जौहरी जाणै की जिन जौहर होय॥
सूली ऊपर सेज हमारी सोवण किस विध होय।
गगन मँडलपर सेज पियाकी किस विध मिलणा होय॥
दरदकी मारी बन-बन डोलूँ वैद मिल्या नहिं कोय।
मीराकी प्रभु पीर मिटेगी जद वैद साँवलियाँ होय॥

(४६३) राग माँड़—ताल कहरवा

नातो नामको जी म्हाँसूँ तनक न तोड़्यो जाय॥
पाना ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहें पिंड रोग।
छाने लाँघण म्हैं किया रे, राम मिलणके जोग॥
बावळ वैद बुलाइया रे, पकड़ दिखाई म्हाँरी बाँह।
मूरख वैद मरम नहिं जाणे, कसक कलेजे माँह॥
जा वैदाँ घर आपणे रे, म्हाँरो नाँव न लेय।
मैं तो दाझी बिरहकी रे, तू काहेकूँ दारू देय॥
माँस गळ गळ छीजिया रे, करक रह्या गल आहि।
आँगळियाँ री मूदड़ी (म्हारे) आवण लागी बाँहि॥
रह रह पापी पपीहड़ा रे पिवको नाम न लेय।
जे कोइ बिरहण साम्हले तो, पिव कारण जिव देय॥
खिण मंदिर खिण आगणे रे, खिण खिण ठाढी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, (म्हारी) बिथा न बूझै कोय॥
काट कलेजो मैं धरूँ रे कागा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हारो पिव बसै रे, वे देखै तू खाय॥

म्हाँरे नातो नाँवको रे, और न नातो कोय।
मीरा व्याकुल बिरहणी रे, (हरि) दरसण दीजो मोय॥

(४६४) राग कामोद--ताल तिताला

आली रे मेरे नैणाँ बाण पड़ी ॥
चित्त चढ़ो मेरे माधुरी मूरत, उर बिच आन अड़ी।
कबक ठाढ़ी पंथ निहारूँ, अपने भवन खड़ी॥
कैसे प्राण पिया बिनु राखूँ, जीवन मूल जड़ी।
मीरा गिरधर हाथ बिकानी, लोग कहै बिगड़ी॥

(४६५) राग बिहाग--ताल चर्चरी

माई म्हारी हरिजी न बूझी बात ।
पिंड माँसू प्राण पापी निकस क्यूँ नहीं जात॥
पट न खोल्या मुखाँ न बोल्या साँझ भई परभात।
अबोलणा जुग बीतण लागो तो काहेकी कुशलात।
सावण आवण होय रह्यो रे नहिं आवणकी बात
रैण अँधेरी बीज चमंकै तारा गिणत निसि जात
सुपनमें हरि दरस दीन्हों मैं न जाण्यूँ हरि जात
नैण म्हाराँ उघण आया रही मन पछतात
लेई कटारी कंठ चीरूँ करूँगी अपघात
मीरा व्याकुल बिरहणी रे बाल ज्यूँ बिललात

(४६६) राग पहाड़ी--ताल कहरवा

घड़ी एक नहिं आवड़े, तुम दरसण बिन मोय
तुम हो मेरे प्राणजी, कासूँ जीवण होय

ं न भावै नींद न आवे विरह सतावै मोय।
गल सो घूमत फिरूँ रे, मेरो दरद न जाणै कोय॥
ास तो खाय गमाइयो रे रैण गमाई सोय।
ग गमाया झूरताँ रे नैण गमाया रोय॥
मैं ऐसी जाणती रे प्रीति कियाँ दुख होय।
र ढँढोरा फेरती रे प्रीति करो मत कोय॥
निहारूँ डगर वहारूँ, ऊभी मारग जोय।
राके प्रभु कब र मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय॥

(४६७) राग बेस बिलंपत—ताल तिताला

दरद बिनु दूखण लागे नैन।
बसे तुम बिछुड़े प्रभु मोरे कबहूँ न पायो चैन।
बद सुणत मेरी छतियाँ काँपे मीठे लागें बैन।
िरह कथा काँसूं कहूँ सजनी बह गई करवत ऐन॥
ल न परत पल हरि मग जोवत भई छमासी रैन।
ीराके प्रभु कब र मिलोगे दुख मेटण सुख दैन॥

(४६८) राग धानी—ताल तिताला

साँवरा म्हारी प्रीत निभाज्यो जी॥
म्हारा गुण रा सागर औगण म्हारूँ मति जाज्यो जी।
धीजै (म्हारो) मन न पसीजै, मुखड़ारा सबद सुणाज्यो जी॥ १
दासी जनम-जनमकी म्हारे आँगणा रमता आज्यो जी।
प्रभु गिरधर नागर बेड़ो पार लगाज्यो जी॥ २॥

(४६९) राग पीलू—ताल कहरवा

स्यामसुंदरपर वार।
जीवड़ो मैं वार डारूँगी, हाँ ॥ टेक ॥
तेरे कारण जोग धारण लोकलाज कुल डार।
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है नैन चलत दोउ बार॥
कहा करूँ कित जाऊँ मोरी सजनी कठिन बिरहको धार।
मीरा कहै प्रभु कब र मिलोगे तुम चरणा आधार।

(४७०) राग पीलू—ताल कहरवा

रमइया बिनु रह्यो न जाय।
खान पान मोहि फीको-सो लागै नैणा रहे मुरझाय
बार-बार मैं अरज करूँ छूँ रैण गई दिन जाय
मीरा कहै हरि तुम मिलियाँ बिन तरस तरस तन जाय

(४७१) राग दरबारी—ताल तिताला

प्रभुजी थे कहाँ गया नेहड़ो लगाय।
छोड़ गया बिस्वास सँगाती प्रेमकी बाती बळाय
बिरह समँदमें छोड़ गया छो नेहकी नाव चलाय
मीराके प्रभु कब र मिलोगे तुम बिन रह्योइ न जा

(४७२) राग सारंग—ताल दादरा

है मेरो मनमोहना आयो नहीं सखी री
कैं कहुँ काज किया संतनका कैं कहुँ गैल भुलावन
कहा करूँ कित जाऊँ मेरी सजनी लाग्यो है बिरह सतावन
मीरा दासी दरसण प्यासी हरि-चरणाँ चित लावन

(४७३) राग बागेश्री—ताल चर्चरी

मैं विरहणि बैठी जागूं जगत सब सोवै री आली ॥
विरहणि बैठी रंगमहलमें, मोतियनकी लड़ पोवै ।
इक विरहणि हम ऐसी देखी, अँसुवनकी माला पोवै ॥
तारा गिण गिण रैण बिहानी, सुखकी घड़ी कब आवे ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, जब मोहि दरस दिखावै ॥

(४७४) राग दरबारी कान्हरा—ताल तिताला

पिय बिन सूनो छै जी म्हारो देस ॥
ऐसो है कोई पिवकूं मिलावै तन मन करूँ सब पेस ।
तेरे कारण बन बन डोलूं कर जोगणको भेस ॥
अवधि बदीती अजहुँ न आए पंडर हो गया केस ।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे तज दियो नगर नरेस ॥

(४७५) राग कोसी कान्हरा—ताल
तिताला (मध्य लय)

कोई कहियौ रे प्रभु आवनकी । आवनकी मनभावनकी ॥टेक॥
आप न आवै लिख नहिं भेजै, बाण पड़ी ललचावनकी ।
ए दोउ नैण कह्यो नहिं मानै नदियाँ बहै जैसे सावनकी ॥ १ ॥
कहा करूँ कछु नहिं बस मेरो पाँख नहीं उड़ जावनकी ।
मीरां कहै प्रभु कब र मिलोगे चेरी भइ हूँ तेरे दाँवनकी ॥ २ ॥

(४७६) राग सोहनी—ताल कहरवा

मैं जाण्यो नाहीं प्रभुको मिलण कैसे होय री ।
आये मेरे सजना फिर गये अँगना मैं अभागण रही सोय री ॥

फारूँगी चीर करूँ गळ कंथा रहूँगी वैरागण होय री।
चुड़ियाँ फोरूँ माँग वखेरूँ, कजरा मैं डारूँ धोय री॥
निस वासर मोहि विरह सतावै कल न परत पल मोय री।
मीराके प्रभु हरि अविनासी मिल बिछड़ो मत कोय री॥

(४७७) राग पूरिया कल्याण ताल दीपचंदी

साजन सुध ज्यूं जाणों लीजै हो।
तुम बिन मोरे और न कोई क्रिया रावरी कीजै हो॥
दिन नहि भूख रैण नहिं निंदरा यूँ तन पळ पळ छीजै हो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर मिल बिछड़न मत कीजै हो॥

(४७८) राग गौड मलार--ताल चर्चरी

बादल देख डरी हो, स्याम ! मैं बादल देख डरी।
काळी।पीळी घटा ऊमड़ी बरस्यो एक घरी।
जित जाऊँ तित पाणी पाणी हुई हुई भोम हरी।
जाका पिय परदेस बसत है भीजूं बहार खरी।
मीराके प्रभु हरि अविनासी कीजो प्रीत खरी।

(४७९) राग सूरदासजी मलार--ताल तिताला

(मध्य लय)

बरसै बदरिया सावनकी, सावनकी मनभावनकी
सावनमें उमग्यो मेरो मनवा भनक सुनी हरि आवनकी।
उमड़ घुमड़ चहुँ दिसिसे आयो दामण दमके झर लावनकी।
नान्हीं नान्हीं बूंदन मेहा बरसै सीतल पवन सोहावनकी
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगळ गावनकी

(४८०) राग रामदासी मलार—ताल तिताला

डारि गयो मनमोहन पासी ।
ी दाल कोयल इक बोलै मेरो मरण अरु जगकेरी हाँसी ॥ १ ॥
ी मारी मैं वन-वन डोलूं प्रान तजूं करवत ल्यूं कासी ।
प्रभु हरि अविनासी तुम मेरे ठाकुर मैं तेरी दासी ॥ २ ॥

(४८१) राग शुद्ध सारंग —ताल तिताला

हरि बिन ना सरै री माई
ेरा प्राण निकस्या जात हरी बिन ना सरै माई ॥
ीन दादुर बसत जळमें जळसे उपजाई ।
नक जलसे बाहर कीना तुरत मर जाई ॥
ान लकरी वन परी काठ घुन खाई ।
ले अगन प्रभु डार आये भसम हो जाई ॥
वन वन ढूंढ़त मैं फिरी माई सुधि नहिं पाई ।
एक बेर दरसण दीजे सब कसर मिटि जाई ॥
ात ज्यों पीळी पड़ी अरु बिपत तन छाई ।
ासि मीरा लाल गिरधर मिलया सुख छाई ॥

(४८२) राग कालिंगड़ा—ताल तिताला

सुनी हो मैं हरि-आवनकी अवाज ।
चढ़-चढ़ जोऊँ मेरी सजनी! कब आवै महाराज ॥ १ ॥
मोर पपइया बोलै, कोयल मधुरे साज ।
ी इन्द चहूँ दिसि बरसै दामणि छोडी लाज ॥ २ ॥
रूप नवा नव धरिया, इंद्र मिलाणकै काज ।
प्रभु हरि अविनासी बेग मिलो सिरराज ॥ ३ ॥

फाड़ूँगी चीर करूँ गळ कंथा रहूँगी वैरागण होय री।
चुड़ियाँ फोरूँ माँग बखेरूँ कजरा मैं डारूँ धोय री।
निस बासर मोहि बिरह सतावै कल न परत पल मोयरी।
मीराके प्रभु हरि अविनासी मिल बिछड़ो मत कोय री॥

(४७७) राग पूरिया कल्याण ताल दीपचंदी

सावन सुध ज्यूँ जाणों लीजै हो।
तुम बिन मोरे और न कोई क्रिपा रावरी कीजै हो॥
दिन नहिं भूख रैण नहिं निंदरा यूँ तन पळ पळ छीजै हो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर मिल बिछड़न मत कीजै हो॥

(४७८) राग गौंड मलार--ताल चचंरी

बादल देख डरी हो, स्याम ! मैं बादल देख डरी
काळीपीळी घटा ऊमड़ी बरस्यो एक घरी
जित जाऊँ तित पाणी पाणी हुई हुई भोम हरी
जाका पिय परदेस बसत है भीजूँ बहार खरी
मीराके प्रभु हरि अबिनासी कीजो प्रीत खरी

(४७९) राग सूरदासजी मलार—ताल तिताला

(मध्य लय)

बरसै बदरिया सावनकी, सावनकी मनभावनकी
सावनमें उमग्यो मेरो मनवा भनक सुनी हरि आवनकी
उमड़ घुमड़ चहुँ दिसिसे आयो दामण दमके झर लावनकी
नान्हीं नान्हीं बूँदन मेहा बरसै सीतल पवन सोहावनकी
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगळ गावनकी

(४८७) राग भीमपलासी ताल तिताला

गोविंद कबहुँ मिलै पिया मेरा ॥
रण-कँवलको हँस-हँस देखूं राखूं नैणां नेरा।
रखणकू मोहि चाव घणेरो कब देखूं मुख तेरा ॥
ाकुल प्राण धरत नहिं धीरज मिल सूं मीत सवेरा।
राके प्रभु गिरधर नागर ताप तपन बहुतेरा ॥

(४८८) राग भैरवी--ताल कहरवा

मैं हरि बिन क्यों जिऊँ री माइ ॥
पिव कारण बौरी भई ज्यूं काठहि घुन खाइ।
ओखद मूल न संचरै . मोहि लाग्यो बौराइ ॥
कमठ दादुर बसत जलमें जलहि ते उपजाइ।
मीन जलके बीछुरे तन तलफि करि मरि जाइ ॥
पिव ढूंढण बन-बन गई कहुँ मुरली धुनि पाइ।
मीराके प्रभु लाल गिरधर मिलि गये सुखदाइ ॥

(३८९) धुन लावनी–ताल कहरवा

कारण सब सुख छोड्या अब मोहि क्यूं तरसावौ हौ।
-बिथा लागी उर अंतर सो तुम आय बुझावौ हौ ॥ १ ॥
छोड़त नहिं बणै प्रभुजी हँसकर तुरत बुलावौ हौ।
दासी जनम-जनमकी अंगसे अंग लगावौ हौ ॥ २ ॥

(४९०) राग पीलू–ताल कहरवा

करुणा सुणो स्याम मेरी।
मैं तो होय रही चेरी तेरी ॥

(४८३) राग टोड़ी—ताल तिताला

आओ मनमोहना जी जोऊँ थाँरी वाट।
खान-पान मोहि नेक न भावै नैणन लगे कपाट॥
तुम आयाँ बिन सुख नहिं मेरे दिलमें बहोत उचाट।
मीरा कहै मैं भई रावरी छाँडो नाहिं निराट॥

(४८४) राग सुकल बिलावल—ताल तिताला

आओ मनमोहन जी मीठा थाँरा बोल।
बाळपणाँकी प्रीत रमइयाजी, कदे नहिं आयो थाँरो तोल॥
दरसण बिन, मोहि जक न परत है चित मेरो डावाँडोल।
मीरा कहै मैं भई रावरी, कहो तो बजाऊँ ढोल॥

(४८५) राग पंचम—ताल तिताला

सोवत ही पलकामें मैं तो पलक लगी पलमें पिव आये।
मैं जु उठी प्रभु आदर देणकूँ, जाग पड़ी पिव ढूँढ न पाये॥
और सखी पिव सोइ गमाये मैं जू सखी पिव जागि गमाये।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, सब सुख होय स्याम घर आये॥

(४८६) राग पीलू—ताल कहरवा

राम मिलणके काज सखी, मेरे आरति उरमें जागी री॥
तडफत-तडफत कळ न परत है, बिरहबाण उर लागी री।
निसदिन पंथ निहारूँ पिवको, पलक न पळ भरी लागी री॥
पीव-पीव मैं रटूँ रात-दिन, दूजी सुध-बुध भागी री।
बिरह भुजँग मेरो डस्यो है कलेजो लहर हळाहळ जागी री॥
मेरी आरति मेटि गोसाईं, आय मिलो मोहि सागी री।
मीरा व्याकुल अति उकळाणी, पियाकी उमँग अति लागी री॥

चोंच कटाऊँ पपइया रे ऊपर काळोर लूण।
पिव मेरा मैं पीवकी रे तू पिव कहै स कूण॥
थारा सबद सुहावणा रे जो पिव मेला आज।
चोंच मँढ़ाऊँ थारी सोवनी रे तू मेरे सिरताज॥
प्रीतमकूँ पतियाँ लिखूँ रे कागा तूँ ले जाय।
जाइ प्रीतम जासूँ यूँ कहै रे थाँरि बिरहण धान न खाय॥
मीरा दासी ब्याकुली रे पिव-पिव करत बिहाय।
बेगि मिलो प्रभु अंतरजामी तुम बिनु रह्यौ न जाय॥

(४६४) राग देस–ताल तिताला

भवनपति तुम घर आज्यो हो।
बिथा लगी तन मँहिने (म्हारी) तपत बुझाज्यो हो॥
रोवत रोवत डोलता सब रैण बिहावै हो।
भूख गयी निदरा गई पापी जीव न जावै हो॥
दुखियाकूँ सुखिया करो मोहि दरसण दीजै हो।
मीरा-ब्याकुल बिरहणी अब बिलम न कीजै हो॥

(४६५) राग देस–ताल तिताला

पिया मोहि दरसरण दीजै हो।
बेर-बेर मैं टेरहूँ या किरपा कीजै हो॥
जेठ महीने जल बिना पंछी दुख होई हो।
मोर [illegible] कुरळहे धन चाम्रग सोई हो॥
[illegible] लागियो सखि तीजाँ खेलै हो।
[illegible] जिन मेलै हो॥

दरसण कारण भई बावरी बिरह बिथा तन घेरी
तेरे कारण जोगण हूँगी दूँगी नग्र बिच फेरी
कुंज बन हेरी-हेरी॥
अंग भभूत गले मृगछाला यो तन भसम करूँ री
अजहुँ न मिल्या राम अबिनासी बन-बन बीच फिरूँ री॥
रोऊँ नित टेरी-टेरी॥
जन मीराकूँ गिरिधर मिलिया दुख मेटण सुख भेरी।
रूम-रूम साता भइ उरमें मिट गई फेरा फेरी॥
रहूँ चरननि तर चेरी।

(४९१) राग सोरठा-ताल चर्चरी

हो जी हरि कित गये नेहूँ लगाय ॥
नेह लगाय मेरो मन हर लियो रस भरि टेर सुनाय।
मेरे मनमें ऐसी आवै मरूँ जहर-बिस खाय॥
छाँड़ि गये बिसवासघात करि नेहकी नाव चढ़ाय।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे रहे मधुपुरी छाय॥

(४९२) राग दुर्गा-ताल तिताला

हो गये स्याम दूजके चंदा ॥
मधुवन जाइ रहे मधु बनिया, हमपर डारो प्रेमको फंदा।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर, अब तो नेह परो कछु मंदा।

(४९३) राग सावनी कल्याण-ताल तिताला

पपइया रे पिवकी वाणि न बोल ।
सुणि पावेली बिरहणी रे थारी रालेली पाँख मरोड़।

चातक घनकूं रटै मछली जिमि पानी हो।
रा ब्याकुल बिरहणी सुध बुध बिसरानी हो॥

(४६८) राग कोसी–ताल तिताला

री सुध ज्यूं जानो ज्यूं लीजो।
पल ऊभी पंथ निहारूँ, दरसण म्हाने दीजो।
गी हूँ बहु ओगुणवाळी औगुण सब हर लीजो॥
दासी थाँरे चरणकँवलकी, मिल बिछड़न मत कीजो।
के प्रभु गिरधर नागर, हरि चरणाँ चित दीजै॥

(४६९) राग सावेरी–ताल तिताला

बिन क्यूं जीऊँ री माय।
कारण बौरी भई जस काठहि घुन खाय॥
ध मूल न संचरै, मोहिं लागो बौराय।
ठ दादुर बसत जलमहँ, जलहि ते उपजाय॥
ढूंढ़न गई बन बन, कहुँ मुरली धुन पाय।
के प्रभ– ाल गिरधर, मिलि गये सखदाय॥

सीप स्वाति ही झलती आसोजाँ सोई हो।
देव कातीमें पूजहे मेरे तुम होई हो।
मंगसर ठंढ बहोती पड़ै मोहि सम्हालो हो
पोस महीं पाला घणा, अबही तुम न्हालो हो
महा महीं बसंत पंचमीं फागाँ सब गावै हो
फागुण फागाँ खेलहैं बणराय जराधै हो
चत छित्तमें ऊपजी दरसण तुम दीजै हो
बैसाख बणराइ फूलवै कोमल कुरळीजै हो
काग उड़ावत दिन गया बूझूँ पंडित जोसी हो
मीरा बिरहण व्याकुली दरसण कद होसी हो

(४९६) राग बिहागरा—ताल तिताला

ऐसी लगान लगाय कहाँ (तूँ) जासी।
तुम देखे बिन कल न पड़त है तड़फ-तड़फ जिव जासी
तेरे खातिर जोगण हूँगी करवत लूँगी कासी
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवलकी दासी

(४९७) राग आनन्द भैरों—ताल तिताला

सखी मेरी नींद नसानी हो।
पिवको पंथ निहारत सिगरी रैंण बिहानी हो॥
सखिअन मिलकर सीख दई मन एक न मानी हो।
बिन देख्याँ कल नाहिं पड़त जिय ऐसी ठानी हो॥
अंग-अंग व्याकुल भई मुख पिय पिय बानी हो।
अंतर वेदन बिरहकी कोई पीर न जानी हो॥

गुरुके ग्यान रँगूं तन कपड़ा, मन मुद्री पैरूँगी ।
प्रेम पीतसूं हरि गुण गाऊँ, चरणन लिपट रहूँगी ॥
या तनकी मैं करूँ कींगरी रसना नाम कहूँगी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर साधाँ संग रहूँगी ॥

(५०४) राग माखा—ताल कहरवा

इण सरवरियाँ री पाळ मीरा बाई साँपड़े ॥
साँपड़ किया असनान सूरज सामी जप करे ।
होय बिरंगी नार, डगराँ विच क्यूं खड़ी ॥ १ ॥
काँई थारो पीहर दूर घराँ सासू लड़ी ।
चाल्यो जा रे असल गुँवार तनै मेरी ॥ २ ॥
गुरु म्हारा दीन दयाल हीराँरा पारखी ।
दियो म्हाने ग्यान बताय, संगत कर साधरी ॥ ३ ॥
खोई कुलकी लाज मुकुंद थाँरे कारणे ।
वेगही लीज्यो सम्हाल, मीरा पड़ी बारणे ॥ ४ ॥

(५०५) राग छाया टोड़ी—ताल तिताला

म्हारे घर आओ प्रीतम प्यारा ॥
तन मन धन सब भेंट धरूँगी भजन करूँगी तुम्हारा ।
तुम गुणवंत सुसाहिब कहिये, मोमें औगुण सारा ॥
मैं निगुणी कछु गुण नहिं जानूं तुम छो बगसणहारा ।
मीरा कहै प्रभु कबरे मिलोगे तुम बिन नैण दुखारा ॥

(५०६) राग पीलू—ताल कहरवा

साजन घर आओनी मीठा बोला ॥ टेक ॥
पंथ निहारूँ, थाँरो, आयाँ होसी भला ॥ १ ॥

ऐसो है कोई परम सनेही, तुरत सनेसो लावे।
वा बिरियाँ कद होसी मुझको हरि हँस कंठ लगावे॥
मीरा मिलि होरी गावे॥

(५०१) राग देवगिरि—ताल तिताला

पिया, तैं कहाँ गयो नेहरा लगाय।
छाँड़ि गयो अब कहाँ बिसासी, प्रेमकी बाती बराय॥
बिरह-समँदमें छाँड़ि गयो, पिव नेहकी नाव चलाय।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, तुम बिन रह्योय न जाय॥

(५०२) राग बरसाती—ताल चर्चरी

वंसीवारा आज्यो म्हारे देस थारी साँवरी सुरत व्हालो वेस॥
आऊँ-आऊँ कर गया साँवरा, कर गया कौल अनेक।
गिणता-गिणता घस गई म्हारी आँगळियाँ री रेख॥१॥
मैं बैरागिण आदिकी जी थाँरे म्हारे कदको सनेस।
बिन पाणी बिन साबुण साँवरा, होय गई धोय सफेद॥२॥
जोगण होय जंगल सब हेरूँ तेरा नाम न पाया भेस।
तेरी सुरतके कारणे म्हे धर लिया भगवाँ भेस॥३॥
मोर-मुकुट पीताम्बर सोहै घूँघरवाला केस।
मीराके प्रभु गिरधर मिलियाँ दूनो बढ़ै सनेस॥४॥

(५०३) राग जोगिया—ताल कहरवा

बाला मैं बैरागण हूँगी।
जिन भेषाँ म्हारो साहिब रीझे, सोही भेष धरूँगी॥
सील संतोष धरूँ घट भीतर, समता पकड़ रहूँगी।
जाको नाम निरंजन कहिये, ताको ध्यान धरूँगी॥

(५०९) राग पटमञ्जरी—ताल तिताला

मैं तो सांवरेण रंग राची ।
जि सिगार बांधि पग घुंघरू, लोक लाज तजि नाची ॥
ई कुमति, लई साधुकी संगति, भगति, रूप भइ सांची ।
य गाय हरिके गुण निस दिन, कालब्यालसूं बांची ॥
ण बिन सब जग खारो लागत, और बात सब कांची ।
रा श्रीगिरधरन लालसूं, भगति रसीली जांची ॥

(५१०) राग ललित—ताल तिताला

हमरो प्रणाम बांकेबिहारीको ।
र मुकुट माथे तिलक बिराजे, कुंडल अलका कारीको ॥
धर मधुरपर बंसी बजावैं, रीझ रिझावैं राधाप्यारीको ।
ह छवि देख मगन भइ मीरा, मोहन गिरवरधारीको ॥

(५११) राग त्रिबेनी—ताल तिताला

(मेरे) नैनां निपट बंकट छवि अटके ॥

आओ निसंक, संक मत मानो, आयाँ ही सुक्ख रहेला ॥
तन मन वार करूँ न्योछावर, दीज्यो स्याम मोय हेला ॥
आतुर बहुत बिलम मत कीज्यो, आयाँ ही रंग रहेला ॥
तुमरे कारण सब रंग त्यागा, काजळ तिलक तमोला ॥
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है, कर धर रही कपोला ॥
मीरा दासी जनम जनम की, दिल की घुंडी खोला ॥

(५०७) राग प्रभावती-ताल तिताला

म्हारे जनम-मरण साथी थाँने नहिं बिसरूँ दिन राती ॥
थाँ देख्याँ बिन कल न पड़त है जाणत मेरी छाती ।
ऊँची चढ़ चढ़ पंथ निहारूँ रोय-रोय अँखिया राती ॥
यो संसार सकल जग झूठो, झूठा कुलरा न्याती ।
दोउ कर जोड्याँ अरज करूँ छूं सुण लीयो मेरी बाती ॥
या मन मेरो बड़ो हरामी ज्यों मदमाती हाथी ।
सतगुरु हाथ धरचो सिर ऊपर आँकुस दै समझाती ॥
पल पल पिवको रूप निहारूँ निरख-निरख सुख पाती ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर हरि चरणा चित राती ॥

दर्शनानन्द

(५०८) राग मालकौस—ताल तिताला

मैं अपणे सैयाँ सँग साँची ।
अब काहेकी लाज सजनी परगट ह्वै नाची ॥
दिवस भूख न चैन कबहूँ नींद निसि नासी ।
वेघ वार पार ह्वैगो ग्यान गुह गाँसी ॥
कुळ कुटुम्बी आन बैठे मनहुं मधुमासी ।
दासी मीरा लाल गिरधर मिटी सब हाँसी ॥

(५०९) राग पटमञ्जरी—ताल तिताला

मैं तो सांवरेण रंग राची ।
साजि सिंगार बांधि पग घुंघरू, लोक लाज तजि नाची ॥
गई कुमति, लई साधुकी संगति, भगति, रूप भइ सांची ।
गाय गाय हरिके गुण निस दिन, कालब्यालसूं बांची ॥
उण बिन सब जग खारो लागत, और बात सब कांची ।
मीरा श्रीगिरधरन लालसूं, भगति रसीली जांची ॥

(५१०) राग ललित—ताल तिताला

हमरो प्रणाम बांकेबिहारीको ।
मोर मुकुट माथे तिलक बिराजे, कुंडल अलका कारीको ॥
अधर मधुरपर बंसी बजावै, रीझ रिझावै राधाप्यारीको ।
यह छवि देख मगन भइ मीरा, मोहन गिरवरधारीको ॥

(५११) राग त्रिवेनी—ताल तिताला

(मेरे) नैनाँ निपट बंकट छबि अटके ॥
देखत रूप मदन मोहन को पियत पियूख न मटके ॥
बारिज भवाँ अलक, टेढ़ी मनो अति सुगंधरस अटके ॥
टेढ़ी कटि टेढ़ी कर मुरली टेढ़ी पाग लर लटके ।
मीराँ प्रभु रूप लुभानी गिरधर नागर-नटके ॥

(५१२) राग मुल्तानी—ताल तिताला

ऐसा प्रभु जाण न दीजै हो ।
तन मन धन करि बारणै हिरदै धर लीजै हो ॥
आव सखी मुख देखिये नैणाँ रस पीजै हो ।
जिण जिण बिधि रीझै हरी सोई विधि कीजै हो ॥

सुंदर स्याम सुहावणा मुख देख्यां जीज हो ।
मीरा के प्रभु रामजी वड़ भागण रीझें हो॥

(५१३) राग गूजरी--ताल झंप.

या मोहनके मैं रूप लुभानी ।
सुंदर बदन कमल दल लोचन बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥१
जमना के नीरे-तीरे धेन चरावै, बंसीमें गावै मीठी बानी।
तन मन धन गिरधरपर वारूं, चरण कँवल मीरा लपटानी ॥२

(५१४) राग पीलू-ताल कहरवा

पग घुंघरू बाँध मीरा नाची रे ॥
मैं तो मेरे नारायणकी आपहि हो गइ दासी रे ।
लोग कहैं मीरा भई बावरी न्यात कहै कुळनासी रे॥
विषका प्याला राणाजी भेज्या पीवत मीरा हाँसी रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अविनासी रे॥

(५१५) राग माँड़---ताल तिताला

माई री मैं तो लियो गोबिंदो मोल ।
कोई कहै छाने कोई कहै छुपके, लियो बजंता ढोल ॥ १
कोई कहै मुहँघो, कोई कहै सुँहघो, लियो री तराजू तोल।
कोई कहै काळो, कोई कहै गोरो, लियो री अमोलक मोल ॥ २
कोई कहै घरमें, कोई कहै वनमें, राधा के संग किलोल।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आवत प्रेमके मोल ॥ ३

(५१६) राग तिलंग---ताल तेवरा

मनरे परसि हरिके चरण ॥
सुभग सीतल कँवल कोमल, त्रिविध ज्वाला हरण ।
जिण चरण प्रह्लाद परसे, इंद्र पदवी धरण ॥

जिण चरण ध्रुव अटल कीन्हें, राख अपनी सरण ।
जिण चरण ब्रह्मांड भेटचो, नखसिखाँ सिरी धरण ॥
जिण चरण प्रभु परसि लीने, तरी गोतम-घरण ।
जिण चरण काळीनाग नाथ्यो, गोप लीला-करण ॥
जिण चरण गोवरधन धारचो, गर्व मघवा हरण ।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण ॥

(५१७) राग पीलू बरवा--ताल कहरवा

घर ताळी लागी रे, म्हाँरा मनरी उणारथ भागी रे ॥
रिये म्हाँरो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव ।
गमनासूं काम नहीं रे, मैं तो जाय मिलूं दरियाव ॥ १ ॥
याँ मोळचाँसूं काम नहीं रे, सीख नहिं सिरदार ।
दारांसूं काम नहिं रे, मैं तो जाव करूँ दरबार ॥ २ ॥
कथीरसूं काम नहीं रे, लोहा चढ़े सिर भार ।
रूपासूं काम नहीं रे, म्हाँरे हीराँरो वौपार ॥ ३ ॥
हमारो जागियो रे, भयो समँद सूं सीर ।
त प्याला छाँड़िके, कुण पीवे कड़वो नीर ॥ ४ ॥
कूं प्रभु परचो दियो रे, दीन्हा खजाना पूर ।
के प्रभु गिरधर नागर, धणी मिल्या छै हजूर ॥ ५ ॥

(५१८) राग मधुमाध सारंग--ताल तिताला

नंदनँदन बिलमाई, बदराने घेरी माई ॥
इत घन लरजे, उत घन गरजे, चमकत विज्जु सवाई ।
मण घुमण चहुँ दिसिसे आया, पवन चलै पुरवाई ॥

सुंदर स्याम सुहावणा मुख देख्याँ जीज हो।
मीरा के प्रभु रामजी वड़ भागण रीझे हो॥

(५१३) राग गूज़री--ताल झप

या मोहनके मैं रूप लुभानी ।
सुंदर बदन कमल दल लोचन बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥ १।
जमना के नीरे-तीरे धेन चरावे, बंसीमें गावे मीठी बानी।
तन मन धन गिरधरपर वारूँ, चरण कँवल मीरा लपटानी ॥ २।

(५१४) राग पीलू-ताल कहरवा

पग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे ॥
मैं तो मेरे नारायणकी आपहि हो गइ दासी रे ।
लोग कहैं मीरा भई बावरी न्यात कहै कुळनासी रे॥
विषका प्याला राणाजी भेज्या पीवत मीरा हाँसी रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अबिनासी रे॥

(५१५) राग माँड़--ताल तिताला

माई री मैं तो लियो गोबिंदो मोल ।
कोई कहै छाने कोई कहै छुपके, लियो बजंता ढोल ॥ १॥
कोई कहै मुहँघो, कोई कहै सुंहघो, लियो री तराजू तोल।
कोई कहै काळो, कोई कहै गोरो, लियो री अमोलक मोल ॥ २॥
कोई कहै घरमें, कोई कहै वनमें, राधा के संग किलोल।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आवत प्रेमके मोल ॥ ३॥

(५१६) राग तिलंग--ताल तेवरा

मनरे परसि हरिके चरण ॥
सुभग सीतल कँवल कोमल, त्रिविध ज्वाला हरण ।
जिण चरण प्रह्लाद परसे, इंद्र पदवी धरण ॥

जिण चरण ध्रुव अटल कीन्हें, राख अपनी सरण।
जिण चरण ब्रह्मांड भेट्यो, नखसिखाँ सिरी धरण॥
जिण चरण प्रभु परसि लीने, तरी गोतम-घरण।
जिण चरण काळीनाग नाथ्यो, गोप लीला-करण॥
जिण चरण गोबरधन धारयो, गर्व मघवा हरण।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण॥

(५१७) राग पीलू बरवा--ताल कहरवा

ड़े घर ताळी लागी रे, म्हाँरा मनरी उणारथ भागी रे।
ालरिये म्हाँरो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव।
गा-जमनासूं काम नहीं रे, मैं तो जाय मिलूं दरियाव॥ १॥
ळयाँ मोळयाँसूं काम नहीं रे, सीख नहिं सिरदार।
ामदारांसूं काम नहि रे, मैं तो जाब करूँ दरबार॥ २॥
ाच कथीरसूं काम नहीं रे, लोहा चढ़े सिर भार।
ाना रूपासूं काम नहीं रे, म्हाँरे हीराँरो बौपार॥ ३॥
ाग हमारो जागियो रे, भयो समँद सूं सीर।
म्रित प्याला छाँड़िके, कुण पीवे कड़वो नीर॥ ४॥
ापाकूं प्रभु परचो दियो रे, दीन्हा खजाना पूर।
ाराके प्रभु गिरधर नागर, धणी मिल्या छँ हजूर॥ ५॥

(५१८) राग मधुमाध सारंग--ताल तिताला

नंदनँदन बिलमाई, बदराने घेरी माई॥
इत घन लरजे, उत घन गरजे, चमकत बिज्जु सवाई।
उमण घुमण चहुँ दिसिसे आया, पवन चलै पुरवाई॥

सुंदर स्याम सुहावणा मुख देख्याँ जीज हो ।
मीरा के प्रभु रामजी वड़ भागण रीझै हो॥

(५१३) राग गूज़री--ताल झप

या मोहनके मैं रूप लुभानी ।
सुंदर बदन कमल दल लोचन बाँकी चितवन मँद मुसकानी ॥ १॥
जमना के नीरे-तीरे धेन चरावै, वंसीमें गावै मीठी बानी ।
तन मन धन गिरधरपर वारूं, चरण कँवल मीरा लपटानी ॥ २॥

(५१४) राग पीलू-ताल कहरवा

पग घुंघरू बाँध मीरा नाची रे ॥
मैं तो मेरे नारायणकी आपहि हो गइ दासी रे ।
लोग कहैं मीरा भई बावरी न्यात कहै कुळनासी रे॥
विषका प्याला राणाजी भेज्या पीवत मीरा हाँसी रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अविनासी रे॥

(५१५) राग माँड़---ताल तिताला

माई री मैं तो लियो गोविंदो मोल ।
कोई कहै छाने कोई कहै छुपके, लियो बजंता ढोल ॥ १॥
कोई कहै मुहँघो, कोई कहै सुंहघो, लियो री तराजू तोल।
कोई कहै काळो, कोई कहै गोरो, लियो री अमोलक मोल ॥ २॥
कोई कहै घरमें, कोई कहै वनमें, राधा के संग किलोल ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आवत प्रेमके मोल ॥ ३॥

(५१६) राग तिलंग--ताल तेवरा

मनरे परसि हरिके चरण ॥
सुभग सीतल कँवल कोमल, त्रिविध ज्वाला हरण ।
जिण चरण प्रह्लाद परसे, इंद्र पदवी धरण ॥

जिण चरण ध्रुव अटल कीन्हें, राख अपनी सरण ।
जिण चरण ब्रह्मांड भेटयो, नखसिखाँ सिरी धरण ॥
जिण चरण प्रभु परसि लीने, तरी गोतम-घरण ।
जिण चरण काळीनाग नाथ्यो, गोप लीला-करण ॥
जिण चरण गोवरधन धारयो, गर्व मघवा हरण ।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण ॥

(५१७) राग पीलू बरवा--ताल कहरवा

हे घर ताळी लागी रे, म्हाँरा मनरी उणारथ भागी रे ।
ालरिये म्हाँरो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव ।
गा-जमनासूं काम नहीं रे, मैं तो जाय मिलूँ दरियाव ॥ १ ।
ाळयाँ मोळयाँसूं काम नहीं रे, सीख नहिं सिरदार ।
ामदारांसूं काम नहिं रे, मैं तो जाव करूँ दरबार ॥ २ ।
ाच कथीरसूं काम नहीं रे, लोहा चढ़े सिर भार ।
ोना रूपासूं काम नहीं रे, म्हाँरे हीराँरो बौपार ॥ ३ ।
ाग हमारो जागियो रे, भयो समँद सूँ सीर ।
ाम्रित प्याला छाँड़िके, कुण पीवे कड़वो नीर ॥ ४ ।
ोपाकूं प्रभु परचो दियो रे, दीन्हा खजाना पूर ।
ीराके प्रभु गिरधर नागर, धणी मिल्या छै हजूर ॥ ५ ।

(५१८) राग मधुमाध सारंग--ताल तिताला

नंदनँदन बिलमाई, बदराने घेरी माई ॥
इत घन लरजे, उत घन गरजे, चमकत बिज्जु सवाई ।
उमण घुमण चहुँ दिसिसे आया, पवन चलै पुरवाई ॥

दादुर मोर पपीहा बोलै, कोयल सबद सुणाई।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, चरणकँवल चित लाई॥

(५१९) राग नीलाम्बरी—ताल कहरवा

नैणा लोभी रे, बहुरि सके नहिं आय।
रोम-रोम नखसिख सब निरखत ललकि रहे ललचाय॥
मैं ठाढी ग्रिह आपणे री, मोहन निकसे आय।
वदन चंद परकासत हेली, मंद-मंद मुसकाय॥
लोक कुटुम्बी बरजि बरजहीं, बतियाँ कहत बनाय।
चंचल निपट अटक नहिं मानत पर-हथ गये बिकाय॥
भलो कहौ कोई बुरी कहौ मैं, सब लई सीस चढ़ाय।
मीरा प्रभु गिरधरनलाल बिन पल छिन रह्यो न जाय॥

(५२०) राग होली झँझोटी—ताल चर्चरी

होरी खेलत हैं गिरधारी।
मुरली चंग बजत डफ न्यारो सँग जुवती व्रजनारी॥
चंदन केसर छिड़कत मोहन अपने हाथ बिहारी।
भरि भरि मूठ गुलाल लाल चहुँ देत सबनपै डारी॥
छैल छबीले नवल कान्ह सँग स्यामा प्राण पियारी।
गावत चार धमार राग तहँ दै दै कल करतारी॥
फाग जु खेलत रसिक साँवरो बाढ्यो रस व्रज भारी।
मीराकूं प्रभु गिरधर मिलिया मोहनलाल बिहारी॥

(५२१) राग झँझोटी—ताल दादरा

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो नकोई॥
जाके सिर मोर मुगट मेरो पति सोई।
तात मात भ्रात बंधु आपनो न कोई॥

छाँड़ि दई कुळकि कानि कहा करिहै कोई ।
संतन ढिग बैठि बैठि लोकलाज खोई ॥
चुनरीके किये टूक ओढ़ लीन्हीं लोई ।
मोती मूंगे उतार बनमाला पोई ॥
अँसुवन जळ सींचि सींचि प्रेम बेलि बोई ।
अब तो बेल फैल गई आणँद फल होई ॥
दूधकी मथनियाँ बड़े प्रमसे बिलोई ।
माखन जब काढ़ि ळियो छाछ पिये कोई ॥
भगति देखि राजी हुई जगत देखि रोई ।
दासी मीरा लाल गिरधर तारो अब मोही ॥

(५२२) राग अलैया-ताल कहरवा

तोसों लाग्यो नेह रे प्यारे नागर नंद-कुमार ।
मुरली तेरी मन हरचो,
बिसरचौ घर ब्यौहार ॥ तोसों० ॥
जबतें श्रवननि धुनि परी,
घर अँगणा न सुहाय ।
पारधि ज्यूं चूके नहीं,
म्रिगी वेधि दइ आय ॥ १ ॥
पानी पीर न जानई ज्यों,
मीन तड़फ मरि जाय ।
रसिक मधुपके मरमको नहीं
समुझत कमल सुभाय ॥ २ ॥

दीपकको जो दया नहिं
उडि-उडि मरत पतंग।
मीरा प्रभु गिरधर मिले,
जैसे पाणी मिलि गयो रंग॥ ३॥

(५२३) राग सोरठ–ताल कहरवा

जोसीड़ाने लाख बधाई रे अब घर आये स्याम॥
आज आनँद उमँगि भयो है जीव लहै सुखधाम।
पाँच सखी मिलि पीव परसिकैं आनँद ठामूं-ठाम॥
विसरि गई दुख निरखि पियाकूं, सुफल मनोरथ काम।
मीराके सुखसागर स्वामी भवन गवन कियो राम॥

(५२४) राग परज–ताल कहरवा

सहेलियाँ साजन घर आया हो।
बहोत दिनांकी जोवती बिरहणि पिव आया हो॥
रतन करूँ नेवछावरी ले आरति साजूं हो।
पिवका दिया सनेसड़ा ताहि बहोत निवाजूं हो॥
पाँच सखी इकठी भई मिलि मंगल गावैं हो।
पियाका रळी बधावणा आणँद अंग न मावैं हो॥
हरि सागर सूं नेहरो नैणां बँध्या सनेह हो।
मीरा सखीके आगणैं दूधां वूठ मेह हो॥

(५२५) राग कजरी—ताल कहरवा

म्हारा ओळगिया घर आया जी।
तनकी ताप मिटी सुख पाया,
हिल-मिल मंगल गाया जी॥ १

घनकी धुनि सुनि मोर मगन भया,
यूं मेरे आणँद छाया जी।
मगन भई मिल प्रभु अपणा सूं,
भौका दरद मिटाया जी ॥ २ ॥
चंदकूं निरखि कमोदणि फूलै,
हरखि भया मेरे काया जी।
रग रग सीतल भई मेरी सजनी,
हरि मेरे महल सिधाया जी ॥ ३ ॥
सब भगतनका कारज कीन्हा,
सोई प्रभु मैं पाया जी।
मीरा बिरहणि सीतल होई,
दुख दुंद दूर नसाया जी ॥ ४ ॥

(५२६) राग बिलावल--ताल कहरवा

पियाजी म्हारे नैणाँ आगे रहज्यो जी ॥
नैणाँ आगे रहज्यो म्हाने,
भूल मत जाज्यो जी।
भौ सागरमें बही जात हूँ,
वेग म्हारी सुध लीज्यो जी ॥ १ ॥
राणाजी भेज्या विखका प्याला,
सो इमरित कर दीज्यो जी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर,

प्रेमालाप

(५२७) राग सिंध भैरवी--ताल कहरवा

म्हारे घर होता जाज्यो राज ।
अबके जिन टाला दे जाओ सिरपर राखूँ बिराज ॥ १
म्हे तो जनम जनमकी दासी थे म्हाँका सिरताज ।
पावणड़ा म्हाँके भलाँ ही पधारया सब ही सुधारण काज ॥ २
म्हे तो बुरी छाँ थाँके भली छै घणेरी तुम हो एक रसराज ।
थाँने हम सब ही की चिंता (तुम) सबके हो गरीब निवाज ॥ ३
सबके मुगट-सिरोमणि सिरपर मानों पुन्यकी पाज ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बाँह गहेकी लाज ॥ ४

(५२८) राग देश-ताल कहरवा

चालाँ वाही देस प्रीतम पावाँ जालाँ वाही देस ।
कहो कसूमल साड़ी रँगवाँ कहो तो भगवाँ भेस ॥
कहो तो मोतियन माँग भरवाँ कहो छिटकावाँ केस ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सुणज्यो बिड़द नरेस ।

(५२९) राग हमीर—ताल कहरवा

आओ सहेल्याँ रळी कराँ हे पर घर गवण निवारि ॥
झूठा माणिक मोतिया री झूठी जगमग जोति ।
झूठा सब आभूषण री साँची पियाजी री पोति ॥
झूठा पाट-पटंबरा रे झूठा दिखड़णी चीर ।
साँची पियाजी री गूदड़ी जामें निरमल रहै सरीर ॥
छप्पन भोग बुहाय देहे इण भोगनमें दाग ।
लूण अलूणो ही भलो है अपणे पियाजीरो साग ॥

देखि विराणे निवाँणकूँ हे क्यूँ उपजावे खीज ।
काळर अपणो ही भलो हे जामें निपजै चीज ॥
छैल विराणो लाखको हे अपणें काज न होय ।
ताके सँग सीधारताँ हे भला न कहसी कोय ॥
वर हीणो अपणो भलो हे कोढ़ी कुष्टी कोय ।
जाके सँग सीधारताँ हे भला कहै सब लोय ॥
अविनासीसूँ बालबाहे जिनसूँ साँची प्रीत ।
मीराँकूँ प्रभुजी मिल्या हे ए ही भगतिकी रीत ॥

(५३०) राग नट बिलावल -ताल तिताला

साँवलिया म्हारे, आज रँगीली गणगोर छै जी ।
ी पीळी बदळी विजळी चमके, मेघ घटा घनघोर छै जी ॥ १ ॥
र मोर पपीहा बोले, कोयल कर रही सोर छै जी ।
के प्रभु गिरधर नागर, चरणाँमें म्हारो जोर छै जी ॥ २ ॥

(५३१) राग कान्हरा—ताल तिताला

तनक हरि चितवो जी मोरी ओर ।
हम चितवत तुम चितवत नाहीं दिलके बड़े कठोर ॥
मेरे आसा चितवनि तुमरी और न दूजी दोर ।
तुमसे हमकूँ एक हो जी हम-सी लाख करोर ॥
ऊभी ठाढ़ी अरज करत हूँ अरज करत भयो भोर ।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी देस्यूँ प्राण अकोर ॥

(५३२) राग प्रभाती—ताल तिताला

जागो म्हाँरा जगपतिरायक हँस बोलो क्यूँ नही ।
हरि छो जी हिरदा माहिं पट खोलो क्यूँ नहीं ॥

तन मन सुरति सँजोइ सीस चरणाँ धरूँ।
जहाँ जहाँ देखूं म्हारो राम तहाँ सेवा करूँ॥
सदकैं करूँ जी सरीर जुगै जुग वारणैं।
छोडी छोडी कुळकी लाज स्याम थाँरे कारणैं॥
थोड़ी थोड़ी लिखूं सिलाम बहोत करि जाणज्यौ।
बंदी हूँ खानाजाद महरि करि मानज्यो॥
हाँ हो म्हारा नाथ सुनाथ विलम नहिं कीजियै।
मीरा चरणाँकी दासि दरस फिर दीजियै॥

(५३३) राग हमीर—ताल तिताला

हरी मेरे जीवन प्रान-अधार।
और आसरो नाँही तुम विन तीनूं लोक मँझार॥
आप बिना मोहि कछु न सुहावै निरख्यौ सब संसार।
मीरा कहै मैं दास रावरी दीज्यो मती विसार॥

(५३४) राग छाया टोडी—ताल तिताला

सखी म्हारो कानूड़ो कळेजेकी कोर।
मोर मुगट पीतांबर सोहै कुंडळकी झकझोर॥
बिंद्राबनकी कुंजगळिनमें नाचत नंदकिसोर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरण-कँवल चितचोर॥

(५३५) राग हमीर—ताल तिताला

बसो मोरे नैननमें नँदलाल॥
मोहनी मूरति साँवरि सूरति नैणा बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजत उर बैजंती-माल॥
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित नूपुर सबद रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भगतवछल गोपाल॥

(५३६) राग प्रभाती-ताल तिताला

जागो बंसीवारे ललना जागो मोरे प्यारे ॥
रजनी बीती भोर भयो है घर घर खुले किंवारे ।
गोपी दही मथत सुनियत हैं कँगनाके झनकारे ॥
उठो लालजी भोर भयो है सुर नर ठाढ़े द्वारे ।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल जय जय सबद उचारे ॥
माखन रोटी हाथमें लीनी गउवनके रखवारे ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर तरण आयाकूँ तारे ॥

(५३७) राग मांड़—ताल तिताला

स्याम ! मने चाकर राखो जी ।
गिरधारीलाल ! चाकर राखो जी ॥
चाकर रहसूँ बाग लगासूँ नित उठ दरसण पासूँ ।
बिंद्राबनकी कुंजगलिनमें तेरी लीला गासूँ ॥
चाकरीमे दरसण पाऊँ सुमिरण पाऊँ खरची ।
भाव भगति जागीरी पाऊँ, तीनूँ बाता सरसी ॥
मोर मुगट पीतांबर सोहै, गल बैजंती माळा ।
बिंद्राबनमें धेनु चरावे, मोहन मुरलीवाळा ॥
हरे हरे नित बाग लगाऊँ, बिच बिच राखूँ क्यारी ।
साँवरियाके दरसण पाऊँ, पहर कुसुम्मी सारी ॥
जोगी आया जोग करणकूँ, तप करणे संन्यासी ।
हरी भजनकूँ साधु आया बिंद्राबनके बासी ॥
मीराके प्रभु गहिर गँभीरा सदा रहो जी धीरा ।
आधी रात प्रभु दरसन दीन्हें, प्रेमनदीके तीरा ॥

(५३८) राग हंस नारायण–ताल तिताला

आली ! साँवरेकी दृष्टि मानो, प्रेमकी कटारी है ॥टेर॥
लागत बेहाल भई, तनकी सुध बुध गई।
तन मन सब व्यापो प्रेम मानो मतवारी है ॥ १ ॥
सखियाँ मिल दोय चारी, बावरी-सी भई न्यारी।
हौं तो वाको नीके जानौं, कुंजको बिहारी है ॥ २ ॥
चंदको चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है ॥ ३ ॥
विनती करूँ हे स्याम, लागू मैं तुम्हारे पाँव।
मीरा प्रभु ऐसी जानौ, दासी तुम्हारी है ॥ ४ ॥

(५३९) राग मालकोस–ताल तिताला (मध्य लय)

ऐसे पिये जान न दीजै हो ॥
चलो, री सखी ! मिलि राखिये नैनन रस पीजै, हो।
स्याम सलोनो साँवरो मुख देखत जीजै, हो ॥
जोइ जोइ भेषसों हरि मिलें, सोइ सोइ कीजै, हो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, बड़भागन रीजै, हो ॥

मिलनोत्तर प्रार्थना

(५४०) राग तिलक कामोद–ताल तिताला

छोड़ मत जाज्यो जी महाराज ॥टेर॥
मैं अबळा बल नायँ गुसाईं, तुमही मेरे सिरताज।
मैं गुणहीन गुण नाँय गुसाईं, तुम समरथ महराज ॥ १ ॥
थाँरी होयके किणरे जाऊँ, तुमही हिवड़ारो साज।
मीराके प्रभु और न कोई राखो अबके लाज ॥ २ ॥

(५४१) राग खम्माच–ताल तिताला

नहिं भावै थाँरो देसड़ लोजी रँगरूड़ो ॥
थाँरा देसामें राणा साध नहीं छै, लोग बसे सब कूड़ो ।
गहणा गाँठी राणा हम सब त्यागा त्याग्यो कररो चूड़ो ॥
काजल टीकी हम सब त्याग्या त्याग्यो है बाँधन जूड़ो ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बर पायो छै रूड़ो ॥

(५४२) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

सीसोद्यो रूठ्यो तो म्हाँरो काँई कर लेसी,
म्हे तो गुण गोबिंदका गास्याँ हो माई ॥ १ ॥
राणोजी रूठ्यो बाँरो देस रखासी,
हरि रूठ्याँ किठे जास्याँ हो माई ॥ २ ॥
लोक लाजकी काण न मानाँ,
निरभै निसाण घुरास्याँ हो माई ॥ ३ ॥
राम नामकी झाझ चलास्याँ,
भौ सागर तर जास्याँ हो माई ॥ ४ ॥
मीरा सरण साँवल गिरधरकी,
चरण-कँवल लपटास्याँ हो माई ॥ ५ ॥

(५४३) राग गुनकली–ताल तिताला

मैं गिरधरके घर जाऊँ ।
गिरधर म्हाँरो साँचो प्रीतम देखत रूप लुभाऊँ ॥
रैण पड़ै तबही उठ जाऊँ भोर भये उठि आऊँ ।
रैन दिना वाके सँग खेलूँ ज्यूँ त्यूँ ताहि रिझाऊँ ॥

जो पहिरावैं सोई पहिरूँ जो दे सोई खा
मेरी उणकी प्रीति पुराणी उण बिन पल न रहा
जहाँ बैठावें तितही बैठूं वेचै तो बिक जा
मीराके प्रभु गिरधर नागर बार बार बलि जा

(५४४) राग पीलू–ताल कहरवा

तेरो कोई नहिं रोकणहार मगन होइ मीरा च
लाज सरम कुलकी मरजादा सिरसें दूर क
मान-अपमान दोऊ धर पटके निकसी ग्यान ग
ऊँची अटरिया लाल किवड़िया निरगुण-सेज बि
पँचरंगी झालर सुभ सोहै फलन फूल क
बाजूबंद कड़ूला सोहै सिंदूर माँग भ
सुमिरण थाल हाथमें लीन्हों सोभा अधिक खरी॥
सेज सुखमणा मीरा सोहै सुभ है आज घरी।
तुम जाओ राणा घर अपणे मेरी थाँरी नाँही सरी॥

(५४५) राग मालकोस–ताल तिताला

श्रीगिरधर आगे नाचूँगी ॥
नाच-नाच पिव रसिक रिझाऊँ प्रेमी जनकूँ जाचूँगी।
प्रेम प्रीतिका बाँधि घूँघरू सुरतकी कछनी काछूँगी॥
लोक लाज कुळकी मरजादा यामें एक न राखूँगी।
पिवके पलँगा जा पौढूंगी मीरा हरि रँग राचूँगी॥

(५४६) राग पूरिया कल्याण—ताल तिताला

राणाजी म्हे तो गोविंदका गुण गास्याँ ।
चरणाम्रितको नेम हमारे, नित उठ दरसण जास्याँ ॥

हरिमंदिरमें निरत करास्याँ घूघरिया घमकास्याँ।
राम-नामका झाझ चलास्याँ भवसागर तर जास्याँ॥
यह संसार बाड़का कांटा ज्या संगत नहिं जास्याँ।
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर निरख परख गुण गास्याँ॥

(५४७) राग अगना—ताल तिताला

राणाजी थे क्याँने राखो म्हाँसू बैर॥
तो राणाजी म्हाने इसड़ा लागो ज्यूं बृच्छनमें कैर।
महल अटारी हम सब ताग्या, ताग्यो थाँरो बसनो सहर॥
काजळ टीकी राणा हम सब ताग्या भगवीं चादर पहर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर इमरित कर दियो जहर॥

(५४८) राग जौनपुरी—ताल तिताला

मैं गोविन्द गुण गाणा॥
राजा रूठै नगरी राखै हरि रूठ्याँ कहँ जाणा।
राणा भेज्या जहर पियाला इमरित करि पी जाणा॥
डबियामें भेज्या जं भुजंगम साळिगराम कर जाणा।
मीरा तो अब प्रेम-दिवानी साँवळिया वर पाणा॥

(५४९) राग कामोद—ताल तिताला

बरजी मैं काहूकी नाँहि रहूँ।
सुणो री सखी तुम चेतन होकै मनकी बात कहूँ॥
साध-संगति कर हरि-सुख लेऊँ जगसूँ दूर रहूँ।
तन धन मेरो सबही जावो भल मेरो सीस लहूँ॥
मन मेरो लागो सुमरण-सेती सबका मैं बोल सहूँ।
मीराके प्रभु हरि अविनासी सतगुरु सरण गहूँ॥

(५५०) राग पीलू—ताल कहरवा

राणाजी म्हाँरी प्रीति पुरवली मैं काँई करूँ
राम नाम बिन नहीं आवड़े, हिवड़ो झोला खा
भोजनिया नहिं भावे म्हाँने, नींदड़ली नहिं आय
बिषको प्यालो भेजियो जी, जाओ मीरा पास
कर चरणामृत पी गई, म्हाँरे गोविंद रे बिसवास
बिषको प्यालो पी गई जी, भजन करो राठौर
थाँरी मारी ना मरूँ, म्हारो रावणवालो और
छापा तिलक लगाइया जी, मनमें निश्चै धार
रामजी काज सँवारिया जी, म्हाँने भावै गरदन मार
पेट्याँ बासक भेजियो जी, यो छै मोतीडाँरो हार
नाग गलेमें पहिरियो, म्हाँरे महलाँ भयो उजियार
राठोडाँरी धीयड़ी जी, सीसोद्याँरे साथ
लें जाती बैकुंठकूँ म्हाँरा नेक न मानी बात
मीरा दासी स्यामकी जी, स्याम गरीबनिवाज
जन मीराकी राखज्यो कोइ बाँह गहेकी लाज

(५५१) राग खंभावती—ताल तिताला

राम नाम मेरे मन बसियो, रसियो राम रिझाऊँ ए माय !
मैं मँद-भागण करम-अभागण, कीरत कैसे गाऊँ ए माय !
बिरह-पिंजरकी बाड़ सखी री, उठकर जी हुलसाऊँ ए माय !
मनकूँ मार सजूँ सतगुरसूँ, दुरमत दूर गमाऊँ ए माय !
डंको नाम सुरतकी डोरी, कड़ियाँ प्रेम चढ़ाऊँ ए माय !
प्रेमको ढोल बण्यो अति भारी, मगन होय गुण गाऊँ ए माय !

करूँ ताल मन करूँ ढफली, सोती सुरति जगाऊँ ए माय।
त करूँ मैं प्रीतम आगे, तो प्रीतम-पद पाऊँ ए माय ॥ १ ॥
अबळापर किरपा कीज्यो, गुण गोबिंदका गाऊँ ए माय।
के प्रभु गिरधर नागर, रज चरणनकी पाऊँ ए माय ॥ २ ॥

प्रेम

(५५२) राग मधुमाध सारंग-ताल तिताला

या व्रजमें कछु देख्यो री टोना
टकी सिर चली गुजरिया आगे मिले बाबा नंदजीके छोना।
को नाम बिसरि गयो प्यारी 'ले लेहु री कोउ स्याम सलोना'॥ १ ॥
बनकी कुंजगळिनमें आँख लगाय गयो मनमोहना।
के प्रभु गिरधर नागर सुंदर स्याम सुघर रस लोना ॥ २ ॥

(५५३) राग वृन्दावनी सारंग-ताल तिताला

आली ! म्हाँने लागे बृन्दाबन नीको।
घर-घर तुलसी ठाकुर पूजा दरसण गोबिंदजीको ॥
निरमल नीर बहत जमनामें भोजन दूध दहीको।
रतन सिंघासण आप विराजै मुगट धरयो तुलसीको ॥
कुंजन-कुंजन फिरत राधिका सबद सुणत मुरलीको।
मीराके प्रभु गिरधर नागर भजन बिना नर फीको ॥

(५५४) राग सूहा-ताल तिताला

चलो मन गंगा जमुना तीर ॥
गंगा-जमुना निरमल पाणी सीतल होत सरीर।
बंसी बजावत गावत कान्हो संग लियाँ बल बीर ॥
मोर मुगट पीताम्बर सोहै कुण्डल झलकत हीर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवलपर सीर ॥

(५५५) राग धानी-ताल तिताला

मैं गिरधर रँग राती, सैयाँ मैं ॥
पचरँग चोला पहर सखी री मैं झिरमिट रमवा जाती।
झिरमिटमां मोहि मोहन मिलियो खोल मिली तन गाती ॥ १ ॥
कोईके पिया परदेस बसत है लिख लिख भेजें पाती।
मेरा पिया मेरे हीय बसत है न कहुँ आती जाती ॥ २ ॥
चंदा जायगा सूरज जायगा जायगी धरण अकासी।
पवन पाणी दोनूं ही जायँगे अटल रहै अबिनासी ॥ ३ ॥
और सखी मद पी-पी माती मैं बिन पियाँ ही माती।
प्रेमभठीको मैं मद पीयो छकी फिरूँ दिन-राती ॥ ४ ॥
सुरत निरतको दिवलो जोयो मनसाकी कर ली बाती।
अगम घाणिको तेल सिचायो बाळ रही दिन-राती ॥ ५ ॥
जाऊँनी पीहरिये जाऊँनी सासरिये हरिसूं सैन लगाती।
मीराकेके प्रभु गिरधर नागर हरिचरणां चित लाती ॥ ६ ॥

(५५६) होरी सिन्दूरा--ताल धमार

फागुनके दिन चार होली खेल मना रे ॥
बिन करताल पखावज बाजै अणहदकी झणकार रे।
बिन सुर राग छतीसूं गावै रोम-रोम रणकार रे ॥
सील सँतोखकी केसर घोळी प्रेम प्रीत पिचकार रे।
उड़त गुलाल लाल भयो अंबर बरसत रंग अपार रे ॥
घटके सब पट खोल दिये हैं लोकलाज सब डार रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवल बलिहार रे ॥

(५५७) राग पटमंजरी-ताल कहरवा

ा रंग लागो राम हरी, औरन रंग अटक परी ॥
ो म्हाँरे तिलक अरु माला, सीळ बरत सिणगारो ।
: सिंगार म्हाँरे दाय न आवे, यो गुरु ग्यान हमारो ॥ १ ॥
: निंदो कोइ बिंदो म्हे तो, गुण गोबिंदका गास्याँ ।
। मारग म्हारा साध पधारैं, उण मारग म्हे जास्याँ ॥ २ ॥
ी न करस्याँ जिव न सतास्याँ, काँई करसी म्हारो कोई ।
ो उतर कर खर नहिं चढस्याँ, या तो बात न होई ॥ ३ ॥

(५५८) राग जौनपुरी-ताल तिताला

खी री लाज वैरण भई ।
लाल गोपालके संग काहे नाहिं गई ॥ १ ॥
ठिन क्रूर अक्रूर आयो साज रथ कहुँ नई ।
थ चढ़ाय गोपाल लै गयो हाथ मींजत रही ॥ २ ॥
ठिन छाती स्याम बिछड़त बिरहतें तन तई ।
सि मीरा लाल गिरधर बिखर क्यूँ ना गई ॥ ३ ॥

(५५९) राग गूजरी-ताल कहरवा

ग बाँचै पाती, बिना प्रभु कुण बाँचै पाती ॥
गद ले ऊधोजी आयो, कहाँ रह्या साथी ।
वत जावत पांव घिस्या रे (वाला) अँखियाँ भई रातीं ॥
गद ले राधा बाँचण बैठी, (वाला) भर आई छाती ।
। नौरजमें अंब वहे रे (बाला), गंगा बहि जाती ॥
ना ज्यूँ पीळी पड़ी रे (बाला) धान नहीं खाती ।
र बिन जिवणो यूँ जळै रे [बाला], ज्यूँ दीपक संग बाती ॥

मीराके प्रभु सदा सहाई, राखे विघन हटाय ।
भजन-भावमें मस्त डोलती, गिरधर पर बलि जाय ॥

सिखावन

(५६३) राग झँझोटी-ताल कहरवा

भज ले रे मन गोपाल गुना ॥
म तरे अधिकार भजनसूं जोइ आये हरि सरना ।
सवास तो साखि बताऊँ, अजामील गणिका सदना ॥ १ ॥
कृपाल तन मन धन दीन्हों, नैन नासिका मुख रसना ।
को रचत मास दस लागै, ताहि न सुमिरो एक छिना ॥ २ ॥
ापन सव खेल गमायो, तरुण भयो जब रूप घना ।
भयो जव आळस उपज्यो, माया मोह भयो मगना ॥ ३ ॥
अरु गीधहु तरे भजनसूं, कोउ तरयो नहीं भजन बिना ।
भगत पीपामुनि सिवरी मीराकीहू करो गणना ॥ ४ ॥

(५६४) राग रागश्री ताल तिताला

राम नाम रस पीजै, मनुआँ राम नाम रस पीजै ।
तज कुसंग सत्संग बैठ नित हरि चर्चा सुनि लीजै ॥
काम क्रोध मद लोभ मोहकूं बहा चित्तसे दीजै ।
मीराके गिरधर नागर, ताहिके रंगके भीजै ॥

(५६५) राग शुद्ध सारंग—ताल कहरवा

चांलो अगमके देस काल देखत डरै ।
वहाँ भरा प्रेमका हौज हँस केलयाँ करै ॥
ओढण लज्जा चीर धीरजको घाघरो ।
छिमता काँकण हाथ सुमतको मूँदरो ॥

मने भरोसो रामको रे (वाला) डूब तिर्‌यो हाथी।
दासि मीरा लाल गिरधर, सांकड़ारो साथी॥

(५६०) राग पूरिया धनाश्री—ताल तिताला

परम सनेही रामकी नित ओलूं रे आवै।
राम हमारे हम हैं रामके हरि बिन कछू न सुहावै॥
आवण कह गये अजहूँ न आये जिवड़ो अति उकलावै।
तुम दरसणकी आस रमैया कब हरि दरस दिखावै॥
चरणकँवलकी लगनि लगी नित बिन दरसण दुख पावै।
मीराकूं प्रभु दरसण दीज्यो आणँद बरण्यूं न जावै॥

(५६१) राग पहाड़ी—ताल तिताला

हेली म्हांस्यूं हरि बिना रह्यो न जाय॥
सासू लड़ै, नणद म्हारी खीजै, देवर रह्या रिसाय।
चौकी मेली म्हारे सजनी ताला द्यो न जड़ाय॥
पूर्व जनमकी प्रीति म्हारी कैसे रहै लुकाय।
मीराके प्रभु गिरधरके बिन दूजो न आवै दाय॥

(५६२) राग खम्माच—ताल कहरवा

मीरा मगन भई हरिके गुण गाय॥
सांप पिटारा राणा भेज्या मीरा हाथ दिया जाय।
न्हाय धोय जब देखन लागी, सालिगराम गई पाय॥
जहरका प्याला राणा भेज्या, इम्रत दिया बनाय।
न्हाय धोय जब पीवन लागी, हो गई अमर अचाय॥
सूली सेज राणाने भेजी, दीज्यो मीरा सुवाय।
सांझ भई मीरा सोवण लागी, मानो फूल बिछाय॥

(५६७) राग छायानट— ताल तिताला

भज मन चरणकँवल अबिनासी ॥
जेताइ दीसे धरण गगन बिच, तेताइ सब उठ जासी ।
कहा भयो तीरथ व्रत कीन्हें, कहा लिये करवत कासी ॥
इण देहीका गरब न करणा, माटीमें मिल जासी ।
यो संसार चहर की बाजी, साँझ पड़्याँ उठ जासी ॥
कहा भयो है भगवा पहरचाँ घर तज, भये संन्यासी ।
जोगी होय जुगत नहि जाणी, उलट जनम फिर आसी ॥
अरज करूँ अबला कर जोड़े, स्याम तुम्हारी दासी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥

(५६८) राग बिलावल— ताल कहरवा

लेताँ लेताँ राम नाम रे लोकड़ियाँ तो लाजाँ मरे छै ॥ १ ॥
हरि मंदिर जाता पाँवड़िया रे दूखे, फिर आवे आखो गाम रे।
झगड़ो थाय त्याँ दौड़ी ने जाय रे, मूकी ने घरना काम रे ॥ २ ॥
भाँड़ भवैया गणिकात्रित करताँ बेसी रहे चारेजाम रे ।
मीराना प्रभु गिरधर नागर, चरणकँवल चित हाम रे ॥ ३ ॥

(५६९) राग बिहागरा—ताल चर्चरी

रमइया विन यो जिवड़ो दुख पावै । कहो कुण धीर बँधावै ॥ १ ॥
यो संसार कुबधको भाँड़ो, साध-संगत नहीं भावै ।
राम-नामकी निंद्या ठाणै, करम-ही-करम कुभावै ॥ २ ॥
राम नाम विन मुकति न पावै, फिर चौरासी जावै ।
साध-संगतमें कबहूँ न जावै मूरख जनम गुमावै ॥ ३ ॥
मीरा प्रभु गिरधरके सरणैं जीव परम पद पावै ॥ ४ ॥

दिन दुलड़ी दरियाव सांचको दोवड़ो ।
उबटन गुरुको ग्यान ध्यान को धोवणो ॥
कान अखोटा ग्यान जुगतको झूटणो ।
वेसर हरिको नाम चूड़ो चित ऊजळो ॥
पूंची है बिसवास काजळ है धरमको ।
दांतां इम्रत रेख दयाको बोलणो ॥
जौहर सील सँतोष निरतको घूंघरो ।
बिंदली गज और हार तिलक हरि प्रेमको ॥
सज सोला सिणगार पहरि सोने राखड़ी ।
साँवलियांसूं प्रीति औरासूं आंतड़ी ॥
पतिबरताकी सेज प्रभूजी पधारिया ।
गावै मीराबाई दासि कर राखिया ॥

(५६६) राग हमीर—ताल रूपक

नहिं ऐसो जनम बारंबार ॥
का जानूं कछु पुन्य प्रगटे मानुसा अवतार ।
बढ़त छिन छिन घटत पल पल जात न लागे बार ॥
बिरछके ज्यूं पात टूटे लगे नहिं पुनि डार ।
भौसागर अति जोर कहिये अनँत ऊंडी धार ॥
रामनामका बांध बेड़ा उतर परले पार ।
ग्यान चौसर मँडा चोहटे सुरत पासा सार ॥
साधु संत महंत ग्यानी करत चलत पुकार ।
दासि मीरा लाल गिरधर जीवणा दिन च्यार ॥

ा भावजने भेंट पठाई ताँदुळ तीन पसे।
त गई प्रभु मोरी टूटी टपरिया हीरा मोती लाल कसे॥
त गई प्रभु मोरी गउअन बछिया द्वारा बिच हसती फसे।
राके प्रभु हरि अविनासी सरणे तोरे बसे॥

नाम

(५७३) राग धनाश्री ताल तिताला

मेरो मन रामहि राम रटै रे।
म नाम जप लीजे प्राणी, कोटिक पाप कटै रे।
म जनमके खत जु पुराने, नामहि लेत फटै रे॥
क कटोरे इम्रत भरियो, पीवत कौन नटै रे।
रा कहे प्रभु हरि अविनासी, तन-मन ताहि पटै रे॥

(५७४) राग श्रीरञ्जनी ताल तिताला

पायो जी म्हे तो राम रतन धन पायो।
तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु, किरपा कर अपनायो॥
म जनमकी पंजी [illegible] जगमें सभी खोवायो।

प्रकीर्ण

(४७०) राग नीलाम्बरी—ताल कहरवा

सूरत दीनानाथसे लगी, तूँ तो समझ सुहागण सुरता नार ॥
लगनी लहँगो पहर सुहागण, बीती जाय बहार ।
धन जोबन है पावणा री, मिलै न दूजी बार ॥ १ ॥
राम को चुड़लो पहिरो, प्रेमको सुरमो सार ।
नकवेसर हरि नामकी री, उतर चलोनी परले पार ॥ २ ॥
ऐसे वरको क्या वरूँ, जनमै और मर जाय ।
वर बरिये एक सांवरो री, (मेरे) चुड़लो अमर हो जाय ॥ ३ ॥
मैं जान्यो हरि मैं ठग्यो री, हरि ठग ले गयो मोय ।
लख चौरासी मोरचा री, छिनमें गेरया छै विगोय ॥ ४ ॥
सुरत चली जहाँ मैं चली री, कृष्णनाम झणकार ।
अविनासीकी पोलपर जी, मीरा करै छै पुकार ॥ ५ ॥

(५७१) राग विहाग–ताल तिताला

करम गति टारे नाहिं टरे ॥
वादो हरिचंद-से राजा, (सो तो) नीच घर नीर भरे ।
पाँच पांडु अरु कुन्ती द्रौपदी, हाड़ हिमाळै गरे ॥
जग्य कियो बळी लेण इंद्रासण, सो पाताळ धरे ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर विखसे अमृत करे ॥

(५७१) राग पीलू ताल कहरवा

देखत राम हँसे सुदामाकूँ देखत राम हँसे ॥
फटी तो फूलड़ियाँ पाँव उभाणे चलतें चरण घसे ।
बालपणेका मित सुदामाँ अब क्यूँ दूर बसे ॥

कहा भावजने भेंट पठाई ताँदुळ तीन पसे ।
कित गई प्रभु मोरी टूटी टपरिया हीरा मोती लाल कसे ॥
कित गई प्रभु मोरी गउअन बछिया द्वारा बिच हसती फसे ।
मीराके प्रभु हरि अविनासी सरणे तोरे बसे ॥

नाम

(५७३) राग धनाश्री ताल तिताला

मेरो मन रामहि राम रटै रे ।
राम नाम जप लीजे प्राणी, कोटिक पाप कटै रे ।
जनम जनमके खत जु पुराने, नामहि लेत फटै रे ॥
कनक कटोरे इम्रत भरियो, पीवत कौन नटै रे ।
मीरा कहे प्रभु हरि अविनासी, तन-मन ताहि पटै रे ॥

(५७४) राग श्रीरञ्जनी ताल तिताला

पायो जी म्हे तो राम रतन धन पायो ।
वस्तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु, क्रिपा कर अपनायो ॥
जनम जनमकी पूंजी पाई, जगमें सभी खोवायो ।
खरचै नहि कोइ चोर न लेवै, दिन-दिन बढ़त सवायो ॥
सतकी नाव खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो ॥

गुरु-महिमा

(५७५) राग धानी ताल तिताला

मोहि लागी लगन गुरु-चरणनकी ।
चरण बिना कछुवै नहिं भावै जगमाया सब सपननकी ॥
भौसागर सब सूख गयो है फिकर नहीं मोहि तरननकी ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर आस वही गुरु-सरननकी ॥

(५७६) राग मलार ताल कहरवा

लागी मोहिं राम खुमारी हो ॥
रमझम बरसे मेहड़ा भीजे तन सारी हो।
चहुँदिसि दमके दामणी गरजै घन भारी हो॥
सतगुरु भेद बताया खोली भरम किवारी हो।
सब घट दीसै आतमा सबहीसूं न्यारी हो॥
दीपक जोऊँ ग्यानका चढ़ अगम अटारी हो।
मीरा दासी रामकी इमरत बलिहारी हो॥

(५७७) राग धानी ताल कहरवा

री मेरे पार निकस गया सतगुरु मारया तीर।
बिरह भाल लगी उर अंदर व्याकुल भया सरीर॥
इत उत चित्त चलै नहिं कबहूँ डारी प्रेम-जंजीर।
कै जाणै मेरो प्रीतम प्यारो और न जाणै पीर॥
कहा करूँ मेरो वस नहिं सजनी नैन झरत दोउ नीर।
मीरा कहै प्रभु तुम मिलियाँ बिन प्राण धरत नहिं धीर॥

महाप्रभु चैतन्य

(५७८) राग मिश्र काफी ताल तिताला

अब तो हरि नाम लौ लागी।
सब जगको यह माखन चोरा, नाम धरयो बैरागी॥ १॥
कित छोड़ी वह मोहन मुरली, कित छोड़ी सब गोपी।
मूड़ मुड़ाइ डोरी कटि बाँधी माथे मोहन टोपी॥ २॥
मात जसोमति माखन कारन, बाँधे जाके पाँव।
स्यामकिसोर भयो नव गौरा, चैतन्य जाको नाँव॥ ३॥
पीतांबरको भाव दिखावै, कटि कोपीन कसै।
गौर कृष्णकी दासी मीरा, रसना कृष्ण बसै॥ ४॥

सहजोबाईजी

गुरु-महिमा

(५७६) राग मलार-ताल तिताला

हमारे गुरु पूरन दातार ।
अभय दान दीनन को दीन्हें, कीन्हें भव जल पार ॥
जन्म-जन्मके बंधन काटे यमको बंध निवार ।
रंकहुते सो राजा कीन्हें, हरि धन दियो अपार ॥
देवें ज्ञान भक्ति पुनि देवें, योग बतावनहार ।
तन मन बचन सकल सुखदाई, हिरदे बुधि उँजियार ॥
सब दुख गंजन पातक भंजन रंजन ध्यान बिचार ।
साजन दुर्जन जो चलि आवैं, एकहि दृष्टि निहार ॥
आनंदरूप स्वरूपमई है, लिप्त नहीं संसार ।
चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो-नमो बारंबार ॥

(५८०) राग कामोद—ताल चर्चरी

सखी री आज आनँद देव बधाई ।
सतगुरुने अवतार लियो है, मिलि मिलि मंगल गाई ॥
अद्भुत लीला कहा बखानौं, मोपै कही न जाई ।
वहु बिधि बाजे बाज लागे, सुनत हिया हुलसाई ॥
धन भादों धन तीज सुदी है, जा दिन प्रगटे आई ।
धन धन कुंजो भाग तिहारे, चरनदास सुत पाई ॥
कलिजुग में हरिभक्ति चलाई, जनकी करें सहाई ।
श्रीसुकदेव करी जब किरपा, गावैं सहजो बाई ॥

(५८१) राग सोरठ—ताल तिताला

हमारे गुरु वचनकी टेक ।
आन धरमकूं नाहीं जानूं, जपूं हरि हरि एक ॥ १ ॥
गुरु बिना नहिं पार उतरै, करो नाना भेष ।
रमौ तीरथ वर्त राखौ, होहु पंडित सेख ॥ २ ॥
गुरु बिना नहीं ज्ञान दीपक, जाय ना अँधियार ।
काम क्रोध मद, लोभ माहीं, उलझिया संसार ॥ ३ ॥
चरनदास गुरु दया करकै, दियौ मंतर कान ।
सहजो घट परगास हूवा, गयौ सब अज्ञान ॥ ४ ॥

(५८२) राग काफी—ताल तिताला

नैनों लख लैनी साईं तेंडे हजूर ।
आगे पीछे दहिने बायें सकल रहा भरपूर ॥ १ ॥
जिनको ज्ञान गुरूको नाहीं सो जानत हैं दूर ।
जोग जग्य तीरथ व्रत साधैं, पावत नाहीं कूर ॥ २ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जिमीमें, सोई हरि का नूर ।
चरनदास गुरु मोंहि बतायो सहजो सबका मूर ॥ ३ ॥

वेदान्त

(५८३)राग आसावरी—ताल तिताला

बाबा काया नगर बसावौ ।
ज्ञान दृष्टिसूं घटमें देखौ, सुरति निरति लौ लावौ ॥
पाँच मारि मन बसकर अपने तीनों ताप नसावौ ।
सत संतोष गहे दृढ़ सेती, दुर्जन मारि भगावौ ॥
सील छिमा धीरजकूं धारौ, अनहद बंब बजावौ ।
पाप बानिया रहन न दीजै धरम बजार लगावौ ॥

सुबस वास जब होवै नगरी, बैरी रहै न कोई।
चरनदास गुरु अमल बतायी, सहजो सँभलो सोई॥

(५८४) राग बसन्त–ताल तिताला

आतम पूजा अधिक जान। सकल सिरोमन याहि मान॥
विस्तारो हित भवन माहिं। भरम दृष्टि जहँ आवै नाहिं॥
हिरदा कोमल ठौर लिया। कर विचार जहँ धूप दिया॥
या सेवाका दया मूल। समता चंदन छिमा फूल॥
मीठे वचन सोइ बालभोग। निंदा झूठ तजो अजोग॥
घंटा अनहद सुरत लाव। घट घट देखै एक भाव॥
करी सुखी सुख आप लेव। इस पूजा सों सुखी देव॥
चरनदास गुरु दई मोहिं। हंस हंस जहँ जाप होहिं॥
इंद्री मन बुध तहँ लगाव। कर सहजोबाई याको चाव॥

नाम

(५८५) राग सारंग–ताल तिताला

हमरे औषध नाँव धनीका।
ाध-व्याध तन मनकी खोवै, सुद्ध करै वह नीका॥
मर भये जिन जिन यह खाई, भव नगरी नहिं आये।
ो पछ करैं सँभल दृढ़ राखै, सतगुरु वैद बताये॥
तसंगतको भवन बनावै, पड़दा लाज लगावै।
जगत वासना पवन चलत है, सो आवन नहिं पावै॥
शुभ करम लै टेक टहलुआ, दीपक ज्ञान जलावै।
नित्य अनित्य बिचार सार गहु, हो आसार वगावै॥
जीव रूपके रोग भगै यों, ब्रह्मरूप ह्वै जावै।
सहजोबाई सुन हुलसावै, चरनदास बतलावै॥

(५८६) राग ईमन—ताल तिताला

ज्यों ज्यों राम नाम ही तारै ।
जान अजान अग्नि जो छूवै, वह जोरै पै जारै ॥ १ ॥
उलटा सुलटा बीज गिरैं ज्यों, धरती माहीं कैसे ।
उपजि रहै निहचै करि जानो, हरि सुमिरन ह्वै ऐसे ॥ २ ॥
वेद पुराननमें मथि काढा, राम नाम तत सारा ।
तीन कांडमें अधिकी जानो, पाप जलावन हारा ॥ ३ ॥
हिरदा सुद्ध करै वुधि निरमल, ऊँची पदवी देवै ।
चरनदास कहैं सहजोबाई, व्याधा सब हरि लेवै ॥ ४ ॥

(५८७) राग कान्हरा—ताल तिताला

सठ तजि नाँव-जगत सँग राचो ।
जेहि कारन बहु स्वाँग कछे हैं, चौरासी तन धरि धरि नाचो ॥
गर्भ माहि जे वचन किये थे, एकहु बार भयो नहिं साँचो ।
स्वारथहीको उठि उठि धावै, राम भजन परमारथ काचो ॥
संतनकी टकसाल चढो ना, गुरकी हाट कबहुँ नहि जाँचो ।
पंच विषैके मदमें मातो, अभिमानी ह्वै बहुतक नाचो ॥
जमद्वारेकी लाज न मानी, नरक अगिनकी सहि सहि आँचो ।
चरनदास कहै सहजोबाई, हरिकी सरन बिना नहि बाचो ॥

(५८८) राग भैरवी—ताल तिताला

भया हरि रस पी मतवारा ।
आठ पहर झूमत ही बीतै, डार दिया सब भार ॥
इवा पिंगला ऊपर पहुँचे सुखमन पाट उघारा ।
पीवन लगे सुधारस जबहीं, दुर्जन पड़ी बिडारा ॥

-जमन बिच आसन मारचो, चमक चमक चमकारा।
र गुफामें दृढ़ ह्वै बैठे, देख्यो अधिक उजारा ॥ ३ ॥
तइ स्थिर चंचल मन थाका, पांचौंका बल हारा।
नदास किरपासूं सहजो, भरम करम हुए छारा ॥ ४ ॥

(५८९) राग बसन्त–ताल तिताला

गावो रे साधो यह बसंत। जाकी अविगत लीला अगम पंथ ॥
वि पदारथ है इकंग। नहिं पैये दूजा और अंग ॥
रसै साधो एक एक। नहिं पैये दूजा कोई भेष ॥
न ध्यानको लागो तार। जहँ आप बिराजै ओंकर ॥
व घट व्यापक निराकार। कोई न पावै वह विचार ॥
ष्ट अखंडित अति अनूप। जाको सुर-मुनि-योगी ध्यावैं भूप ॥
ाय रहो है सर्व माहिं। को नहिं संतो खाली ठाहिं ॥
चरनदास पूरन औतार। जिन दान दियो जग व्याध टार ॥
ाई नावै सीस। मेरे भ्रम मेटे बिस्वा बीस ॥

(५९०) राग ललित–ताल तिताला

ाग जो सुमिरन करै। आप तरै औरन लै तरै ॥ टेक॥
भक्ति माहिं चित्त देवै। पदपंकज विनु और न सेवै ॥
रमकूं संग न लेवै। फलन कामना सब परिहरै ॥ १ ॥
ाल सब ही छुट जावै। आवागमकी डोरि नसावै ॥
संकट फिर नहिं आवै। ऊार वार जनमै नहिं मरै ॥ २ ॥
पदवी जगमें पावै। राजा राना सीस नवावै ॥
टे जा मुक्ति समावै। जो पै ध्यान धनीका धरै ॥ ३ ॥

हापै सुख जो जानै कूरा। गुर चरननमें लागै पूरा॥
वेग सम्हारै जो जन सूरा। चरनदास सहजो ही अरै॥ ४॥

लीला

(५९१) राग विलावल—ताल तिताला

मुकुट लटक अटकी मनमाहीं।
नृत्यत नटवर मदन मनोहर, कुण्डल झलक पलक बिथुराई॥ १॥
नाक बुलाक हलक मुक्ताहल, होठ मटक गति भौंह चलाई।
ठुमक ठुमक पग धरत धरनिपर, बाँह उठाय करत चतुराई॥ २॥
झुनक झुनक नूपुर झनकारत ताता थेई थेई रीझ रिझाई।
चरनदास सहजो हिय अंतर, भवन करौ जित रहौ सदाई॥ ३॥

महिमा

(५९२) राग परज—ताल कहरवा

तेरी गति किन्हुं न जानी हो।
ब्रह्मा सेस महेसुर थाके, चारो बानी हो॥
बाद करते सब मत थाके, बुद्धि थकानी हो।
विद्या पढ़ि पढ़ि पंडित थाके, ब्रह्मगियानी हो॥
सबके परे जुअन मम हारी, थाह न आनी हो।
छान बीनकर बहुतक थाको, भई खिसानी हो॥
सुर-नर-मुनी गनपती थाके, बड़े बिनानी हो।
चरनदास सकी सहजो बाई, भई निरानी हो॥

प्रार्थना

(५९३) राग भैरो—ताल चर्चरी

हम बालक तुम माय हमारी। पल पल माहिं करौ रखवारी

स दिन गोदीहीमें राखो । इत उत बचन चितावन भाखो ॥
पै ओर जान नहिं देवो । ढुर ढुर जाउँ तो गहि गहि लेवो ॥
अनजान कछू नहिं जानूं । बुरी भलीको नहिं पहिचानूं ॥
सी तैसी तुमहीं चीन्हेव । गुरु ह्वै ध्यान खिलौना दीन्हेव ॥
हरी रक्षाहीसे जीऊँ । नाम तुम्हारो इमृत पीऊँ ॥
ष्टि तिहारी ऊपर मेरे । सदा रहूँ मैं सरनै तेरे ॥
रौ झिड़कौ तौ नहिं जाऊँ । सरक-सरक तुमहीं पै आऊँ ॥
रन दास है सहजो दासी । हो रक्षक पूरन अविनासी ॥

(५६४) राग रामकली—ताल कहरवा

अब तुम अपनी ओर निहारो ।
रे अवगुन पै नहिं जाओ, तुमहीं अपना बिरद सम्हारो ॥
। जुग साख तुम्हारी ऐसी, वेद पुरानन गाई ।
तत उधारन नाम तुम्हारो यह सुनके मन दृढ़ता आई ॥
अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।
तो चरन तुम्हारे लागी, हो किरपाल दयालहि स्वामी ॥
य जोरिकै अरज करत हौं अपनाओ गहिके बाहीं ।
र तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन मोमें कछु नाहीं ॥

चेतावनी

(५६५) राग सारंग—ताल कहरवा

मिर-सुमिर नर उतरो पार भौसागरकी तीछन धार ॥ टेक ॥
र्म जहाज माहि चढ़ि लीजै, सँभल सँभल तामें पग दीजै ।
म करि मनको संगी कीजै, हरि मारग लागो लार ॥ १ ॥

बादवान पुनि ताहि चलावै, पाप भरै तो हलन न पावै।
काम क्रोध लूटनको आवै, सावधान ह्वै करो सँभार॥३
मान पहाड़ी तहाँ अड़त है आसा तृस्ना भँवर पड़त है।
पाँच मच्छ जहँ चोट करत हैं, ज्ञान आँखि बल चलो निहार॥४
ध्यान धनीका हिरदै धारै, गुरु किरपासूं लगै किनारै।
जब तेरी बोहित उतरै पारे, जम्म-मरन दुख बिपता टार॥५
चौथे पदमें आनँद पावै, या जगमें तू बहुरि न आवै।
चरनदास गुरुदेव चितावैं, सहजोबाई यही बिचार॥६

(५९६) राग होरी सिंदूरा—ताल धमार

साधो भौसागरके माहिं काल होरी खेलाई॥टेक॥
भाँति-भाँतिके रंग लिये हैं, करत जीवनकी घात।
बूढ़ा बाला कछू न देखै देखै ना दिन रात॥
निहचै मौत लिये सँग रानी, नाना रंग सम्हार।
बड़े-बड़े अभिमानी नामी, सो भी लीन्हें मार॥
सूरज चंद या भयतें काँपैं, स्वर्ग माहिं सब देव।
तनधारी सब ही थर्रावैं, ज्ञानी जानत भेव॥
आपनकूं देही नहिं जानै, जानत आतम साँच।
चरनदास कह सहजोबाई, ताहि न आवै [illegible]॥

(५९७) [illegible]—ताल [illegible]

साधो मन मायाके [illegible] जग रंग [illegible]
मूरख पचै खेलके [illegible] स्वाँग [illegible]
आगा धरि-धरि [illegible]

जोग करे सिधि आठों चाहै, मान बड़ाई हेत।
राज वासना भोग लोकके, कासी करवत लेत ॥ २ ॥
पंच अगिन बहु तापन लागे, बहुत अर्धमुख झूल।
बहुतक दौड़ें अड़सठ तीरथ, ज्ञान गली गये भूल ॥ ३ ॥
चरनदास गुरु तत्व लखायो, दीन्हें खेल छुटाय।
सहजोबाई सीस नवावत बार-बार बलि जाय ॥ ४ ॥

(५९८) राग काफी—ताल कहरवा

हरि हर जप लेनी, औसर बीतो जाय।
जो दिन गये सो फिर नहिं आवैं, कर बिचार मन लाय ॥
या जग बाजी साच न जानो, तामें मत भरमाय।
कोई किसीका है नहिं बौरे, नाहक लियौ लगाय ॥
अंत समय कोइ काम न आवैं, जब जम लेहिं बोलाय।
चरनदास कहैं सहजोबाई सत-संगत सरनाय ॥

(५९९) राग बिलावल—ताल दादरा

हरि बिनु तेरो ना हितू, कोऊ या जग माहीं।
अंत समय तू देखि ले कोई गहै न बाहीं ॥
जमसूँ कहा छुटा सकै कोई संग न होई।
नारी हूँ फटि रहि गई, स्वारथ कूँ रोई ॥
पुत्र कलत्तर कौनके, भाउ अरु बंधा।
सब ही ठोंक जलाइ हैं समझै नहिं अंधा ॥
महल दरब ह्याँ ही रहै, पचि-पचि करि जोड़ा।
करहा गज ठाढ़े रहैं, चाकर अरु घोड़ा ॥

पर काजे बहु दुख सहै, हरि-सुमिरन खोया।
सहजोबाई जम घिरैं, सिर धुनि-धुनि रोया॥

(६००) राग बसंत—ताल तिताला

ऐसो बसंत नहिं बार-बार। तैं पाई मानुष-देह सार॥
यह औसर बिरथा न खोय। भक्ति बीज हिये धरती बोय॥
सतसंगतको सींच नीर। सतगुरजीसों करौ सीर॥
नीको बार बिचार देव। परत राख याकूँ जू सेव॥
रखवारी कर हेत खेत। जब तेरी होयँ जैत जैत॥
खोट-कपट-पंछी उड़ाव। मोह-प्यास सब ही जलाव॥
समझ बाड़ी नऊ रंग। प्रेम फूल फूलै रंग रंग॥
पुहुप गूँथ माला बनवाव। आदि पुरुषकूँ जा चढ़ाव॥
तौ सहजोबाई चरनदास। तेरे मनकी पूरे सकल आस॥

(६०१) राग सोरठ—ताल रूपक

जगमें कहा कियो तुम आय।
स्वान जैसो पेट भरिकै, सोयो जन्म गँवाय॥
पहर पछिले नाहिं जागो, कियो ना शुभ कर्म।
आन मारग जाय लागो, लियो ना गुरु धर्म॥
जप न कीयो तप न साधो, दियो ना तैं दान।
बहुत उरझे मोह मदमें, आपु काया मान॥
देह घर है मौतका रे, आन काढ़ै तोहि।
एक छिन नहिं रहन पावै, कहा फँसो होय॥
रैन दिन आराम ना, काटै जो तेरी आय।
चरनदास कहैं सुन सहजिया, करो भजन उपाय॥

मञ्जुकेशीजी

योगज्ञान

(६०२) राग सोरठ—ताल तिताला

आपन रूप परखिये आपै ॥
ज नयनन ही निज मुख दीखत अपनो सुख-दुख आपुई व्यापै ॥
नी गति बनै आपु बनाये । जाड़े जात निज तन तप तापै ।
ज करसों निज आसूँ पोंछिये । का सुझाय सुइ करसों छापै ॥
पै बसि प्रशांत जल निरखहु । का छति-लाभ सिंधु तल मापै ॥
त न लहत वृथा दिन खोवत कथत-मथत ही शास्त्र कलापै ।
ी' आत्म-प्रतीति फुरति है रामनाम अव्याहत जापै ॥

(६०३) राग ललित—ताल तिताला

जो चौदह रसको पहिचानै ।
सो चेतिहि बिधिबस कौनीहू योनि जनमि बौरानै ॥
बिस्वास हरि परखत-भरखत को समीप नियरानै ?
'केशी' दया धरम ना छोड़िये जो बिरहिनि दुख जानै ॥

(६०४) राग सोरठ—ताल रूपक

निर्मल मानसिक आवास ॥
मलिन भाव बुहारि फेंकहु स्वच्छ करहु देवास ।
खींचि नभतें मदहि गारो मदन उलटो रास ॥
छरस नवरस पंचरस महँ बहै एक बतास ।
कहति 'केशी' मठ सँवारहु करहि जिहि हरि वास ॥

(६०५) राग सारंग—ताल तिताला

चंचल मनको बस करिय कसस ॥
योगी-मुनि ऐसे बरवरात परमार्थ पथिक जिहि लसि [illegible]।
अभ्यास-विरत जुग विधि लखात, गीतामों श्रीमुख बचनहु [illegible]।
हनुमत-मत मनहि कहिय हरि यस, जिहि भावै वाको रामरस।
'केशी' बढ़ै उर प्रेम जसस, थिर हो मन प्यारे ततस-[illegible]॥

(६०६) राग बिहाग—ताल तिताला

राम-रहसके ते अधिकारी।
जिनको मन भरि गयउ और मिटि गई कल्पना सारी॥
चौदह भुवन एक रस दीखै एक पुरुष इक नारी।
'केशी' बीजमंत्र सोइ जानै ध्यावै अवधविहारी॥

(६०७) राग हमीर—तालतिताला

अनुभवकी बात कोउ कोउ जानै॥
कोउ नयनहीन, कोउ मन मलीन, कोउ-कोउ मेधामें रति मानै।
जंजाल वर्णफल पाँचफेर द्विजको अस जो चीरे तानै॥ १
सतरहों साधि चतुरागिन त्यागि पंचम कृशानु महँ प्रण ठानै।
लागै जब महाप्रलयकी लहुट 'केशी' तब हूर बूटी छानै॥ २

(६०८) राग भैरवी—ताल तिताला

संयम साँचो याको कहिये॥
जामें राम-मिलनकी तृषा गजराजन प्रति लहिये।
मोहनिशा महँ नींद उपाटै चरण निया निज गहिये॥
भूर्भुवः स्व.के झोंकनमें बार-बार बनि रहिये।
[illegible] नेह निज भावै 'केशी' [illegible] और का चहिये॥

(६०९) राग काफी—ताल तिताला

चेतहु चेतन बीर सवेरे ॥
इष्ट-स्वरूप बिठारहु मनमें करकमलन धनुतीर।
एक छटा करुणावारिधिकी अनुछन धारहु धीर ॥
भक्त-विपति भंजन रघुनायक मंत्र बिशद हर-पीर।
'केशी' प्रीतम पाँव पखारिय ढारि सुनयनन-नीर ॥

(६१०) राग सोरठ—ताल तेवरा

दर्शक, दीप-दर्शन दूर ॥
शून्य विपिन बिचित्र मंदिर ज्योति रह भरपूर।
झुंड-झुंड चली नवेली मग उड़ावति धूर ॥
करि प्रवेश सुद्वार चारिहु गई जहँ प्रिय सूर।
लव निरखि पाँखी-सरिस सब भई चकनाचूर ॥

(६११) राग सोरठ ताल रूपक

शांति एक आधार, सन्मुख ॥
राम सहज स्वरूप झलकत भावयुत सृंगार।
कहत याको सिद्ध योगी तिलकी ओट पहार ॥
छाड़ि यह दुर्लभ नहीं कछु करत संतबिचार।
सुखसिंधु सुखमाकंद 'केशी' परम पुरुष उदार ॥

(६१२) राग सारंग—ताल रूपक

खेलत राम पूतरि माहिं।
छाड़ि परमारथ रसिक कोउ भेद जानत नाहिं ॥
यही जग है यही सग है शत्रु-मित्र कहाहिं।
ज्ञान बिनु सब लोग 'केशी' चारि आठ भ्रमाहिं ॥

(६१३) राग सिंदूरा—ताल तिताला

बारे जोगिया, कवन बिपिन महँ डोलै ?
नेती-धोती साजि सलोने मूल कमलदल खोलै।
चर्म दृष्टिकी सृष्टि निधन करि कस न बदल दै चोलै॥
माहुर ऍचै चाटि मधु पिपली काढ़त जीके फफोलै।
'केशो' कस डोलत लटकाये कोह मोहके झोलै॥

(६१४) राग श्यामकल्याण—ताल तिताला

आश्रय सुखद सुसंयम पावै॥
वटु विश्राम शब्द-वट छाया शुक बीज तिहि गावै।
गृही सुखी सुरसाल-छाँहतर काल-सुकाल सुनावै॥
पाकर तरुतर वैखानस बसु पीपर यति मन भावै।
'केशो' चारि वृक्ष सिद्धवत हैं आश्रम हेतु सुहावै॥

(६१५) राग भैरवी—ताल तिताला

कामदगिरि ढिग डेरा भीजै॥
अर्द्धरात्रि महँ बैठि शिलापर सुखद शांतिरस पीजै।
बाद्य अनेक भाँति श्रवनन करि आप्त अनाहत लीजै॥
गुरदुर्लभ यह रहस सनातन लहव पुकारि पसीजै।
'केशो' भी यह रुचिर पहुनई प्रिय स्वीकार करीजै॥

(६१६) राग चन्द्रकान्त—ताल तिताला

गजरिपु बस सुराहनयोग।
है सदा एकांतवासी तिन्हि न योग-वियोग॥
जनक जननी जो निरादेउ यांद्र परम उयोग।
मदा मिलु निज बाहुबलको तिन्हि लगावत भोग॥

सकत आंख मिलाय नहिं थकि जकि बहादुरलोग ।
अभय डोलत 'केश' मृगपति उर न धारत सोग ॥

(६१७) राग गौरी—ताल तिताला

भुवन-बिच एकै दीप जरै ।
कितने सलभ गिरे दीपकपर कहि-कहि हरे हरे ॥
वेदशिरा मुनि शिखा जोहते जो इकतार बरै ।
'केशी' अलख ज्योतिपर हुति हो सो भव अगम तरै ॥

(६१८) राग चैता—ताल कहरवा

देखेउ जो नीचे, हो रामा, कि ऊँचे चढ़िके री ॥
तारा एक सबुज रँग चमकै मानो अतिहि न नीचे ।
यान हमार गगन महँ बिचरत पवन पखेरू खींचे ॥
घर-घर एकै लेखा, लखियत गुनियत कं खं बीचे ।
'केशी' दाग न मिटिहै कबहूँ बिना कमलदल फींचे ॥

(६१९) राग चन्द्रकान्त—ताल तिताला

चार जुगनू झलाझल झमकै ॥
आशुतोषनै दियो जुगुनुवा चंद्रकिरन सम दमकै ।
या जुगुनूपर बिके बिधाता दिव्य गगन महँ चमकै ॥
साधु सुजान सराहत छबिको नीलकलेवर छमकै ।
'केशी' कौतुक कामधनीको भक्तनके उर रमकै ॥

(६२०) राग बिहाग—ताल तिताला

बामन बलिको छलिगे मीत ।
कहत सबै समुझत कोउ-कोऊ, कोऊ करै परतीत ॥
मोहि अचंभा लागत भैया, गावत भगवत-गीत ।
'केशी' रामधर्मकी महिमा जानैका जन क्रीत ॥

(६२१) राग सोरठ—ताल तिताला

धरतीमें पानी वास करै ।
छमा करो तो प्रभ प्रकट हो मरनीसे करनी सुफल करै।
कोह-द्रोहमें पामर पचते अरनी बिनु आपै आप जरै
'केशो' नीति सिखाइये याको तरनीमें जो कोउ पाँव धरै।

(६२२) राग लहरा—ताल तिताला

चौरासी मठके मठधारी ।
भोग त्यागि किन अलख जगायहु आपन रूप सम्हारी।
चढ़ी गोमती चलि आई ढिग बलिहारी-बलिहारी
'केशो' मैयाकी धारामें बही हमारी सारी।

(६२३) राग मालश्री—ताल तिताला

मधुमाखी जरै नहिं दीपकपै ।
वह तो बटोरति सुमननको रस सेवति याको तन-मन दै।
भोग-समय नर छीनत छत्ता खीझति छीजति सरबस खै
'केशो' केवल शलभ सयानो उमँगि जरत तहँ आहुत ह्वै।

(६२४) राग झँझौटी—ताल झप

सदय हृदयकी सरस कहानी ।
योगी कहो सदा सुख भोगी ध्रुव समान सो ध्यानी।
पार्वतीपति कृपापात्र सो अरु बिदेह-सम ज्ञानी
'केशो' रघुबरको सोइ भावै निश्छल भक्त अमानी॥

(६२५) राग पीलू—ताल कहरवा

भाय-भोगी हमारे नया ।
आनगरी, ताप भरी, नेह झरी, छेमकरी पूतरि सरोवरि गयउ मैं
भूररक, भ्रूभरक, भवहरक, धृतरक 'केशो' पुकारे दिन-रैं

उपदेश

(६२६) राग रागश्री—ताल झप

रामधनीसे हेत नहीं जो ।
य-अस्तको राज्य व्यर्थ हैं, जो न प्रेम रघुवंस मनीसे ।
द खाय वहुत दिन जीवै, पार लहै ना निज करनीसे ॥
ों लोक शोक सम तिनको, जो व्याकुल हैं भवरजनीसे ।
ी' जाते हाथ पसारे, लोन उठावत हैं पपनीसे ॥

(६२७) राग मलार—ताल रूपक

छिन-सुख लागि मानुष मरै ॥
विषय-रसमें मिल्यो माहुर तिहि उतारत गरै ।
नाभिचक्र उलटि परै अरु तखन फुस-फुस जरै ॥
हरिकृपा विनु कहहु कैसे कवन यह दुख हरै ।
कैसे 'केशी' अमल सुख-पथ जीव जंगम चरै ॥

(६२८) राग झँझौटी—ताल तिताला

निर्मल मनको एक स्वभाव ॥
परिहर सीयाराम-पद पंकज, नितत और न काउ ।
जस जस सखि बुंदियात वदरवा, तस-तस कोमल भाउ ॥
एकरस वरसत नेक न जानत, कौन रंक को राउ ।
'केशी' काम कलाधर चीन्हत, चपल चंद्रिका चाउ ॥

(६२९) राग परज—ताल तिताला

जो मानै मेरी हित सिखवन ॥
सत्य कहूँ निज मनकी वात, सहिये हिम-तप-वर्षा-रु-वात ।
सिये मनको सब भाँति तात, जासों छूटै यह आवागमन ॥

(६२१) राग सोरठ—ताल तिताला

धरतीमें पानी वास करै ।

छमा करो तो प्रम प्रकट हो मरनीसे करनी सुफल फरै ॥
कोह-खोहमें पामर पचते अरनी बिनु आपै आप जरै ।
'केशी' नीति सिखाइये वाको तरनीमें जो कोउ पाँव धरै ॥

(६२२) राग लहरा—ताल तिताला

चौरासी मठके मठधारी ।

भोग त्यागि किन अलख जगावहु आपन रूप सम्हारी ॥
चढ़ी गोमती चलि आई ढिग बलिहारी-बलिहारी ।
'केशी' मैयाकी धारामें बही हमारी सारी ।

(६२३) राग मालश्री—ताल तिताला

मधुमाखी जरै नहि दीपकपै ।

वह तो बटोरति सुमननको रस सेवति वाको तन-मन दै ।
भोग-समय नर छीनत छत्ता खीझति छीजति सरबस स्वै
'केशी' केवल शलभ सयानो उमँगि जत तहँ आहुत ह्वै ।

(६२४) राग झँझौटी—ताल झप

सदय हृदयकी सरस कहानी ।

योगी कहो सदा सुख भोगी ध्रुव समान सो ध्यानी ।
पार्वतीपति कृपापात्र सो अरु बिदेह-सम ज्ञानी ।
'केशी' रघुवरको सोइ भावै निश्छल भक्त अमानी ॥

(६२५) राग पीलू—ताल कहरवा

भाव-भोगी हमारे नया ।

आपसरी, ताप भरी, नेह झरी, छेमकरी पूतरि सरोतरि सजग नैना
भूपरक, भ्रूभरक, भवक्षरक, द्युतरक 'केशी' पुकारै दिन-रैना

उपदेश

(६२६) राग रागश्री—ताल झप

रामधनीसे हेत नहीं जो ।
य-अस्तको राज्य व्यर्थ है, जो न प्रेम रघुवंस मनीसे ।
द खाय बहुत दिन जीवै, पार लहै ना निज करनीसे ॥
तीनों लोक शोक सम तिनको, जो व्याकुल हैं भवरजनीसे ।
ी' जाते हाथ पसारे, लोन उठावत हैं पपनीसे ॥

(६२७) राग मलार—ताल रूपक

छिन-सुख लागि मानुष मरै ॥
विषय-रसमें मिल्यो माहुर तिहि उतारत गरै ।
नाभिचक्र उलटि परै अरु तखन फुस-फुस जरै ॥
हरिकृपा बिनु कहहु कैसे कवन यह दुख हरै ।
कैसे 'केशी' अमल सुख-पथ जीव जंगम चरै ॥

(६२८) राग झँझौटी—ताल तिताला

निर्मल मनको एक स्वभाव ॥
परिहर सीयाराम-पद पंकज, चितत और न काउ ।
जस जस सखि बुंदियात बदरवा, तस-तस कोमल भाउ ॥
एकरस बरसत नेक न जानत; कौन रंक को राउ ।
'केशी' काम कलाधर चीन्हत, चपल चंद्रिका चाउ ॥

(६२९) राग परज—ताल तिताला

जो मानै मेरी हित सिखवन ॥
सत्य कहूँ निज मनकी बात, सहिये हिम-तप-वर्षा-रु-बात ।
सिये मनको सब भाँति तात, जासों छूटै यह आवागमन ॥

पहिले पक्षी पृथ्वी पगुरत, फिर पंख जमे नभमें विचरत
अवसर आये जलमें पैरत, पै भूलत नहिं निज मीत पवन
करुनानिधानकी बानि हेरि, पुनि महामंत्र गज ध्वनिसों टेरि
'केशी' सिय-स्वामिनि केरि चेरि, समुझावति ध्यायिय सीतारवन

(६३०) राग पूरवी—ताल तिताला

भजन करिय निष्काम, हमारे प्यारे ।
नयन आँजि मन माँजि चेतिये सगुन ब्रह्म श्रीराम।
अश्व ह्रस्व-दीर्घ मत होवै ऐसो कसिये लगाम॥
क्षुब्ध वासना दुग्धधार सम मन्मथको विश्राम।
'केशी' रामहिं द्वैत न भावै सब विध पूरण काम॥

(६३१) राग सोहनी–ताल तिताला

जागहु पंथी भयउ विहाना ॥
सोवत बीती सारी रैनिया अब उठि करहु पयाना।
मेरु शृंगपर बैठि मुदित मन करिय रामको ध्याना॥
चखनि-स्रवनिको तिरबेनी महँ तारिय बोरिय प्राना।
'केशी' राम-नामकी धूनी सबहिं चिताय जगाना।

(६३२) राग भैरवी ताल तिताला

मानहु प्यारे, मोर सिखावन ।
बूँदबूँद तलाव भरत है का भादों का सावन।
तैसहि नाद-बिंदुको धारण अन्तःसुख सरसावन।
ध्वनि गूँजै जब जुगल रंध्रसे परसे त्रिकुटी पावन।
हियकी तीव्र भावना थिर करु पड़ै दूधमें जावन।
'केशी' सुरति न टूटन पावै दिव्य छटा दरसावन।

(६३३) राग झँझौटी—ताल तिताल

विषयरस पान-पीक-सम त्याग ॥
वेद कहैं मुनि साधु सिखावै विषय समुद्री आग ।
को न पान करि भो मतवाला यह ताड़ीको झाग ॥
वीतराग-पद मिलन कठिन अति काल कर्मके लाग ।
'केशी' एकमात्र तोहिं चहिय रामचरण-अनुराग ॥

(६३४) राग कल्याण—ताल तिताला

धाय धरो हरि चरण सवेरे ॥
को जाने कै बार फिरे हम चौरासी के फेरे ।
जन्मत-मरत दुसह दुख सहियत करियत पाप घनेरे ॥
भूलि आपनो भूप रूप भये काम कोह के चेरे ।
'केशी' नेक लही नहिं थिरता काल कर्मके पेरे ॥

(६३५) राग सोहनी—ताल झप

भावत रामहिं संयम इकरस ॥
क्ति भावना दृढ़ होवै तब, जब अर्पिय रघुपतिपर सरबस ।
ील निधान सुजान शिरोमणि परम स्वतंत्र दास-सेवा वस ॥
ो नहिं प्रेमवारि मन धोवै, सो सोवै सुख सहित कहहु कस ।
केशी' पाँच तत्त्व तीनों गुन, जो नाशै सोई पावै जस ॥

(६३६) राग सोरठ—ताल रूपक

भावुक, भावमय भगवान ।
तात बिनु भव चोप टूटे नहिं तव कल्यान ॥
चारु चितमें चोप चिखुरत चपल चरु चुचुहान ।
विरह चिनगी चमकि चटकै करहु अनुसंधान ॥
आत्महित साधन सकल इमि कहत वेद-पुरान ।
नाम नेह तुरीय तावै धरति 'केशी' ध्यान ॥

(६३७) राग सोरठ—ताल रूपक

कलि-प्रपंच-प्रसार, देखहु ॥
जहाँ सूइहुकी नहीं गति तहाँ मुसल प्रचार।
रसवती युवती बसन गहि चहत करन उधार ॥
नटी जलमहँ पैठि बोले करहु लोक-सुधार।
कामधेनु बिसुकिहि 'केशी' बाँझ गाय दुधार ॥

(६३८) राग सोरठ—ताल रूपक

रे मन, देश आपन कौन ?
जहँ बसै प्रियतम प्रकृतिपति सुमुख सीता रौन ॥
बिना समझे बिना बूझे करै इत-उत गौन।
सुख मिलत नहिं तोहिं सपने सदा खोजत जौन ॥
अजहुँ सूझत नाहिं तोहिं कछु करत आयुहि हौन।
कहति 'केशी' तहाँ चलु झट जहाँ अविचल भौन ॥

(६३९) राग तिलंग—ताल झप

मारे रहो, मन ॥
राम-भजन बिनु सुगति नहीं है, गाँठ आठ दृढ़ पारे रहो।
अबिस्वास करि दूरि सर्वथा, एक भरोसा धारे रहो ॥
सदा खिन्नप्रिय सिय-रघुनंदन, जानि दर्प सब डारे रहो।
'केशी' राम-नामकी ध्वनि प्रिय एक तार गुंजारे रहो ॥

(६४०) राग कामोद—ताल तिताला

चतुर कहात सुंदर ॥
करिबो भजन असल स्वारथ है, जिहि विधि सधै सधात।
परहित निरत उचित रहिबो है पुष्ट होत है गात ॥

जनकराज रहनी गहिबे ते, किल कल्यान जनात।
'केशी' नीति-निपुनता अपनी, या छिन परखी जात॥

(६४१) राग रामकली—ताल रूपक

जन हित राम धरत शरीर॥
भक्तवर प्रह्लादहित नरहरि भये रघुबीर।
द्रौपदी पत राखिबेको बनि गये प्रभु चीर॥
सकल भ्रम तजि भजिय रघुबर शांत-दांत-गभीर।
भक्तके हित धरे 'केशी' करकमल धनु-तीर॥

(६४२) राग जैजैवंती—ताल तिताला

कब हरि सुमिरनमें रस पैये॥
चिंतनकी चौघड़िया जानै, विज्ञान विरति-बल सब त्यागै।
अरु बिमल भाव मरि-गति पागै, 'केशी' हरि पै बलि-बलि जैये॥

(६४३) राग झँझौटी—ताल तिताला

रामलगन माते जे रहते॥
तिनकी चरन-धूरि ब्रह्मादिक, सिर धारन को चहते।
याही ते मानव-शरीरकी, महिमा बुधजन कहते॥
सो बपु पाय भजे राम नहिं ते सठ डहडह डहते।
'केशी' तोहिं उचित मारग सोइ जिहिं मुनिनायक गहते॥

(६४४) राग पीलू—ताल तिताला

हम न जावें कनक-गिरि-खोहा॥
जे जे गये नहीं लौटे पुनि उन्हें बहुत हम जोहा।
तहाँ विकट धन पूत बसत हैं को ले उनसे लोहा॥
आदि अंत कोउ बूझत नाहीं कौन माल यह पोहा।
'केशी' खोह नवेली अजहूँ कितने जन-मन मोहा॥

(६४५) राग भैरों—ताल तिताला

सुख सजनी मिलै नहिं अग जगमें।
धर्मराज नल आदि नृपतिगण, झूलि रहे सखि, या मगमें।
केते मुनि-ऋषि खोजत हारे काँटे चुभा लिये पग-खगमें॥
बहुविधि सविधि कर्मधर्महु करि, कीन्हें श्रम जप-तप जगमें।
'केशी' बिनु हरि-भक्ति न थिर, आये-गये-नर-नग-खगमें॥

(६४६) राग पूरबी—ताल तिताला

गोसाईं मत, सुजन सगा सोई ताली।
प्रेम-अटापै राम छटा लखि जो जूझै दै ताली।
नश्वर देह-गेह मँगनीको ठाढ़ि भुलावनवाली॥
मोह-रूपिणी धर्म-धूनिनी काल-कूटनी काली।
'केशी' भलो सजन घर रहना सहना मीठी गाली॥

लीला

(६४७) राग चेता-ताल कहरवा

धावत राम वकैयाँ, हो राम, धूरि भरे तन।
कौर लिये कर पाछे डोलति श्री कौसल्या मैया॥
लै कनियाँ झारत आँचरसों धूसर धूर-धुरैया।
'केशी' योगि ठाढ़ असीसत कुँवर जियाव गुसैंया॥

(६४८) राग बहार—ताल तिताला

वन विहरैं हमारे धनुपवारे।
श्याम-गौर मुनिवेष सँवारे, कसिकै तूण कमर डारे।
संग सीय सोभाकी मूरति, बनवासिन मन मोहिया रे॥
सखि चलु जन्म सफल करु या छिन, वड़े भाग वन पगु फारे।
'केशी' महूँ किरातिन वहिहौं, कहति शची गगनारे॥

(६४९) राग पूरबी—ताल कहरवा

'राम गरीब-निवाज' गुसाईं-बानी

हियको हेत सदा जो हेरत, क्षमाबील सिरताज।
कहाँ निषाद-गीध अरु शबरी, कहँ रघुकुल महराज॥
प्रिय सौमित्र-मान भंजन किये, बिरुदावलिके काज।
'केशी' कीटभृंगकी संगति, लोक काजके व्याज॥

(६५०) राग हिंडोला—ताल तिताला

आँगनमें खेलत रघुराई।
धूरि बटोरि लिंग शिव थापत अक्षत छींटत हरपाई॥
लै गडुआ सौमित्रि खड़े हैं सचिव-सुवन हर-हर गाई।
बैठे भूप वसिष्ठ निहारत 'केशी' लाहु नयन पाई॥

(६५१) राग चैता—ताल कहरवा

बाजी बँसुरिया हो रामा कि दियरा बारत री।
बाती बरी री तरजनिया काँपति चार अँगुरिया॥
कृष्ण कहैं अब राम भजहु सब रोम-रोम प्रति तुरिया।
'केशी' तम फाटे मग झलकै कहिगे माधवपुरिया॥

बनीठनी

(रसिकबिहारी)

लीला

(६५२) राग कल्याण—ताल तिताला

रतनारी हो थारी आँखड़िया।
प्रेम छकी रसबस अलसाड़ी, जाणे कमलकी पाँखड़ियाँ।

सुंदर रूप लुभाई गति मति, हो गई ज्यूं मधु माखड़ियाँ।
रसिकबिहारी वारी प्यारी, कौन वसी निस कांखड़ियाँ ॥

(६५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

हो झालो दे छे रसिया नागर पनाँ।
साराँ देखे लाज मराँ छाँ आवाँ किण जतनाँ ॥
छैल अनोखो कह्यो न मानै लोभी रूप सनाँ।
रसिक बिहारी नणद बुरी छै हो लाग्यो म्हारो मनाँ ॥

(६५४) राग खम्माच—ताल कहरवा

पावस रितु वृन्दावनकी दुति दिन-दिन दूनी दरसै है।
छवि सरसै है लूमझूम यों सावन घन घन बरसै है ॥
हरिया तरवर सरवर भरिया जमुना नीर कलोलै है।
मन मोलै है, बागोंमें मोर सुहावणो बोलै है ॥
आभा माहीं बिजली चमकै जलधर गहरो गाजै है।
रितु राजै है, स्यामकी सुंदर मुरली बाजै है ॥
(रसिक) बिहारीजी रीझीज्योपीतांवरप्यारीजी रीचूनरसारी
सुखकारी है, कुंजाँ कुंजाँ झूल रह्या पिय प्यारी है ॥

(६५५) राग छाया—ताल चर्चरी

उड़ि गुलाल घूंधर भई तनि रह्यो लाल वितान।
चौरी चारु निकुंजनमें ब्याह फाग सुखदान ॥
फूलनके सिर सेहरा, फाग रंग रँगे वेस।
भाँवरहीमें दौड़ते, लै गति सुलभ सुदेस ॥
भीण्यो केसर रंगसूं लगे अरुन पट पीत।
डालै चाँचा चौकमें गहि बहियाँ दोउ मीत ॥

रच्यौ रँगीली रैनमें, होरीके बिच ब्याह।
बनी बिहारन रसमयी रसिकबिहारी नाह॥

सौंवा

(६५६) राग केदारा—ताल तिताला

मैं अपनो मनभावन लीनों॥
न लोगनको कहा कीनों मन दै मोल लियो री सजनी।
ल अमोलक नंददुलारो नवल लाल रंग भीनों॥
हा भयो सबके मुख मोरे मैं पायो पीव प्रबीनों॥
सिकबिहारी प्यारो प्रीतम सिर बिधना लिख दीनों॥

प्रतापबालाजी

रूप

(६५७) राग पीलू—ताल कहरवा

वारी थारा मुखड़ा री श्याय सुजान॥
मंद मंद मुख हास विराजै, कोटिक काम लजान।
अनियारी अँखियाँ रस भीनी, बाँकी भौंह कमान॥
दाड़िम दसन अधर अरुणारे, वचन सुधा सुखखान।
आमसुता प्रभुसों कर जोरे मेरे जीवन-प्रान॥

(६५८) राग कल्याण—ताल रूपक

मो मन परी है यह बान॥
चतुरभुजको चरण परिहरि, ना चहूँ कछु आन।
कमल नैन विसल सुंदर, मंद मुख मुसकान॥
सुभग मुकुट सुहावनों सिर, लसै कुंडल कान।
प्रगट भाल विसाल राजत, भौंह मनहुँ कमान॥

अंग अंग अनंगकी छवि पीत पट पहिरान।
कृष्णरूप अनूपको मैं, धरूँ निसिदिन ध्यान॥
सदा सुमिरूँ रूप पल पल, कला कोटि निदान।
जामसुता परतापके भुज, चार जीवन-प्रान॥

लीला

(६५९) राग मल्हार—ताल तिताला

चतुरभुज झूलत श्याम हिंडोरें।
कंचन खंभ लगे मणिमानिक, रेसमकी रँग डोरें॥
उमड़ि घुमड़ि घन बरसत चहुँ दिसि, नदियाँ लेत हिलोरें।
हरि हरि भूमि लता लपटाई बोलत कोकिल मोरें॥
बाजत बीन पखावज बंसी, गान होत चहुँ ओरें।
जामसुता छबि निरखि अनोखी, वारूँ काम किरोरें॥

सिखावन

(६६०) राग बिलावल—ताल तिताला

भजु मन नंद नंदन गिरधारी॥
सुख-सागर करुणाको आगर, भक्तवछल बनवारी।
मीरा करमा कुवरी, सबरी, तारी गौतम नारी।
वेद पुराननमें जस गायो, ध्याये होवत प्यारी।
जामसुताको श्याम चतुरभुज, ले जा खबर हमारी।

प्रेम

(६६१) राग पीलू—ताल कहरवा

लगन म्हारी लागी चतुरभुज राम॥
श्याम सनेही जीवन येही, औरनसे क्या काम

ान निहारूँ पल न बिसारूँ, सुमिरूँ निस दिन श्याम ॥
ृरि सुमिरन ते सब दुख जावे, मन पावै विसराम ।
ान मन धन न्योछावर कीजै, कहत दुलारी जाम ॥

(६६२) राग बागेश्री—ताल कहरवा

प्रीतम हमारो प्यारो श्याम गिरधारी है ॥
ोहन अनाथ-नाइ, संतनके डोले साथ,
वेद गुण गावे गाथ, गोकुल बिहारी है ॥
कमल विसाल नैन, निपट रसीले बैन,
दीनतको सुख दैन, चार भुजा धारी है ॥
केशव कृपा निधान, वाही सो हमारो ध्यान,
तन मन वारूँ प्रान जीवन मुरारी है ॥
सुमिरूँ मैं साँझ-भोर, वार-बार हाथ जोर,
कहत प्रताप कौर जामकी दुलारी है ॥

युगलप्रियाजी

गुरु-महिमा

(६६३) राग ऐमन कल्याण—ताल तिताला

श्रीगुरुदेव भरसो साँचौ ।
ट जाम गुरु-ध्यान हिये धरु, मारो काम क्रोध रिपु पांचौ ॥
न मन धन सर्वस लै अरपौ श्रीगुरु-कृपा भक्ति रँग राँचौ ।
गलप्रिया श्रीगुरु गोबिंदको, निमिष न भूल लखे सब काँचौ ॥

साधु-महिमा

(६६४) राग वेसी—ताल तिताला

साधुनकी जूंठन नित लहिये, सुमिरत नाम हियेमें र
प्रेम करो अब हरिजन ही सों, औरनको संग भूलि न चा
इनके दरस परस सुख पैयत, भगवत रहस कार त्यों ग
जुगलप्रिया चरनोदक लै मुख, जनम जनमके कलमप दा

नाम

(६६५) राग रामकली—ताल तिताला

माई मोकों जुगलनाम निधि भाई।
सुख-संपदा जगतकी झूठी, आई संग न जाई
लोभी को धन काम न आवै अंतकाल दुखदाई
जो जोरै धन अधम करत तें, सर्वस चलै नसाई
कुलके धरम कहा लै कीजै, भक्ति न मनमें आई
जुगलप्रिया सब तजौ भजौ हरि, चरन-कमल मन लाई

रूप

(६६६) राग बहार—ताल चर्चरी

सुभग सिंहासन रघुराज राम।
सिर पै सुख पाग लसत हरित मनि सुझलमल
मुकता जुत कुंडल कपोलनि ललाम
रही है प्रभा फैलि गैलि गैलि अंबर मह
प्रेम भरी साजैं तालै गति बाध याम
चकित होय निरखत जब वारति हौं सरवस त
भयो कंप स्वेद सखी बाढ्यो तन काम

जुगलप्रिया द्रगनि लसी, मूरत मत माहिं बसी,
मुंदरी पै देख्यो जब लिखो राम नाम ॥

(६६७) राग नट मल्हार—ताल तिताला

नैन सलोने खंजन मीन।
चंचल तारे अति अनियारे, मतवारे, रसलीन ॥
सेत श्याम रतनारे बाँके, कजरारे रँग भीन।
रेसम डोरे ललित लजीले, ढीले, प्रेम अधीन ॥
अलसौहैं तिरसौहैं, मोहैं नागरि नारि नवीन।
जुगलप्रिया चितवनिमें घायल, होवै छिन-छिन छीन ॥

(६६८) रग अडाना—ताल तिताला

मिलन अनूठी प्यारे तिहारी ॥
कहनि अनूठी करनि अनूठी, रहनि अनूठी पै बलिहारी।
चलनि अनूठी मुरति अनूठी, झुकनि अनूठी लागत प्यारी ॥
जो समुझो सो सबहि अनूठी, चितवनि हँसनि मधुर बसकारी।
जुगलप्रिया पिय परम अनूठे तुम सम हौं तुम कुंजबिहारी ॥

लीला

(६६९) राग भूपाली—ताल तिताला

बाँकी तेरी चाल सुचितवनि बाँकी।
जहाँ आवत जिहि मारग हो, झुमक झुमक झुकि झाँकी।
छिप छिप जात न आवत सुन्मुख, लखि लोनी छवि छाकी ॥
जुगलप्रिया तेरे छल-बल तें हौं सब ही विधि थाकी ॥

(६७०) राग हिंडोल—ताल दीपचंदी

अबीर अबीर न डारो।
अँखियाँ रूप रंग रस छाकीं, इतकी ओर निहारो ॥

अंतर होत जो अवलोकनकों, हितकी बात विचारौ।
जुगलप्रिया मन जीवन जीको, जा हट ओट उचारौ॥

(६७१) राग गौंड मल्हार—ताल तिताला

माई उमड़ि घुमड़ि घन आये।
निसि अँधियारी झुकी सावनकी न्यारी,
चली री जानि दोउ चरन दबाये
चपला चमकाई चख रहे चकराई,
बूँदन झर लाई पिउ भीजत पाये
जुगलपियारी प्रीति रीति कछु न्यारी,
रोकि रहीं सब नारी पिया कंठ लगाये।

(६७२) राग सावनी कल्याण—ताल तिताला

ब्रजमंडल अमरत बरसै री।
जसुदा नंद गोप गोपिनको, सुख सोहाग उमगै सरसै री॥
बाढ़ी लहर अंग-अंखनमें, जमुना तीर नीर उछरै री।
बरसत कुसुम देवअंवर तें सुरतिय दरसन हित तरसै री॥
कदली बंदनवार बँधावैं, तोरन धुज सँथिया दरसै री।
हरद दूब दधि रोचन साजें, मंगल कलस देखि हरसै री॥
नाचें गावैं रंग वढ़ावैं जो जाके मनमें भावै री।
सुभ सहनाई बजत रात दिन, चहुँ दिसि आनँदघन छावै री॥
ढाढ़ी ढाढ़िन नाचि रिझावै, जो चाहैगो सो पावै री।
पलना ललना झूल रहे हैं, जसुदा मंगल गुन गावै री॥
करै निछावर तन मन सरबस, जो नँदनंदनको जोवै री।
जुगलप्रिया यह नंद महोत्सव, दिन प्रति वा ब्रजमें होवै री॥

श्रीराधा-रूप

(६७३) राग तिलंग—ताल रूपक

राधा-चरनकी हूँ सरन ।
छत्र, चक्र सुपद्म राजत, सुफल मनसा करन ॥
ऊर्ध्वरेखा जव धुजा दुति, सकल सोभा धरन ।
वामपद गद शक्ति, कुंडल, मीन, सुवरन बरन ॥
अष्टकोण सुबेदिका, रथ प्रेम आणँद भरन ।
कमलपदके आसरे, नित, रहत राधारमन ॥
काम दुख संताप भंजन, विरह-सागर तरन ।
कलित कोमल सुभग सीतल हरत जियकी जरन ॥
जयति जय नव-नागरी-पद सकल भव भय हरन ।
जुगलप्यारी नैन निरमल, होत लख नख किरन ॥

श्रीराधा प्रार्थना

(६७४) राग धनाश्री—ताल चौताला

जय राधे, श्रीकुंज विहारिनि, वेगहिं श्रीव्रजवास दीजिये ।
वेली विटप जमुनजल औ रज, संत संग रँग भीजिये ॥
बहु दुख सह्यो, सहौं अब कबलौं, अभय सवनि सों कीजिये ।
सरनागतकी लाज आपको, कृपा करो तो जीजिये ॥
जो कछु चूक परी है अबलौं, सो सब क्षमा करीजिये ।
जुगलप्रिया अनुचरी आपकी, बिनय स्रवन सुनि लीजिये ॥

प्रार्थना

(६७५) राग हमीर—ताल तिताला

नाथ अनाथकी सब जानै ॥

ठाढ़ी द्वार पुकार करति हौ, स्रवन सुनत नहिं कहा रिसानै।
की बहु खोट जानि जिय मेरी, की कछु स्वारथ हित अरगानै।
दीन बंधु मनसाके दाता, गुन औगुन कैधों मन आनै।
आप एक हम पतित अनेकन, यही देखि का मन सकुचानै।
झूठौं अपनो नाम धरायो, समझ रहे हैं हमहि सयानै।
तजो चेक मनमोहन मेरे, जुगलप्रिया दीजै रस दानै।

प्रेम

(६७६) राग हंसकंकनी—ताल तिताला

प्रीतम रूप दिखाय लुभावै। यातैं जियरा अति अकुलावै।
जो कीजत सो तौ भल कीजत, अब काहे तरसावै।
सीखी कहाँ निठुरता एती, दीपक पीर न लावै।
गिरि गिरि मरत पतंग जोतिमें, ऐसेहु खेल सुहावै।
सुन लीजै बेदरद मोहना, जित अब गोहि सतावै।
हमरी हाय बुरी या जगमें, जिन बिरहाग जरावै।
जुगलप्रिया मिलिबो अनमिलिबो, एकहि भाँति लखावै।

(६७७) राग टंकरा—ताल तिताला

रूप किरिकिरी परी नैनमें, जियरा अति घबराय हो।
कौन उपाय करूँ हौं आली, जानति जो तौ बताय हो॥
मनकी तौ कोई समुझत नाहीं, कहे कौन पतयाय हो।
जुगलप्रिया देखे नहिं मद्रो, परी बिपतिमें हाय हो॥

(६७८) राग मेघरंजनी—ताल झप

श्याम स्वरूप बसो हियमें, फिर और नहीं जग भावे री ।
कहा कहूँ को माने मेरी, सिर बीती सो जाने री ॥
रसना रस ना सब रस फीके द्रगिन न और रंग लागै री ।
श्रवननि दूजी कथा न भावे, सुरत सदा पियकी जागै री ॥
बढ़्यो विरह अनुराग अनोखो, लगन लगी मन नहिं लागै री ।
जुगलप्रियाके रोम रोम तें, स्याम ध्यान नहिं पल त्यागै री ॥

विरह

(६७९) राग जोगिया—ताल चर्चरी

कोई दुख जाने नहिं अपनो, निज सुख होय गयो सपनो ।
मन हरि लीन्हों नैन-सैनसों, बिरह-ताप तन तपनो ॥
मिलि बिछुरी जोगिन बनि डोलूँ रूप ध्यान गुन जपनो ।
जुगलप्रिया जग जीवन धिक अस, काल व्याल भय कँपनो ॥

(६८०) राग सावेरी—ताल इकताला

नयननि नींद हिरानी, बोली कोयल बागमें ।
श्रवन सुनत बरछी-सी लागी, कहा बताऊँ जागमें ॥
व्याकुल ह्वै सुध बुध सब भूली, हरी बिरहकी आगमें ।
जुगलप्रिया हरि सुधहू न लीन्ही, कहा लिखी या भागमें ॥

(६८१) राग गुनकली—ताल चर्चरी

हीरो-सी हिय झार बढ़ै री । यह बिछुरन मेरे प्रान हरै री ॥
नेह नगरमें धूम मचाई, फर फिरावत दै दै थेरी ।
तन मन प्रान छार भये, मेरे धीरज जियरा नाहिं धैरी ॥
यह ऊधम अब कबलौं सहिये, मनमानी मो सँग जु करै री ।
जुगलप्रिया [illegible] री ॥

टेक

(६८२) राग दुर्गा—ताल झप

साँवलियाकी चेरी कहौ री ।

चाहे मारो चहै जियावौ, जनम जनम नहिं टेक तजौं री
कर गहि लियो कहत हौ साँची, नहिं मानैं तौ तेरी सौं री।
जो त्रिभुवन ऐश्वर्य लुभावै, तिनका लौं हौं सो समुझौं री
जुगलप्रिया सुन मेरी सजनी, प्रकट भई अब नाहिन चोरी

सिखावन

(६८३) राग नट विलावल—ताल तेवरा

मन तुम गलिनता तजि देहु ।
सरन गहु गोविंदको अब करत कासों नेहु ॥
कौन अपने आप काके, परे माया सेहु ।
आज दिन लौं कहा पैहौं सेहु ॥
विपिन-वृन्दा वास करु जो, सब सुखिनको गेहु ।
नाम मुखमें ध्यान हियमें, नैन दरसन लेहु ॥
छाँड़ि कपट कलंक जगमें, सार साँचो एहु ।
जुगलप्रिया बन चित्त चातक, स्याम स्वाती मेहु ॥

(६८४) राग हंसधुन—ताल रूपक

दृग, तुम चपलता तजि देहु ।
गुंजहु चरनारबिन्दनि, होय मधुप सनेहु ॥
दसहुँ दिसि जित तित फिरहु, किन सकल जगरस लेहु ।
पै न मिलिहै अमित सुख कहुँ, जो मिलै या गेहु ॥
गहो प्रीति प्रतीत दृढ़ ज्यों, रटत चातक मेहु ।
बनो चारु चकोर पियमुख, चंद्र छबि रस एहु ॥

(६८५) राग पीलू—ताल कहरवा

पापिनको सँग छाँड़ि जतन कर ।
जिनके बचन बान सम लागत,
सहज मिलन दरसन परसन डर ॥
सुखको लेस कहाँ परमारथ,
विषय-लीन नित रहत अधम नर ।
जुगलप्रिया जिनि बिमुख मिलैं अब,
रहूँ नर्कमें चहै कल्प भर ॥

चेतावनी

(६८६) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

यह तन इक दिन होय जु छारा ॥
नाम निशान न रहिहैं रंचहु, भूलि जायगो सब संसारा ।
काल घरी पूरी जब ह्वैहै, लगै न छिन छाँड़त भ्रम जारा ॥
या माया नटनीके बसमें, भूलि गयौ सुख सिंधु अपारा ।
जुगलप्रिया अजहूँ किन चेतत, मिलिहै प्रीतम प्यारा ॥

(६८७) राग माँड़—ताल तिताला

बगुला भक्तन सौं डरिये री ॥
एक पग ठाढ़े ध्यान धरत हैं, दीन मीन लौं किम बचिये री ।
ऊपर तें उज्जल रँग दीखत, हिये कपट हिंसक लखिये री ॥
इनतें दूरहि रहे भलाई, निकट गये फंदनि फँसिये री ।
जुगलप्रिया मायावी पूरे, भूलि न इन सँग पल बसिये री ॥

दीनता

(६८८) राग झँझोटी—ताल चर्चरी

सुनिये नाथ गरीब निवाज ! आई सरन तुहें सब लाज ।

अधम-उधारन विरद सम्हारन, त्रिभुवनके सिरताज ।
कुंजद्वार हौं खड़ी कबकी, त्राहि त्राहि महराज ॥
करुनाकर अब बोलि लीजिये करिये बिलम न आज ।
जुगलप्रियाको अभय कीजिये, यह नहिं बड़ काज ॥

(६८९) राग सोरठ—ताल दादरा

मेरे गति एक आप, दूजो कोऊ और ना ।
स्त्रीको तन मलीन, कर्म अधिकार ना ॥
चपल बुद्धि बरनी कबि होत हिये ज्ञान ना ।
मंद-भाग्य मंदकर्म बनत नाहिं साधना ॥
विद्या गुन हीन दीन, नैक भक्ति भाव ना ।
नेम ध्यान धर्म कछू होत ना उपासना ॥
गेह फँसी ग्रसी रोग, एकहु उपाय ना ।
करूँ कहा जाऊँ कहाँ काहू पै बसाय ना ।
इतने पै द्रोह करत, तात भ्रात साजना ।
जुगलप्रिया तऊँ तुम्हें, प्यारे प्रिय लाज ना ॥

चाह

(६९०) राग वृन्दावनी सारंग—ताल तिताला

वृंदावन अब जाय रहूँगी, विरति न सतनेहु जहाँ लहूँगी ।
जो भावै सो करौ सबै मिलि, मैं तो दृढ़ हरि चरन गहूँगी ॥
प्राननाथ प्रियतमके ढिग रहि, मनमाने बहु सुखनि पगूँगी ।
भली भई बन गई बात यह, अब जगदारुन दुख न सहूँगी ॥
करिहैं सुरति कबहुँ तो स्वामी, विषयानलमें अब न दहूँगी ।
जुगलप्रिया सतसंग मधुकरी, विमल जमुन जल सदा चहूँगी ॥

(६६१) राग हीम—ताल तिताला

चरन चलौ श्रीवृंदावन मग, जहँ मुनि अलि पिक कीर ॥
कर तुम करौ करम कृष्णार्पण अहंकार तजि धीर ।
मस्तक नवियौ हरिभक्तनकों छाँड़ि कपटको चीर ॥
स्रवन सदा सुनियौ हरि-जस-रस, कथा भागवत हरी ।
नैना तरसि तरसि जल ढरियौ, पिय मग जाय अधीर ॥
नासा तवलौं स्वांसा भरियौ, सुरता रखि पिय तीर ।
रसना चखियौ महा प्रसादै, तजि विषया-विष नीर ॥
सुधि बुधि बढ़े प्रेम चरनन, ज्यों तृष्णा बढ़े शरीर ।
चित्त चितेरे, लिखियो पियकी, मूरति हृदय कुटीर ॥
इंद्रिय मन तन भजो श्यामकों, वढ़े विरहकी पीर ।
जुगलप्रिया आसा जिय धरियो, मिलिहैं श्रीवलवीर ॥

(६६२) राग पीलू—ताल कहरवा

जलीला रस भावै अब तौ, श्रीगिरिराज अंकमें रहिये ।
रिये विनय निहोरि भाँति बहु, स्यामरूप मृदु माधुरि लहिये ॥
लिये संग रसिक भक्तनके, प्रेम प्रवाह मगन ह्वै वहिये ।
य गुविंद नाम गुन कीर्तन, जनम जनमके तहँ दुख दहिये ॥
रिये कालिंदी जल मज्जन, नित मधूकरी लै निरबहिये ।
गलप्रिया प्रीतम भुज भरिकै, पाइअ जो कछु चहिये ॥

(६९३) रग पीलू—ताल कहरवा

आओ प्यारे हृदय-सदनमें, पल कपाट दै राखूंगी ।
जान लिये छल-छंद-फंद सब, अब न चलै सत्य भाखूंगी ॥
करिहै जो कोई बिघन मिलनमें ताके सब कल-बल नाखूंगी ।
जुगलप्रिया मनमोहन तुम्हरौ, द्रगभरि रूपसुधा चाखूंगी ॥

(६९४) राग जैजैवंती—ताल तिताला

मैं पाऊँ कृपाकरि मोहिनी, श्रीकुंज भवनकी सोहिनी
मन मानिक मुक्ता लर टूटें, बिखरि परें सो खोजिनी।
होत प्रभात सुहात न अब कछु, करूँ टहल हिय सोधिनी
जुगलप्रिया बड़ भाग मनाऊँ, चरन चिन्ह रज लोभिनी।

ब्रज-महिमा

(६९५) राग बहार—ताल तिताला

वृंदावन रस काहि न भावै।
विटप वल्लरी हरी हरी त्यों, गिरिवर जमुना क्यों न गुहा
खग-मृग-पुंज कुंज-कुंजनिमें, श्रीराधावल्लभ गुन गा
पै हिंसक वंचक रंचक यह, सुख सपनेहू लेस न पा
धनि ब्रज रज धनि वृंदावन धनि, रसिक अनन्य जुगल बपु प्या
जुगलप्रिया जीवन ब्रज साँचो, नतरु वादि मृगजल कों ध

श्रीयमुना-प्रार्थना

(६९६) राग देस—ताल कहरवा

जय श्रीजमुने कलि-मल-हारिनि !
करु करुना प्रीतमकी प्यारी, भँवर तरंग मनो
पुलिन वेलि कुसुमित सोभित अति, कंजन
विहरत जीव जंतु पसु पंछी, स्याम रूप रस-
जे जन मज्जन करत विमल जल, तिनको सब सु
जुगलप्रिया [illegible]

मिथिला-धाम

(६९७) राग काफी—ताल तिताला

ज्ञान शुभ कर्मको सुथल मिथिला धाम ॥
जनक जोगींद्र राजेंद्र राजत बिदेह ब्रह्म,
सुख अनुभवत निसि दिवस आठो जाम।
भोग रोग मानत हैं, सहज ही बिराग भाग,
शान्ति रूप कर्म करें पूरे निह्काम ॥
श्रीमती सुनैना भली सुकृत बेलि फूली-फली,
जनमि श्रीसीय पाये लौने वर राम।
जुगलप्रिया सरिता बन बाग तरु तड़ाग राग,
नारी नर सोहैं सब अति ᐧम ॥

आरती

(६९८) राग जलधर—ताल तिताला

मंगल आरति प्रिया प्रीतमकी । मंगल प्रीति रीति दोउनकी ॥
मंगलकान्ति हँसनि दसननकी । मंगल मुरली बीनाधुनकी ॥
मंगल बनिक त्रिभंगी हरिकी । मंगल सेवा सब सहचरकी ॥
मंगल सिर चंद्रिका मुकुटकी । मंगल छबि नैननिमें अटकी ॥
मंगल छटा फबी अँग अँगकी । मंगल गौर स्याम रसरँगकी ॥
मंगल अति कटि पियरे पटकी । मंगल चितवनि नागरनटकी ॥
मंगल शोभा कमलनैनकी । मंगल माधुरि मृदुल बैनकी ॥
मंगल वृन्दावन मग अटकी । मंगल क्रीड़न जमुना तटकी ॥
मंगल चरन अरुन तरुवनकी । मंगल करनि भक्तिहरि जनकी ॥
मंगल जुगलप्रिया भावनकी । मंगल श्रीराधा-जीवनकी ॥

(६९४) राग जैजैवंती—ताल तिताला

मैं पाऊँ कृपाकरि मोहिनी, श्रीकुंज भवनकी सोहिनी।
मन मानिक मुक्ता लर टूटैं, बिखरि परैं सो खोजिनी॥
होत प्रभात सुहात न अब कछु, करूँ टहल हिय सोधिनी।
जुगलप्रिया बड़ भाग मनाऊँ, चरन चिन्ह रज लोभिनी॥

व्रज-महिमा

(६९५) राग बहार—ताल तिताला

वृंदावन रस काहि न भावै।
बिटप बल्लरी हरी हरी त्यों, गिरिवर जमुना क्यों न सुहावै
खग-मृग-पुंज कुंज-कुंजनिमें, श्रीराधावल्लभ गुन गावै
पै हिंसक बंचक रंचक यह, सुख सपनेहू लेस न पावै
धनि ब्रज रज धनि वृंदावन धनि, रसिक अनन्य जुगल बपु ध्यावै
जुगलप्रिया जीवन ब्रज साँचौ, नतरु बादि मृगजल कों धावै

श्रीयमुना-प्रार्थना

(६९६) राग देस—ताल कहरवा

जय श्रीजमुने कलि-मल-हारिनि !
करु करुना प्रीतमकी प्यारी, भँवर तरंग मनोहर धारिनि॥
पुलिन बेलि कुसुमित सोभित अति, कंजन चंचरीक गुंजारिनि।
विहरत जीव जंतु पसु पंछी, स्याम रूप रस-रंग बिहारिनि॥
जे जन मज्जन करत बिमल जल, तिनको सब सुख मंगलकारिनि।
जुगलप्रिया हजै कृपाल अब, दीजै कृष्ण-भक्ति अनपायिनि॥

मिथिला-धाम

(६९७) राग काफी—ताल तिताला

ज्ञान शुभ कर्मको सुथल मिथिला धाम॥
जनक जोगींद्र राजेंद्र राजत विदेह ब्रह्म,
सुख अनुभवत निसि दिवस आठौ जाम।
भोग रोग मानत हैं, सहज ही विराग भाग,
शान्ति रूप कर्म करैं पूरे निहकाम॥
श्रीमती सुनैना भली सुकृत वेलि फूली-फली,
जनमि श्रीसीय पाये लौने बर राम।
जुगलप्रिया सरिता बन बाग तरु तड़ाग राग,
नारी नर सोहैं सब अति ाम॥

आरती

(६९८) राग जलधर—ताल तिताला

ंगल आरति प्रिया प्रीतमकी। मंगल प्रीति रीति दोउनकी॥
ंगलकान्ति हँसनि दसननकी। मंगल मुरली बीनाधुनकी॥
ंगल वनिक त्रिभंगी हरिकी। मंगल सेवा सब सहचरकी॥
ंगल सिर चंद्रिका मुकुटकी। मंगल छबि नैननिमें अटकी॥
ंगल छटा फबी अँग अँगकी। मंगल गौर स्याम रसरँगकी॥
ंगल अति कटि पियरे पटकी। मंगल चितवनि नागरनटकी॥
ंगल शोभा कमलनैनकी। मंगल माधुरि मृदुल बैनकी॥
ंगल वृन्दावन मग अटकी। मंगल क्रीड़न जमुना तटकी॥
ंगल चरन अरुन तरुवनकी। मंगल करनि भक्तिहरि जनकी॥
ंगल जुगलप्रिया भावनकी। मंगल श्रीराधा-जीवनकी॥

रामप्रियाजी

सिखावन

(६९९) राग प्रभाती—ताल तिताला

तू न तजत सब तोहिं तजेंगे ।
जा हित जग जंजाल उठावत तोकहँ छाँड़ि भजेंगे ॥
जाकहँ करत पियार प्राणसम जो तोहिं प्राण कहेंगे ।
सोऊ तोकहँ मर्‌यो जानिकै देखत देह डरेंगे ॥
देह गेह अरु नेह नाहते नातो नहिं निबहेंगे ।
जा बस है निज जन्म गँवावत कोउ न संग रहेंगे ॥
कोऊ सुख जग दुख विहीन नहिं, नहिं कोउ संग करेंगे ।
रामप्रिया बिनु रामललाके भव-भय कोउ न हरेंगे ॥

किङ्किणी-ध्वनि

(७००) राग तिलक कामोद—ताल तिताला

जब किंकिनी धुनि कान परी री ॥
लख ललचाय लखनसों लालन हँसि यह बात कही री ।
मानहु मान महान महादल कै दुंदुभिकी सान चली री ॥
बिश्वविजय अब कीन्हें चाहत मम दृढ़ता लखि भाजि चली री ।
रामप्रियाके रामललाको आजु लली मन छीनि चली री ॥

प्रार्थना

(७०१) राग गौरी—ताल चर्चरी

जय जयति जय रघुबंशभूषण राम राजिवलोचनम् ।
त्रैतापखंडन जगत-मंडन ध्यानगम्य अगोचरम् ॥

अद्वैत अविनाशी अनिन्दित मोक्षप्रद अरिगंजनम् ।
तव शरण भवनिधि-पारगायक अन्यजगतविडम्बनम् ॥
दुख-दीन-दारिके विदारक दयासिन्धु कृपाकरम् ।
त्वं रामप्रियके राम जीवनूमरि मंगलमंगलम् ॥

बाल्य-मय

(७०२) राग कौसी—ताल कहरवा

जोई जल व्यापक जहानको जननहार,
जाको ध्यान केते जग-जालसों निपटिगो ।
जोई दल्यो दानव दिखायो नरसिंहरूप,
उदित दिगंतसों दुहाई हेत हटिगो ॥
रामप्रिया सोई औध-महलको चित्र देखि,
धाय घबराय मणिखंभ सो लपटिगो ।
जू जू कहिबेको तुतराय आय दू दू कहि,
अतिहि सकाय माय-अंकसों छपटिगो ॥

रानी रूपकुँवरिजी

महिमा

(७०३) राग श्रीरंजनी—ताल तिताला

श्याम छबिपर मैं वारी वारी ॥
देवन माहीं इंद्र तुमहीं, हौ उडुगण बीच चंद्र उजियारी ।
सामवेद वेदनमें तुमहीं, हौ सुमेरु पर्वतन मझारी ॥
सरितन गंगा, वृक्षन पीपर, जल आशयमें सागर पारी ।
देव-ऋषिनमें नारद स्वामी, कपिल मुनी सिद्धन सुखकारी ।।

उच्चैश्रवा हयनमें तुमहीं, गज ऐरावत तुमहि मुरारी।
गौवन कामधेनु, सर्पनमें बासुकि, बज्र आप हथियारी॥
मृगन मृगेन्द्र, गरुड़ पक्षिनमें, तुमहीं मीन सदा जलचारी।
रूपकुँवरि प्रभु छविके ऊपर, तन मन धन सब है बलिहारी॥

(७०४) राग टोडी—ताल तिताला

राखत आये लाज शरणकी।
राखी मीरा नारि अहिल्या लाज बिभीषण चरन गिरनकी।
ध्रुव प्रह्लाद विदुर सुधि राखी, द्रुपदसुताके चीरहरणकी॥
गोपीग्वालवालवृज-बनितन, राखी सुधि गिरिनखनधरनकी।
सोइ लाज प्रभु रखने अइहैं, रूपकुँवरिके सब गृह जनकी॥

रूप

(७०५) राग ललित—ताल तिताला

देखो री छवि नन्दसुवनकी।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, मुक्त माल गर मनु किरननकी
देखो री छवि०॥
कर कंकन कंचनके शोभित, उर भृगुलता नाथ त्रिभुवनकी
देखो री छवि०॥
तन पहिरे केसरिया बागो अजब लपेटन पीतबसनकी
देखो री छवि०॥
रूपकुँवरि धुनि सुनि नूपुरकी, छवि निरखति श्यामपगनकी
देखो री छवि०॥

(७०६) राग हमीर—ताल तिताला

बस गये नैनन माँहि बिहारी ॥
देखी जबसे श्यामलि मूरति टरत न छबि दृग टारी।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल बाम अंग श्री प्यारी ॥
प्रेम भक्ति दीजै मुहि स्वामी अपनी ओर निहारी।
रूपकुंवरि रानीके साधहु कारज सकल मुरारी ॥

श्रीराधा-रूप

(७०७) राग श्री—ताल तिताला

मूरति मुहनियाँ रधिकाजूकी ।
दर वसन अंग सब राजति बिहँसति वदन मृदुल मुसकनियाँ ॥
स चंद्रिका बीज धूल युत कर्णफूल वेसर लटकनियाँ।
5 कंठ श्रीमुक्तन माला हार जटित नव लाख रतनियाँ ॥
जू बाजू बटा अजूवा लटकन पहुँची रतन धकनियाँ।
षंटिका राजत मणिमय कर किंकण बाजत झनकनियाँ ॥
वट बिछिया आदि दसाँगुर पट युग पायजेब पैंजनियाँ।
कुंवरि महरानी चेरी मातु भक्ति दै अचल अपनियाँ ॥

सिखावन

(७०८) राग देसी—ताल कहरवा

भज मन राधा गोपाल छोड़ो सब झगरौ ॥
सुत पति लखि तात मात सँगमें न कोऊ जात
झूठौं संसार जाल मायाको बगरौ।
मिथ्या धन धाम ग्राम झूठो है जग तमाम
नाहक ममतामें फँसो चरणमें लगरौ ॥
यमपुर जब मार परे कोउ न सहाय करे
तन मन धन गेह नेह भृत जात सगरौ।

उच्चैःश्रवा हयनमें तुमहीं, गज ऐरावत तुमहिं मुरारी।
गोवन कामधेनु, सर्पनमें बासुकि, वज्र आप हथियारी॥
मृगन मृगेन्द्र, गरुड़ पक्षिनमें, तुमहीं मीन सदा जलचारी।
रूपकुँवरि प्रभु छविके ऊपर, तन मन धन सब है बलिहारी॥

(७०४) राग टोडी—ताल तिताला

राखत आये लाज शरणकी।
राखी मीरा नारि अहिल्या लाज बिभीषण चरन गिरनकी।
ध्रुव प्रह्लाद विदुर सुधि राखी, द्रुपदसुताके चीरहरणकी॥
गोपीग्वालवालबृज-बनितन, राखी सुधि गिरिनखनधरनकी।
सोइ लाज प्रभु रखने अइहैं, रूपकुँवरिके सब गृह जनकी॥

रूप

(७०५) राग ललित—ताल तिताला

देखो री छबि नन्दसुवनकी।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, मुक्त माल गर मनु किरननकी
देखो री छबि०॥
कर कंकन कंचनके शोभित, उर भ्रगुलता नाथ त्रिभुवनकी
देखो री छबि०॥
तन पहिरे केसरिया वागो अजब लपेटन पीतबसनकी
देखो री छबि०॥
रूपकुँवरि धुनि सुनि नूपुरकी, छवि निरखति श्यामपगनकी
देखो री छबि०॥

(७०६) राग हमीर—ताल तिताला

बस गये नैनन माँहि बिहारी ॥
देखी जबसे श्यामलि मूरति टरत न छबि दृग टारी ।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल बाम अंग श्री प्यारी ॥
प्रेम भक्ति दीजै मुहि स्वामी अपनी ओर निहारी ।
रूपकुंवरि रानीके साधहु कारज सकल मुरारी ॥

श्रीराधा-रूप

(७०७) राग श्री—ताल तिताला

मूरति मुहनियाँ राधिकाजूकी ।
सुंदर बसन अंग सब राजति बिहँसति वदन मृदुल मुसकनियाँ ॥
शीस चंद्रिका बीज धूल युत कर्णफूल वेसर लटकनियाँ ।
कंठ कंठ श्रीमुक्तन माला हार जटित नव लाख रतनियाँ ॥
बाजू बाजू वटा अजूवा लटकन पहुँची रतन धकनियाँ ।
क्षुद्रघंटिका राजत मणिमय कर किंकण बाजत झनकनियाँ ॥
अनवट बिछिया आदि दसाँगुर पट युग पायजेब पैजनियाँ ।
रूपकुंवरि महरानी चेरी मातु भक्ति दे अचल अपनियाँ ॥

सिखावन

(७०८) राग देसी—ताल कहरवा

भज मन राधा गोपाल छोड़ो सब झगरौ ॥
सुत पति लखि तात मात सँगमें न कोऊ जात
झूठौं संसार जाल मायाको बगरौ ।
मिथ्या धन धाम ग्राम झूठौ है जग तमाम
नाहक ममतामें फँसो चरणमें लगरौ ॥
यमपुर जब मार परे कोउ न सहाय करे
तन मन धन गेह नेह भूत जात सगरौ ।

चोला यह चामको निकाम रामनाम हीन
हंसा उड़ि जात जबै यमके संग झगरौ ॥
गर्भमें कबूल करी भक्ति हेतु देह धरी
भूल गये कौल फिरर भटकत जग सगरौ
दीनबंधु हे मुरारि ! सुनिये मेरी पुकार
रूपकुंअरि कृष्ण हेतु अर्पण तन हमरौ।

(७०९) राग रामकली—ताल तिताला

रसना क्यों न रामरस पीती।
षटरस भोजन पान करेगी फिर रीती की रीती॥
अजहूँ छोड़ कुबान आपनी जो बीती सो बीती।
वा दिनकी तू सुधि बिसराई जा दिन बात कहीती॥
जब जमराज द्वार आ अड़िहैं खुलिहै तब करतूत खलीती।
रूपकुँवरिको मान सिखावन भगवत सन कर प्रीती॥

(७१०) राग मालश्री—ताल तिताला

अब मन कृष्ण कृष्ण कहि लीजे।
कृष्ण कृष्ण कहि कहिके जगमें साधु समागम कीजे॥
कृष्ण नामकी माला लैके कृष्ण नाम चित दीजे।
कृष्ण नाम अमृत रस रसना तृषावंत हो पीजे॥
कृष्ण नाम है सार जगतमें कृष्ण हेतु तन छीजे।
रूपकुँवरि धरि ध्यान कृष्णको कृष्ण कृष्ण कहि लीजे॥

चेतावनी

(७११) राग पीलू—ताल तिताला

भजन बिन है चोला बेकाम।
मल अरु मूत्र भरो नर सब तन है निष्फल यह चाम॥

बिन हरि भजन पवित्र न ह्वैहै धोवौ आठौ याम।
काया छोड़ हंस उड़ि जैहै पड़ो रहै धन धाम॥
अपनो सुत मुख लू धर दैहै सोच लेहु परिणाम।
रूपकुंवरि सब छोड़ बसहु व्रज भजिये श्यामा-श्याम॥

दैन्य

(७१२) राग कामोद—ताल तिताला

हमारे प्रभू कब मिलिहैं घनश्याम।
तुम बिन व्याकुल फिरत चहूँ दिशि
मन न लहै बिश्राम॥ हमारे प्रभु०॥
दिन नहिं चैन रैन नहिं निंदिया
कल न परे बसु याम॥ हमारे प्रभु०॥
जैसे मिले प्रभु बिप्र सुदामहि
दीन्हें कंचन धाम॥ हमारे प्रभु०॥
रूपकुंवरि रानी सरनागत
पूरन कीजे काम॥ हमारे प्रभु०॥

दीनता

(७१३) राग विभास—ताल तिताला

हमपर कब कृपालु हरि हुइहौ।
मैं अधमिन तुम अधम-उधारन
कैसे प्रन न निबइहौ।
कोटिन खल प्रभु तुमने तारे
दीन जान का मोहि लजइहौ॥ १॥

से सरनागत नाथ तिहारी
दास जान किन आस पुजइहौ।
का कहिहै जग लोक नाथ जब
रूपकुँवरिकी सुध बिसरइहौ ॥ २ ॥

प्रार्थना

(७१४) राग खम्माच—ताल तिताला

करहु प्रभु भवसागरसे पार ॥
कृपा करहु तो पार होत हौं नहिं बूड़ति मँझधार।
गहिरो अगम अथाह थाह नहिं लोजै नाथ उबार ॥
मैं हौं अधम अनेक जन्मकी तुम प्रभु अधम-उधार।
रूपकुँवरि बिन नाम श्यामके नहिं जगमें निस्तार ॥

(७१५) राग देस—ताल तिताला

प्रभुजी ! यह मन मूढ़ न माने ॥
काम क्रोध मद लोभ जेवरी ताहि बाँधि दर ताने।
सब विधि नाथ याहि समुझायौ नेक न रहत ठिकाने ॥
अधम निलज्ज लाज नहिं याको जो चाहे सोइ ठाने।
सत्य असत्य धर्म अरु अधरम नेक न यह शठ जाने ॥
करि हारी सब यतन नाथ मैं नेक न याहि लजाने।
दीन जानि प्रभु रूपकुँवरिकौ सब विधि नाथ निभाने ॥

(७१६) राग सोरठ—ताल तिताला

बिहारी जू है तुम लौं मेरी दौर ॥
दीननको प्रभु राखत आये हौ त्रिभुवन सिरमौर।
जो जन सरन भये तव स्वामी तिनहिं दियो शुभ ठौर ॥

मीरा आदि द्रौपदी सौरी सबके राखे तीर।
रानी रूपकुँवरि सरनागत करिये प्रभु अब गौर॥

कीर्तन

(७१७) राग गारा—ताल दादरा

जय जय श्रीकृष्णचन्द्र नंदके दुलारे॥
व्यास ऋषिन कपिलदेव मच्छ कच्छ हंस सेव।
नर हरि बामन सुमेव परशु धरनहारे॥
कलकि बौद्ध पृथु सुधीर ध्रुव हरि रघुबंस बीर।
धन्वन्तरि हरण पीर हयग्रीव प्यारे॥
बद्रीपति दत्तात्रय मन्वन्तर टारन भय।
यज्ञेश्वर शूकर जय सनकदिक उचारे॥
रूपकुँवरि चतुरबिस नाम जपति बढ़ति बंस।
भक्ति मुक्ति लहै हंस अधमनको तारे॥

(७१८) राग गारा—ताल तिताला

जय जय मोहन मदनमुरारी॥
जय जय जय बृंदाबनवासी आनँद मंगलकारी।
जय जय रंगनाथ श्रीस्वामी जय प्रभु कलिमलहारी॥
जय जय कहत सकल सुर हरषित जय जय कुंजबिहारी।
जय जय जय मधुवन बंसीबट जय जय करि गिरधारी॥
जय जय दीनबंधु करुणाकर जय जय गर्वप्रहारी।
रूप कुँवरि बिनवति कर जोरे हौं प्रभु सरन तिहारी।

प्रभाती

(७१९) राग प्रभाती—ताल दादरा

जागहु ब्रजराज लाल मोर मुकुटवारे।
पक्षी ध्वनि करहि शोर अरुण वरुण भानु भोर
नवल कमल फूल रहे भौंरा गुनजारे॥
भक्तनके सुने बयन जागे करुणाके अयन
पूजी मन कामधेनु पृथ्वी पगु धारे।
करके सुस्नान ध्यान पूजन पूरण विधान
विप्रनको दियो दान नंदके दुलारे॥
ग्वाल बाल टेर टेर दुहरी लीन्ही नवेर
बछरा दीन्हें उबेर दूध दुहत सारे।
करके भोजन गैयन सँग भये ग्वाल
वंशीबट तीर गये यमुना किनारे।
मुरली कर लकुट हाथ विहरत गोपिनके साथ
नटवर सब बेप किये यशुमतिके पियारे।
हौं तो मैं शरण नाथ मिनवति धरि चरन माथ
रूपकुँवरि दरस हेतु शरण है तिहारे॥

चाह

(७२०) राग पीलू—ताल तिताला

लागो कृष्ण-चरण मन मेरो॥
ध्रुव प्रह्लाद दास कर लीन्हें ऐसहि मोपर मेरो।
गजकी टेर सुनत ही तुमने तुरतहि जाइ उबेरो॥ १॥
भवसागरसे पार उतारहु नेंक करो दहि देरो।
रूपकुँवरि रानीको दीजे प्रभु पद-प्रेम घनेरो॥ २॥

(७२१) राग पूरिया कल्याण—ताल तिताला

नाथ मुहिं कीजै व्रजकी मोर ।
नेश दिन तेरो नृत्य करोंगी व्रजकी खोरन खोर ॥
याम घटा सम घात निरखिके चूकोंगी चहुँ ओर ।
ोर मुकुट माथेके काजें देहों पंखा टोर ॥
जबासिन सँग रहस करूँगी नचिहौं पंख मरोर ।
पकुँवरि रानी सरनागत जय जय जुगलकिशोर ॥

(७२२) राग सारंग—ताल तिताला

हे हरि व्रजवासिन मुहिं कीजे ॥
चह व्रज ग्वाल बाल गोपिनके चह व्रज बनचर कीजे ।
चह व्रज धेनु चाहि व्रज बछरा चह व्रज तृणचर कीजे ॥
चह व्रज लता चहै व्रज सरिता चह व्रज जलचर कीजे ।
चह व्रज कीच नीच ऊँचन घर चह व्रज फणचर कीजे ॥
चह व्रज बाट घाट पनघट रज चह व्रज थलचर कीजै ।
चह व्रज भूप-भवनकी किंकरि चह व्रज धुड़चर कीजे ॥
चह व्रज चकइ चकोर मोर कर चह व्रज नभचर कीजै ।
रूपकुँवरि दासी दासिनकी चह अधुचरी करीजै ॥

प्रकीर्ण

(७२३) राग शुद्ध कल्याण—ताल तिताला

प्रभुके दो ही दास हैं साँचे ॥
नेमी होय चाहि हो प्रेमी होय न मनके काँचे ।
प्रथम भक्ति प्रेमी जन पावत दूजे नेमी राचे ॥
प्रम भाव लखि व्रजगोपिनको तिनके सँग प्रभु नाँचे ।
रूपकुँवरि यह सत्य जान लो हरि साँचेको साँचे ॥

रहीम

(७२४) राग शुद्ध कल्याण—ताल तित

छबि आवन मोहन

काछिनि काछे कलित मुरलि कर, पीत पिछौरी
वंक तिलक केसरको कीनें, दुति मानों विधु
बिसरत नाहिं सखी, मो मनतें, चितवन नयन त्रि
नीकी हँसनि अधर सुधरनिकी, छबि छीनी सुमन गु
जलसों डारि दियों पुरइन पर, डोलनि मुकता-
आप मोल बिन मोलनि डोलनि, बोलनि मदनगो
यह सुरूप निरखै सोइ जानै, या 'रहीम' के

(७२५) राग पटमञ्जरी—ताल तिता

कमलदल नैननिकी उनमानि ।
बिसरति नाहिं सखी, मो मनतें मन्द-मन्द मुसुका
यह दसननि दुति चपलाहूतें महाचपल चमक
बसुधाकी बस करी मधुरता, सुधा-पगी बतरा
चढ़ी रहै चित उर बिसालकी, मुकुत माल थहरा
नृत्य-समय पीताम्बरहूकी, फहरि-फहरि फहरा
अनुदिन श्रीवृन्दावन ब्रजतें, आवन-आवन जा
अब 'रहीम' चिततें न टरति है, सकल स्यामकी बा

(७२६) राग चाँदनी केदारा—ताल धाड़ा चौत

शरद-निशि-निशीथे चाँदकी रोशन
सघन-वन-निकुञ्जे कान्ह बंशी बजा
रति, पति, सुत, निद्रा, साइयाँ छोड़ भ

(७२७)

ललित माला वा जवाहर जड़ा था,
चखनावाला चाँदनीमें खड़ा था।
ट-बिम्ब मेला पीत सेला नवेला,
त अलबेला यार मेरा अकेला॥

(७२८)

छकित छबीली छेलराकी छरी थी,
तति रसीली माधुरी मूंदरी थी।
कमल ऐसा खूबसे खूब देखा,
न सकी जैसा श्यामका हस्त देखा॥

(७२९)

कुटिल काली देख दिलदार जुलफें,
कलित बिहारी आपने जीकी कुलफें।
शशि-कलाको रोशनी-हीन लेखौं,
व्रजलल्लाको किस तरह फेर देखौं॥

(७३०)

बसनवाला गुलचमन देखता था,
ुक मतवाला गावता रेखता था।
युग चपलासे कुण्डलें झुमते थे,
कर तमाशे मस्त ह्वै घूमते थे॥

(७३१)

तरनि-सी हैं तीर-सी नोकदारें,
कमल-सी हैं दीर्घ हैं दिल बिदारें।
मधुर हेरें माल मस्ती न राखें,
ति मन मेरे सुन्दरी स्याम आँखें॥

(७३२)

भुजग जुग किधौं हैं काम कमनैत सोहैं,
नटवर ! तव मोहैं बाँकुरी मान भौंहैं।
सुनु सखि, मृदु बानी बेदुरुस्ती अकिलमें,
सरल-सरल सानी कै गई सार दिलमें॥

(७३३)

पकरि परम प्यारे साँवरेको मिलाओ,
असल अमृत-प्याला क्यों न मुझको पिलाओ?
इति वदति पठानी मन्मथाङ्गी विरागी
मकन-शिरसि भुयः क्या बला आन लागी॥

(७३४) राग झंझौटी—ताल तिताला (पंजाबी ठेका)

पट चाहे तन, पेट चाहत छदन मन,
चाहत है धन, जेती सम्पदा सराहिबी।
तेरोई कहायकै, रहीम कहै दीनबन्धु
आपनी बिपत्ति जाय काके द्वार काहिबी॥
पेट भरि खायो चाहै, उद्यम बनायो चाहै
कुटुँब जियायो चाहै, काढ़ि गुन लाहिबी।
जीविका हमारी जोपै औरनके कर डारी,
ब्रजके बिहारी ! तो तिहारी कहाँ साहिबी॥

रसखानि

(७३५) राग गारौथी—ताल तिताला

मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँवके ग्वारन।
जो पसु हौं तो कहा बसु मेरो, चरौं नित नन्दकी धेनु मँझारन।

त हौं तो वही गिरिको, जो धर्यो कर छत्र पुरन्दर-धारन ।
खग हौं तो बसेरो करौं मिलि, कालिंदी-कूल कदम्बकी डारन ॥

(७३६) राग मालश्री—ताल तिताला

लकुटी अरु कामरियापर, राज तिहूँ पुरको तजि डारौं ।
हु सिद्धि नवो निधिको सुख, नन्दकी गाइ चराइ बिसारौं ॥
खानि, कबों इन आँखिनसों, ब्रजके बन-बाग तड़ाग निहारौं ।
क हौं कलधौतके धाम, करीलकी कुञ्जन ऊपर वारौं ॥

(७३७) राग भैरवी—ताल तिताला

गुनी, गनिका, गन्धर्व औ, सारद सेष सबै गुन गावैं ।
अनन्त गनन्त गनेस-ज्यों, ब्रह्मा त्रिलोचन पार न पावैं ॥
, जती, तपसी अरु सिद्ध, निरन्तर जाहि समाधि लगावैं ।
अहीरकी छोहरियाँ, छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं ॥

(७३८) राग नारायनी—ताल तिताला

महेस, गनेस, दिनेस, सुरेसहु जाहि निरन्तर गावैं ।
अनादि, अनन्त, अखण्ड, अछेद्र अभेद सुबेद बतावैं ॥
से सुक ब्यास रटैं, पचिहारे, तऊ पुनि पार न पावैं ।
अहीरकी छोहरियाँ, छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं ॥

(७३९) राग केदारा—ताल झप

न-नैन फँसे पिंजरा-छबि, नाहिं रहैं थिर कैसेहूँ माई !
ायो कुल कानि सखी, रसखानि, लखी मुसुकानि सुहाई ॥
कढ़े-से रहैं मेरे नैन, न बैन कढ़ैं, मुख दीनी दुहाई ।
करौं, जिन जाव अली, सब बोलि उठैं, यह बावरी आई ॥

(७४०) राग पूरबी–ताल दीपचंदी

कानन दै अँगुरी रहिबो, जबहीं मुरली-धुनि मन्द बजै
मोहिनी-तानन सों रसखानि, अटा चढ़ि गोधन गैहै तौ गै
टेरि कहौं सिगरे ब्रज-लोगनि, काल्हि कोऊ कितनो समुझै
माई री, वा मुखकी मुसुकानि, सँभारी न जैहै न जैहै न जै

(७४१) राग वेशी—ताल कहरवा

आजु री, नन्दलला निकस्यो, तुलसी-बनतें बनकै मुसका
देखे बनै न बनै कहते अब, सो सुख जो मुखमें न समात
हौं रसखानि, बिलोकिबेकों कुल कानिको काज कियो हिय ह
आय गई अलबेली अचानक, ऐ भटू, लाजकौ काज कहा सो

(७४२) राग भूपाली—ताल तिताला

धूरि-भरे अति सोभित स्यामजु, तैसी बनी सिर सुन्दर च
खेलत-खात फिरैं अँगनां, पगपैंजनी बाजतीं, पीरी कछो
वा छबिकों रसखानि बिलोकत, वारत कामकलानिधि-को
कागके भाग कहा कहिए, हरि-हाथसों लै गयो माखन-रो

(७४३)' राग हमीर—ताल झप

ब्रह्म मैं ढूंढ़यो पुरानन गानन, बेद-रिचा सुनि चौगुने च
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितै, वह कैसे सरूप औ कैसे सुभा
टेरत सेरत हारि पर्यो, रसखानि, बतायो न लोग-लुग
देखौ, दुर्यो वह कुंज-कुटीरमें बैठ्यो पलोटत राधिका-पा

(७४४) राग संकरा—ताल तिताला

द्रौपदि औ गनिका, गज, गीध, अजानिलसौं कियो सो न नि
गौतम-गेहिनी कैसे तरी, प्रहलादको कैसे हर्यो दुख भ

हि को सोच करै रसखानि, कहा करिहै रवि-नन्द बिचारो ?
नकी संक परी है जु माखन-चाखनहारो है राखनहारो ॥

(७४५) राग जलधर केदारा—ताल तिताला

दिनतें निरख्यौ नँद-नंदन, कानि तजी घर बन्धन छूट्यो ।
ह बिलोकनिकी निसि मार, सँभार गयी मन मारने लूट्यो ॥
रकौं सरिता जिमि धावति रोकि रहे कुलको पुल टूट्यो ।
भयो मन संग फिरै, रसखानि सुरूप सुधा-रस घूट्यो ॥

(७४६) राग पीलू बरवा—ताल कहरवा

बजावत, गोधन गावत, ग्वारनके सँग गोमधि आयो ।
रीमें उन मेरो नाम लै, साथिनके मिस टेरि सुनायो ॥
जनी सुनि सासके श्वासनि, नन्दके पास उसासनि आयो ।
करौं रसखानि तहीं चित चैन नहीं, चित चोर चुरायो ॥

(७४७) राग बागेश्री—ताल तिताला

नैन वही उनको गुन गाइ, औ काम वही उन बैन सों सानी ।
हाथ वही उन गात सरैं, अरु पाइ वही जु वही अनुजानी ॥
जान वही उन प्रानके संग, औ मान वही जु करै मनमानी ।
त्यों रसखानि वही रसखानि, जु है रसखानि, सो है रसखानी ॥

यारी साहब

(७४८) राग दीपक—ताल तिताला

विरहिनी मंदिर दियना बार ॥
बिन बाती बिन तेल जुगतसों, बिन दीपक उँजियार ।
प्रान पिया मेरे गृह आये, रचि-पचि सेज सँवार ॥

सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निरगुन निरकार।
गावहु री मिलि आनँद-मंगल, 'यारी' मिलके यार॥

(७४९) राग मियाँकी टोड़ी (ख्याल)—ताल ति०

बिन बंदगी इस आलममें, खाना तुझे हराम है रे!
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमतमें आठों जाम है रे!
'यारी' मौला बिसारके, तू क्या लागा बेकाम है रे!
कुछ जीते-जी बंदगी कर ले, आखिरको गोर मुकाम है रे!

(७५०) राग संकरा—ताल तिताला

दिन दिन प्रीति अधिक मोहि हरिकी।
काम-क्रोध-जंजाल भसम भयो, बिरह-अगिन लगि धधकी
धधकि-धधकि सुलगति अति निर्मल, झिलमिल-झिलमिल झलकी
झरि झरि परत अँगार अधर 'यारी' चढ़ि अकास आगे सरकी

(७५१) राग हुसेनी कान्हरा—ताल कहरवा

दोउ मूँदके नैन अन्दर देखा, नहिं चाँद सूरज दिन रात है
रोशन समा बिनु तेल-बाती, उस जोतिसों सबै सिफाति है
गोता मार देखो आदम, कोउ और नाहिं संग-साथि है
'यारी' कहै तहकीक किया, तू मलकुल-मौतकी जाति है रे

(७५२) राग मालकोस—ताल तिताला

हमारे एक अलह प्रिय प्यारा है।
घट-घट नूर उसी प्यारेका जाका सकल पसारा है।
चौदह तबक जाकी रोशनाई, झिलमिल जोत सितारा है
बेनमून बेचून अकेला, हिंदु तुरकसे न्यारा है।
सोइ दरवेस दरस निज पायो, सोई मुसलिम सारा है
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै 'यारी' यार हमारा है।

(७५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

क्के चरनकी रज लैके,दोउ नैननके विच अंजन दीया।
मिर मेटि उँजिया हुआ, निसंकार पियाको देख लीया॥
टि सूरज तहँ छिपे घने, तीन लोक-धनी धन पाइ पीया।
गुरुने जो करी किरपा, मरिके 'यारी' जुग-जुग जीया॥

(७५४) राग सिंदूरा—ताल दीपचंदी

हौं तो खेलौं पियासँग होरी।
दरस-परस पतिवरता पियकी, छवि निरखत भइ बौरी॥
सोलह कला सँपूरन देखौं, रवि ससि भे इक ठौरी।
जबतें दृष्टि परयो अविनासी लागी रूप-ठगौरी॥
रसना रटति रहति निसि बासर, नैन लगे यहि ठौरी।
कह 'यारी' यादि करु हरिकी, कोइ कहैं सो कहौ री॥

(७५५) राग शहाना—ताल दीपचंदी

झिलमिल-झिलमिल बरसै नूरा, नूर-जहूर सदा भरपूरा।
झुन-रुझुन अनहद बाजै, भँवर गुंजार गगर चढ़ि गाजै॥
झिम-रिमझिम बरसै मोती, भयो प्रकास निरंतर जोती।
ल निर्मल निर्मल नामा, कह 'यारी' तहँ लियो बिस्रामा॥

(७५६) राग भैरवी—ताल तिताला

रसना, राम कहत तैं थाको।
पानी कहे कहुँ प्यास बुझति है, प्यास बुझै जदि चाखो॥
पुरुष-नाम नारी ज्यों जानै, जानि-बूझि नहिं भाखो।
दृष्टीसे मुष्टी नहिं आवै नाम निरंजन वाको॥
गुरु-परताप साधुगी संगति, उलटि दृष्टी जब ताको।
'यारी' कहै, सुनो भाई संतो, बज्र बेधि कियो नाको॥

सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निरगुन निरकार।
गावहु री मिलि आनँद-मंगल, 'यारी' मिलके यार॥

(७४९) राग मियाँकी टोड़ी (ख्याल)—ताल ति०

बिन बंदगी इस आलममें, खाना तुझे हराम है रे!
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमतमें आठों जाम है रे!
'यारी' मौला बिसारके, तू क्या लागा बेकाम है रे!
कुछ जीते-जी बंदगी कर ले, आखिरको गोर मुकाम है रे!

(७५०) राग संकरा—ताल तिताला

दिन दिन प्रीति अधिक मोहि हरिकी।
काम-क्रोध-जंजाल भसम भयो, बिरह-अगिन लगि धधकी॥
धधकि-धधकि सुलगति अति निर्मल, झिलमिल-झिलमिल झलकी।
झरि झरि परत अँगार अधर 'यारी' चढ़ि अकास आगे सरकी॥

(७५१) राग हुसेनी कान्हरा—ताल कहरवा

दोउ मूँदके नैन अन्दर देखा, नहिं चाँद सूरज दिन रात है रे!
रोशन समा बिनु तेल-बाती, उस जोतिसों सबै सिफाति है रे!
गोता मार देखो आदम, कोउ और नाहिं संग-साथि है रे!
'यारी' कहै तहकीक किया, तू मलकुल-मौतकी जाति है रे!!

(७५२) राग मालकोस—ताल तिताला

हमारे एक अलह प्रिय प्यारा है।
घट-घट नूर उसी प्यारेका जाका सकल पसारा है॥
चौदह तबक जाकी रोशनाई, झिलमिल जोत सितारा है।
बेनमून बेचून अकेला, हिंदु तुरकसे न्यारा है॥
सोइ दरवेस दरस निज पायो, सोई मुसलिम सारा है।
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै 'यारी' यार हमारा है॥

(७५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

गुरुके चरनकी रज लैके,दोउ नैननके बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजिया हुआ, निसंकार पियाको देख लीया॥
कोटि सूरज तहँ छिपे घने, तीन लोक-धनी धन पाइ पीया।
सतगुरुने जो करी किरपा, मरिके 'यारी' जुग-जुग जीया॥

(७५४) राग सिंदूरा—ताल दीपचंदी

हौं तो खेलौं पियासँग होरी।
दरस-परस पतिवरता पियकी, छवि निरखत भइ बौरी॥
सोलह कला सँपूरन देखौं, रवि ससि भे इक ठौरी।
जबतें दृष्टि परयो अविनासी लागी रूप-ठगौरी॥
रसना रटति रहति निसि बासर, नैन लगे यहि ठौरी।
कह 'यारी' यादि करु हरिकी, कोइ कहैं सो कहौ री॥

(७५५) राग शहाना—ताल दीपचंदी

झिलमिल-झिलमिल बरसै नूरा, नूर-जहूर सदा भरपूरा।
रुनझुन-रुझुन अनहद बाजै, भँवर गुंजार गगर चढ़ि गाजै॥
रिमझिम-रिमझिम बरसै मोती, भयो प्रकास निरंतर जोती।
निर्मल निर्मल निर्मल नामा, कह 'यारी' तहँ लियो बिसामा॥

(७५६) राग भैरवी—ताल तिताला

रसना, राम कहत तैं थाको।
पानी कहे कहुँ प्यास बुझति है, प्यास बुझै जदि चाखो॥
पुरुष-नाम नारी ज्यों जानै, जानि-बूझि नहिं भाखो।
दृष्टीसे मुष्टी नहिं आवै नाम निरंजन वाको॥
गुरु-परताप साधुकी संगति, उलटि दृष्टी जब ताको।
'यारी' कहै, सुनो भाई संतो, बज्र वेधि कियो नाको॥

सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निरगुन निरकार।
गावहु री मिलि आनँद-मंगल, 'यारी' मिलके यार॥

(७४९) राग मियाँकी टोड़ी (ख्याल)—ताल ति०

बिन बंदगी इस आलममें, खाना तुझे हराम है रे!
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमतमें आठों जाम है रे!
'यारी' मौला बिसारके, तू क्या लागा बेकाम है रे!
कुछ जीते-जी बंदगी कर ले, आखिरको गोर मुकाम है रे!

(७५०) राग संकरा—ताल तिताला

दिन दिन प्रीति अधिक मोहि हरिकी।
काम-क्रोध-जंजाल भसम भयो, विरह-अगिन लगि धधकी
धधकि-धधकि सुलगति अति निर्मल, झिलमिल-झिलमिल झलकी
झरि झरि परत अँगार अधर 'यारी' चढ़ि अकास आगे सरकी

(७५१) राग हुसेनी कान्हरा—ताल कहरवा

दोउ मूँदके नैन अन्दर देखा, नहिं चाँद सूरज दिन रात है रे
रोशन समा बिनु तेल-बाती, उस जोतिसों सबै सिफाति है रे
गोता मार देखो आदम, कोउ और नाहिं संग-साथि है रे
'यारी' कहै तहकीक किया, तू मलकुल-मौतकी जाति हैं रे!

(७५२) राग मालकोस—ताल तिताला

हमारे एक अलह प्रिय प्यारा है।
घट-घट नूर उसी प्यारेका जाका सकल पसारा है॥
चौदह तबक जाकी रोशनाई, झिलमिल जोत सितारा है।
बेनमून बेचून अकेला, हिंदु तुरकसे न्यारा है॥
सोइ दरबेस दरस निज पायो, सोई मुसलिम सारा है।
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै 'यारी' यार हमारा है॥

(७५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

गुरुके चरनकी रज लैंके,दोउ नैननके बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजिया हुआ, निसंकार पियाको देख लीया ॥
कोटि सूरज तहँ छिपे घने, तीन लोक-धनी धन पाइ पीया।
सतगुरुने जो करी किरपा, मरिके 'यारी' जुग-जुग जीया ॥

(७५४) राग सिंदूरा—ताल दीपचंदी

हौं तो खेलौं पियासँग होरी।
दरस-परस पतिवरता पियकी, छबि निरखत भइ बौरी ॥
सोलह कला सँपूरन देखौं, रबि ससि भे इक ठौरी।
जबतें दृष्टि परयो अविनासी लागी रूप-ठगौरी ॥
रसना रटति रहति निसि वासर, नैन लगे यहि ठौरी।
कह 'यारी' यादि करु हरिकी, कोइ कहै सो कहो री ॥

(७५५) राग शहाना—ताल दीपचंदी

झिलमिल-झिलमिल बरसै नूरा, नूर-जहूर सदा भरपूरा।
रुनझुन-रुनझुन अनहद बाजे, भँवर गुंजार गगर चढ़ि गाजै ॥
रिमझिम-रिमझिम बरसै मोती, भयो प्रकास निरंतर जोती।
निर्मल निर्मल निर्मल नामा, कह 'यारी' तहँ लियो बिस्रामा ॥

(७५६) राग भैरवी—ताल तिताला

रसना, राम कहत तैं थाको।
पानी कहे कहुँ प्यास बुझति है, प्यास बुझै जदि चाखो ॥
पुरुष-नाम नारी ज्यों जानै, जानि-बूझि नहिं भाखो।
दृष्टीसे मुष्टी नहिं आवै नाम निरंजन वाको ॥
गुरु-परताप साधुकी संगति, उलटि दृष्टी जब ताको।
'यारी' कहै, सुनो भाई संतो, बज्र वेधि कियो नाको ॥

(७५७) राग पीलू—ताल कहरवा

निर्गुन चुनरी निर्बान, कोउ ओढ़ै संत सुजान ॥
पट दर्शनमें जाइ खोजो, और बीच हैरान।
जोति-सरूप सुहागिन चुनरी आव वधू धरि ध्यान ॥
हद वेहदके बाहर 'यारी' संतनको उत्तम ज्ञान।
कोऊ गुरुगम ओढ़ै चुनरिया, निर्गुन चुनरी निर्बान ॥

(७५८) राग हमीर—ताल तिताला

आरति करो मन आरति करो।
गुरु-प्रताप साधुकी संगति, आवागमन तें छूटि पड़ो ॥
अनहद तालआदि सुध बानी, बिनु जिम्या गुन बेद पढ़ो।
आपा उलटि आतमा पूजो, त्रिकुटी न्हाइ सुमेर चढ़ो ॥
सारँग सेत सुरतिसो राखो, मन पतंग होइ अजर जरो।
ज्ञानकै दीप बरै विन वाती, कह 'यारी' तहँ ध्यान धरो ॥

(७५९) राग जोगिया—ताल रूपक

जोगी जुगति जोग कमाव।
सुखमना पर बैठि आसन, सहज ध्यान लगाव ॥
दृष्टि सम करि सुन्न सोओ, आपा मेटि उड़ाव।
प्रगज जोति अकार अनुभव, शब्द सोहं गाव ॥
छोड़ि मठको चलहु जोगी, बिना पर उड़ि जाव।
'यारी' कहै यह मत बिहंगम अगम चढ़ि फल खाव ॥

(७६०) राग सारंग—ताल तिताला

मन मेरो सदा खेलै नटबाजी, चरन कमल चित राजी ॥
बिनु करताल पखावज बाजै, अगम पंथ गढ़ि गाजी।
रूप बिहीन सीस बिनु गावै, बिनु चरनन गति साजी ॥

बाँस सुमेरु सुरतिकँ डोरी, चित चेतन सँग चेला।
पाँच पचीस तमासा देखहिं, उलटि गगन चढ़ि गेला॥
'यारी' नट ऐसी बिधि खेलैं, अनहद ढोल बजावै।
अनँत कला अवगति अनमूरति, बानक बनि बनि आवै॥

(७६१) राग अहीर भैरों—ताल चर्चरी

मन ग्वालिया, सत सुकृत तत दुहि रेह॥
नैन-दोहनि रूप भरि-भरि, सुरति सब्द सनेह।
निझर झरत अकास ऊठत, अधर अधरहिं देह॥
जेहि दुहत सेस महेस ब्रह्मा कामधेनु बिदेह।
'यारी मथके लिओ माखन, गगन मगन भखेह॥

(७३२) राग तिलक कामोद—ताल चर्चरी

ंद तिलक दिये सुंदरि नारी, सोइ पतिबरता पियहिं पियारी।
ंचन-कलस धरे पनिहारी, सीस सुहाग भाग उँजियारी॥
ब्द-सेंदुर दै माँग सँवारी, बेंदी अचल टरत नहिं टारी।
पन रूप जब आप निहारी, 'यारी' तेज-पुंज उँजियारी॥

(७६३) राग दुर्गा—ताल तिताला

ब्रह्म चीन्हो रे ब्रह्मज्ञानी।
बुझि बिचारि देखु नीके करि, ज्यों दर्पनमधि अलख निसानी।
है 'यारी' सुनो ब्रह्मगियानी जगमग जोति निसानी॥

(७६४) राग पीलू—ताल कहरवा

उरध मुख भाठी, अवटौं कौनी भाँति।
अर्ध उर्ध दोउ जोग लगायो, गगन-मँडल भयो माठ॥

गुरु दियो ज्ञान, ध्यान हम पायो, कर करनी कर ठाट।
हरिके मद मतवाल रहत है, चलत उबटकी बाट॥
आपा उलटिके अभी चुवाओ, तिरबेनीके घाट।
प्रेम-पियाला श्रुति भरि पीवो, देखो उलटी बाट॥
पाँच तत्त इक जोति समाने, घर छहवो मन हाथ।
कह 'यारी' सुनियो भाई संतो, छकि-छकि रहि भयो भात॥

(७६५) राग प्रभाती—ताल दीपचंदी

राम रमझनी यारी जीवके॥

घटमें प्रान अपान दुहाई, अरध उरध आवै अरु जाई।
लेह प्रान अपान मिलावै बाही पवनतें गगन गरजावै।
गरजै गगन जो दामिनी दमकै मुक्ताहल रिमझिम तहँ बरसै।
वा मुक्तामहँ सुरति पिरोवै, सुरति शब्द मिलि मानिक होवै।
मानिक जोति बहुत उजियारा, कह 'यारी' सोइ सिरजनहारा।
साहब सिरजनहार गुसाईं, जासु हम, सोई हम माँहीं।
जैसे कुंभ नीर बिच भरिया, बाहर-भीतर खालिक दरिया।
उठ तरंग तहँ मानिक मोती, कोटिन चंद सूरकै जोती।
एक किरन का सकल पसारा, अगम पुरुष सब कीन्ह नियारा।
उलटि किरिन जब सूर समानी तब आपनि गति आपुहि जानी।
कह 'यारी' कोई अवर न दूजा, आपुहि ठाकुर आपहि पूजा।
पूजा सत्तपुरुषका कीजै, आपा मेटि चरन चित दीजै।
उनमुनि रहनि सकलको त्यागी, नवधा प्रीति बिरह बैरागी।
बिनु बैराग भेद नहिं पावै, केतो पढ़ि-पढ़ि रचि-रचि
गावै ताको अरथ बिचारै, आप

(७६६) राग पीलू—ताल कहरवा

सतगुरु है हत पुरुष अकेला, पिंड ब्रह्मांडके बाहर मेला ॥
दूरतें दूर, ऊँचतें ऊँचा, बाट न घाट गली नहिं कूचा ॥
आदि न अंत मध्य नहिं तीरा, अगम अपार अति गहिर गँभीरा ॥
कच्छ दृष्टि तहँ ध्यान लगावै, पलमहँ कीट भृंग होइ जावै ॥
जैसे चकोर चंदके पासा, दीसै धरती बसै अकासा ॥
कह 'यारी' ऐसे मन लावै, तब चातक स्वांती-जल पावै ॥

(७६७) राग पीलू—ताल कहरवा

सुन्नके मुकाममें बेचूनकी निसानी है,
जिकिर रूह सोई अनहद बानी है ।
अगमको गम्म नहिं झलक पेसानी है,
कहै 'यारी' आपा चीन्है सोई ब्रह्मज्ञानी है ॥

(७६८) राग बहार—ताल तिताला

उड़ु उड़ु रे बिहंगम चढ़ु अकास ।
जहँ नहिं चाँद-सूर निसि-बासर, सदा अमरपुर अगम बास ॥
देखै उरध अगाध निरंतर हरष सोक नहिं जमकै त्रास ।
कह 'यारी' तहँ बधिक-फाँस नहिं फल खायो जगमग परकास ॥

(७६९) राग तिलंग—ताल तेवरा

गयो सो गयो बहुरि नहिं आयो ॥
दूरितें अंतर गवन कियो, तिहुँ लोक दिखायो ।
तेहुँतें आगे, दूरितें दूरि, परेतें परे जाइ छायो ॥
'यारी' कहै अति पूरन तेजा, सो देखि सरूप पतंग समायो ।
आधै न जाय, मरै नहिं जीव, हलै न टलै तहवाँ ठहरायो ॥

(७७०) राग झँझौटी—ताल तिताला

एक कहो सो अनेक ह्वै दीसत, एक अनेक धरे है सरीरा।
आदिहि तौ फिर अंतहु भी मद्ध सोई हरि गहिर गँभीरा॥
गोप कहो सो अगोप सों देखो, जोतिसरूप विचारत हीरा।
कहे सुने विनु कोइ न पावै, कहिके सुनावत 'यारी' फ़कीरा॥

(७७१)

देखु विचारि हिये अपने नर, देह धरो तौ कहा बिगरो है।
यह मट्टीका खेल-खिलौना बनो, एक भाजन, नाम अनंत धरो है॥
नेक प्रतीति हिये नहि आवति, भर्म भूलो नर अवर करो है।
भूपन ताहि गलाइके देखु, 'यारी' कंचन ऐनको ऐन धरो है॥

(७७२) धुन लावनी—ताल कहरवा

आँखी सेती जो भी देखिये, सो तो आलम फ़ानी है।
कानोंसे भी जो सुनिये रे सो तो जैसे कहानी है॥
इस बोलतेको उलटि देखै, सोई आरिफ़ सोइ ज्ञानी है।
'यारी' कहै, यह बूझि देखा, और सबै नादानी है॥

(७७३) धुन लावनी—ताल कहरवा

जहँ मूल न डार न पात है रे, बिन सींचे बाग सहज फूला।
बिन डाँड़ीका फूल है रे, निर्वासके बास भँवर भूला॥
दरियावके पार हिंडोलना रे कोउ बिरही बिरला जा झूला।
'यारी' कहै इस झूलनेमें, झूलै कोऊ आसिक दोला॥

(७७४) धुन लावनी—ताल कहरवा

जवलग खोजै चला जावै, तबलग मुद्दा नहि हाथ आवै।
जब खोज मरै तब घर करै, फिर खोज पकरके बैठ जावै॥

आपमें आपको आप देखै, और कहूँ नहिं चित्त जावै।
'यारी' मुद्दा हासिल हुआ, आगेको चलना क्या भावै ॥

(७७५) धुन लावनी—ताल कहरवा

अंधा पूछे आफताबको रे, उसे किस मिसाल बतलाइये जी ?
जा नूर समान नहीं औरै, कवने तमसील सुनाइये जी ॥
अब आँधरे मील दलील करैं, बिन दीदा दीदार न पाइये जी।
'यारी' अंदर यकीन बिना, इलमसे क्या बतलाइये जी ?

(७७६) राग पीलू—ताल कहरवा

हम तो एक हुबाब हैं रे, साकिन बहरके बीच सदा।
दरियावके बीच दरियावकी मौज है, बाहर नाहीं गैर खुदा ॥
उठनेमें हुबाब है, देखो, मिटनेमें मुतलक सौदा।
हुबाब तो ऐन दरियाव 'यारी' वोहि नाम धरो है बुदबुदा ॥

(७७७) राग सारंग—ताल कहरवा

आबके बीच निमक जैसे, सबलो है येहि मिलि जावै।
यह भेदकी बात अवर है रे, यह बात मेरे नहिं मन भावै ॥
खास होइके अंदर धँसई, आदर सँवारके जोति लावै।
'यारी' मुद्दा हासिल हुआ, आगेको चलना क्या भावै ॥

(७७८) राग खम्माच—ताल कहरवा

गगन गुफामें बैठिके रे, उलटिके अपना आप देखै।
अजपा जपै बिन जीभसों रे, बिन नैन निरंजन रूप लेखै ॥
जोति बिना दीपक है रे, दीपक बिना जगमग पेखै।
'यारी' अलख अलेख है रे, भेपके भीतर भेप भेपै ॥

(७७९) राग खम्माच—ताल कहरवा

गगन-गुफामें बैठिके रे, अजपा जपै बिन जीभ सेती।
त्रिकुटी संगम जोति है रे, तहँ देखि लेवै गुरु ज्ञान सेती॥
सुन्न गुफामें ध्यान धरै, अनहद सुनै बिन कान सेती।
'यारी कहै, सो साधु है रे, बिचार लेवै गुरु ध्यान सेती॥

खुसरो

(७८०) राग जौनपुरी—ताल दीपचंदी

बहुत रही बाबुल घर दुलहिन, चल तेरे पी ने बुलाई।
बहुत खेल खेली सखियनसों, अंत करी लरकाई॥
न्हाय-धोयके बस्तर पहिरे, सब ही सिंगार बनाई।
बिदा करनेको कुटुँब सब आये, सिगरे लोग लुगाई॥
चार कहारन डोली उठाई, संग पुरोहित नाई।
चले ही बनैगी होत कहा है, नैनन नीर बहाई॥
अंत बिदा ह्वै चलि है दुलहिन, काहूकी कछु न बसाई।
मौज खुशी सब देखत रह गये, मात पिता औ भाई॥
मोरि कौन सँग लगन धराई, धन-धन तोरि है खुदाई।
बिन माँगे मेरी मँगनी जो दीन्हीं, पर-घरकी जो ठहराई॥
अँगुरी पकरि मोरा पहुँचा भी पकरे कँगना अँगूठी पहराई।
नौशाके रँग मोहि कर दीन्हीं, लाज सँकोच मिठाई॥
सोना भी दीन्हा, रूपा भी दीन्हा, बाबुल दिल-दरियाई।
गहेल गहली डोलति आँगनमें, अचानक पकर बैठाई॥
बैठत मलमल तपरे पहनाये, केसर तिलक लगाई।
'खुसरो' चली ससुरारी सजनी, संग नहीं कोइ जाई॥

दरिया साहब (मारवाड़वाले)

(७८१) राग पीलू—ताल दीपचंदी

[illegible]हा कहूँ मेरे पिउकी बात ! जोरे कहूँ सोइ अंग सुहात ।
[illegible]ब मैं रही थी कन्या क्वारी, तब मेरे करम हता सिर भारी ॥
[illegible]ब मेरे पिउसे मनसा दौड़ी, सतगुरु आन सगाई जोड़ी ।
[illegible]ब मैं पिउका मंगल गाया, जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥
[illegible]लेवा दै बैठी संगा, तब मोहि लीन्हीं बायें अंगा ।
[illegible] 'दरिया' कहे, मिट गई दूती, आपा अरपि पीउ सँग सूती ॥

(७८२) राग बिहाग—ताल दीपचंदी

जाके उर उपजी नहि भाई ! सो क्या जानै पीर पराई ॥
ब्यावर जानै पीरकी सार, बाँझ नार क्या लखै विकार ।
पतिब्रता पतिको ब्रत जानै, बिभचारिन मिल कहा बखानै ॥
हीरा पारख जौहरि पावै, मूरख निरखके कहा बतावै ।
लागा घाव कराहै सोई, कौतुकहारके दर्द न कोई ॥
राम नाम मेरा प्रान-अधार, सोई राम रस-पीवनहार ।
जन 'दरिया' जानैगा सोई, प्रमकी भाल कलेजे पोई ॥

(७८३) राग बिलावल—ताल चर्चरी

जो धुनिया तौ भी मैं राम तुम्हारा ।
[illegible]धम कमीन जात मति-हीना, तुम तौ हौ सिरताज हमारा ॥
[illegible]याका जंत्र सब्द मन मुठिया, सुखमन ताँत चढ़ाई ।
[illegible]गन-मंडलमें धुनिया बैठा, मेरे सतगुरु कला सिखाई ॥
[illegible]प पान हर कुबुध काँकड़ा, सहज-सहज झड़ जाई ।
[illegible]ी गाँठ रहन नहि पावै, इकरंगी होय आई ॥

पृथी कोटि फुलवारी गंध, सुरत कोटि जाके लाया बंध
चन्द सूर जाके कोटि चिराग, लछमी कोटि जाके राँधे पाग।
अनंत संत और खिलवत खाना, लख-चौरासी पलै दिवाना
कोटि पाप काँपें बल छीन, कोटि धरम आगे आधीन।
सागर कोटि जाके कलसधार, छपन कोटि जाके पनिहार
कोटि सन्तोष जाके भरा भंडार, कोटि कुबेर जाके मायाधार।
कोटि स्वर्ग जाके सुखरूप, कोटि नर्क जाके अन्धकूप
कोटि करम जाके उत्पतिकार, किला कोटि वरतावनहार।
आदि अन्त मद्ध नहिं जाको, कोई पार न पावै ताको
जन दरियाका साहब सोई, तापर और न दूजा कोई॥

(७६१) राग भीमपलासी—ताल तिताला

चल-चल रे हंसा, राम-सिंध, बागड़में क्या तू रह्यो बन्ध॥
जहँ निर्जल धरती, वहुत धूर, जहँ साकित वस्ती दूर-दूर।
ग्रीषम ऋतुमें तपै भोम, जहँ आतम दुखिया रोम-रोम॥
भूख प्यास दुख सहै आन, जहँ मुक्ताहल नहिं खान-पान।
जउवा नारू दुखित रोग, जहँ मैं तैं बानी हरष-सोग॥
माया बागड़ बरनी येह, अब राम-सिन्ध बरनूं सुन लेह।
अगम अगोचर कथ्या न जाय, अब अनुभवमाहीं कहूँ सुनाय॥
अगम पन्थ है राम-नाम, गिरह बसौ जाय परम-धाम।
मानसरोवर विमल नीर, जहँ हंस-समागम तीर-तीर॥
जहँ मुक्ताहल बहु खान-पान, जहँ अवगत तीरथ नित सनान।
पाप-पुन्यकी नहीं छोत जहँ गुरु-सिष-मेला सहज होत॥

ुन इन्द्री मन रहे थाक, जहँ पहुँच न सकते वेद-बाक।
गम देस जहँ अभयराय, जन दरिया सुरत अकेली जाय॥

(७९२) राग सावनी कल्याण—ताल तिताला

ल चल रे सुआ तेरे आदराज, पिंजरामें बैठा कौन काज?
बिल्लीका दुख दहै जोर, मारै पिंजरा तोर-तोर॥
रने पहले मरो धीर, जो पाछे मुक्ता सहज छीर।
तगुरु-सब्द हृदैमें धार, सहजाँ-सहजाँ करो उचार॥
म-प्रवाह धसै जब आभ, नादप्रकासै परम लाभ।
कर गिरह बहाओ गगन जाय, जहँ बिल्ली मृत्यु न पहुँचै आय॥
ाम फलै जहँ रस अनन्त, जहँ सुखमें पाओ परम तन्त।
झरमिर-झिरमिर बरसै नूर, बिन कर बाजै तालतूर।
न दरिया आनन्द पूर, जहँ बिरला पहुँचै भाग भूर॥

(७९३) राग भूपाली—ताल तिताला

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै।
साध-संग और राम-भजन बिन, काल निरन्तर लूटै॥
मलसेती जो मलको धोवै, सो मल कैसे छूटै।
प्रेमका सा[बु]न नामका पानी, दोय मिल ताँता टूटै॥
भेद-अभेद भरमका भाँड़ा, चौड़े, पड़-पड़ फूटै।
गुरुमुख-सब्द गहै उर-अन्तर, सकल भरमसे छूटै॥
रामका ध्यान तू धर रे प्रानी, अमरतका मेह बूटै।
जन दरियाव, अरप दे आपा, जरा-मरन तब टूटै॥

(७९४) राग भैरवी—ताल चर्चरी

दुनियाँ भरम भूल बौराई।
आतमराम सकल घट भीतर, जाकी सुद्ध न पाई॥

हैं राग उन्हींके रंग भरे, औ भाव उन्हींके साँचे हैं
जो बे-गत बेसुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं

(८१८) राग बिहागरा—ताल दादरा

गर यारकी मर्जी हुई सर जोड़के बैठे।
घर-बार छुड़ाया तो वहीं छोड़के बैठे॥
मोड़ा उन्हें जिधर वहीं मुँह मोड़के बैठे।
गुदड़ी जो सिलाई तो वहीं ओढ़के बैठे॥
और शाल उढ़ाई तो उसी शालमें खुश है।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥
गर खाट बिछानेको मिली खाटमें सोये।
दूकाँमें सुलाया तो वो जा-हाटमें सोये॥
रस्तेमें कहा सो तो वह जा बाटमें सोये।
गर टाट बिछानेको दिया टाटमें सोये॥
औ खाल बिछा दी तो उसी खालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥
उनके तो जहाँमें अजब आलम हैं नजीर आह!
अब ऐसे तो दुनियामें वली कम हैं नजीर आह!
क्या जाने, फरिश्ते हैं कि आदम हैं नजीर आह!
हर वक्तमें हर आनमें खुर्रम है नजीर आह!
जिस ढालमें रक्खा वो उसी ढालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥

(८१६ राग मिश्रकाफी-ताल तिताला (द्रुतलय)

बहारे बाग दुनिया चंदरोज, देखलो इसका तमाशा चांदरोज।
मुसाफिर कूचका सामान कर; इस जहाँमें है बसेरा चांदरोज॥
छा लुकमांसे जिया तू कितने रोज ? दस्त हसरत मलके बोला, चांदरोज।
दि मदफन कब्रमें बोली कजा-अब यहाँ पै सोते रहना चांदरोज॥
कर तुम कहाँ, औ मैं कहाँ ऐ दोस्तो! साथ है मेरा तुम्हारा चाँदरोज।
या सताते हो दिले बेजुर्मको, जालिमो, है ये जमाना चांदरोज॥
द कर तू ऐ नजीर! कबरोके रोज, जिंदगीका है भरोसा चांदरोज।

कारे खाँ

(८२०) राग झंझोटी—ताल तिताला

माफ किया मुलक, मताह दी विभीषनकों,
कही थी जुबान कुरबान ये करारकी।
बैठनेको ताइफ तखत दै तखत दिया,
दौतल बढ़ाई थी जुनारदार यारकी॥
तब क्या कहा था, अब सरफराज आप हुए,
जब की अरज सुनी चिड़िमार खारकी।
'कारे' के करारमाहिं क्यों न दिलदार हुए,
एरे नंदलाल ! क्यों हमारी बार, वार की॥

(८२१) राग देस—ताल चर्चरी

छलबलकै थाक्यो अनेक गजराज भारी,
भयो बलहीन जब नेक न छुड़ा गयो।
कहिबेको भयो करुना का, कवि 'कारे' कहैं,
रही नेक नाक और सब ही डुबा गयो॥

पंकज-से पायन पयादे पलंग छाँडि,
पावरी बिसारि प्रभु ऐसी परि पा गयो।
हाथीके हृदयमाँहि आधो 'हरि' नाम सोय।
गरे जो न आयो गरुड़ेस, तौलों आ गयो ॥

(८२२) राग झँझोटी—ताल तिताला

वृन्दावन कीरति विनोद कुंज-कुंजनमें,
आनँदके कंद लाल मूरति गुपालकी।
कालीदह 'कारे' पताल पैठि नाग नाथ्यौ,
केतकीके फूल तोरि लाये माला हारकी॥
परसतहीं पूतना परमगति पाय गई,
पलकहीं पार पारयो अजामील नारकी।
गीध गुन-गानहार, छाँछके उगानहार,
आई न अहीर ! क्या हमारी बार बार की ॥

करीमबख्श

(८२३) राग सहाना—ताल चर्चरी

ऐ मेरे रब ! तू पाप-हरैया, संकटमें किरपाका करैया।
मेरे रहीम! रहम कर साहब! मेरे करीम! करम कर साहब
मुझ पापीका पाप छुड़ाओ, डूबत नैया पार लगाओ
झाँझरि नाव पतवार पुराना, यह डर मोरे हिये समाना
जो तुम सुध नहीं लैहो मोरी, बैरी माँझ मोहि दैहै बोरी
दियो बैरि इक संग लगाये; जो सीधे पथ सों बहकाये
देत दोहाई हौं अब तोरी, होहु सहाय विपतिमें मोरी
ऐसी जून बियापी मोपर, कठिन काज छोड़ा है तोपर।

आपन न्याव तुम्हींपर छाँड़ा, लाद चलेगा जब बंजाड़ा।
यह सब कुछ, पर आश है हमकू, हिय पूरन विस्वास है हमकू ॥
हमरी करनी सब बिसराई, देहो बिगड़ों काज बनाई।
देत तुम्हीं औ दिलावत तुमहीं, मारो तुम्हीं औ जिलाओ तुमहीं ॥
सब कुछ तज 'करीम' हों तोको, ध्यावौं, होय न जासों धोकों।

(८२४) राग पीलू—ताल चर्चरी

कैसे तुम आ नैहरवा भुलानी। सइयाँका कहना कबहु नहिं मानी ॥
काम कियो नित निज-मन-मानी, पियाकी सुधि काहे बिसरानी।
टेढ़ो चाल अजहु तज मूरख, चार दिनाकी यह जिंदगानी।
मद-माती इठलात फिरति का, गोरी, का तेरे हियमें समानी।
गुन ढंगसों जो पियाको रिझावै, 'करीम' वही है सखी सयानी ॥

(८२५) राग हुसेनी कान्हरा—ताल झप

ना जानों, पियासो कैसे होयँ बतियाँ।
उनक मनका जुगति नहिं सीखी, यह जिय सोच रहै दिन रतियाँ ॥
वहाँ न कोऊको कोऊ पूछत, सुन-सुन हाल फटति हैं छतियाँ।
और सखी पिया अपने मिलनकी करति 'करीम' है लाखन घतियाँ ॥

इन्शा

(८२६) राग काफी—ताल तिताला

जब छाड़ि करीलकी कुंजनकों, वहाँ द्वारकामें हरि जाय छये।
कलधौतके धाम बनाये घने, महराजनके महराज भये ॥
तज मोरके पंख औ कामरियाँ, कछू औरहि नाते हैं जोड़ लये।
धरि रूप नये किये नेह नये, अब गइयाँ चराइबो भूल गये ॥

रहता पास खवास हमेश हुजूरमें,
ऐसे लाख असंख्य गये मिल धूरमें ॥
मदमाते मगरूर वे मूंछ मरोड़ते,
नवल त्रिया का मोह छनक नहिं छोड़ते।
तीखे करते तरक, गरक मद पानमें,
गये पलक में ढलक तलब मैदानमें ॥
फूलाँ सेज बिछायक तापर पोढ़ते,
ओछे दुपटे साल दुसाले ओढ़ते।
लेके दर्पण हाथ नीके मुख जोवते,
ले गये दूत उपाड़, रहे सब रोवते ॥
अत्तर तेल फुलेल लगाते अंगमें,
अंध-धुंध दिन-रैन तियाके संगमें।
महल अवासा बैठ करंता मौज रे!
ऐसे गये अपार मिला नहिं खोज रे!
रहते भीने छैल सदा रँग रागमें,
गजरा फूलाँ गुधंत धरंता पागमें।
दर्पणमें मुख देखक मुछवा तानता,
जगमें वाका कोइ नाम नहिं जानता!
महल फवारा हौजके मोजाँ माणता,
समरथ आप-समान,और नहिं जाणता!
कैसा तेज प्रताप चलंता दूरमें,
भला-भला भूपाल गया जमपूरमें ॥

सुंदर नारी संग हिंडोले झूलते,
पैन्ह पटंबर अंग फरंता फूलते।
जो थे खूबी खेलके बैठ बजारकी,
सो भी हो गये छैल न ढेरी छारकी॥
राज-कचेरी माँह जे आदर पावते,
करते हुकम गरूर जरूर दिखावते।
पाग धनीकी बाँधके रहते अकड़ते,
रहे धरे धन धाम गये जम पकड़ते॥
इन्द्रपुरी सी मान बसंती नगरियाँ,
भरती जल पनिहारि कनकसिर गगरियाँ।
हीरा लाल झबेर-जड़ी सुखभागयी,
ऐसी पुरी उजाड भयंकर हो गई॥
होती जाके सीसपै छत्रकी छइयाँ,
अटलभिरंती आन दसो दिस माइयाँ।
उदै-अस्त लूँ राज जिनूका कहावता,
हो गये ढेरी-धूर नजर नहिं आवता॥
नित जाके दरबार झडंती नोबताँ,
मंत्री पास प्रवीन करंता म्होवता।
चतुर लोगाँ चोज तरक अति सूझता,
तीनाहूँका माप जगत नहिं बूझता॥
वंका किला बनायके तोपाँ साजियाँ,
माते मैगल द्वार है केते ताजियाँ।

नितप्रति आगे आय नचंती नायका,
वाको गया उपाड़ दूत जमरायका !
माणिक हीरा लाल खजाना मोतियाँ,
सज राणी सिंगार सोलहों जोतियाँ।
दिन-दिन अधिक सुगंध लगाते देहमें,
ऐसे भोगी भूप मिले सब खेहमें !
या तन रंग-पतंग काल उड़ जायगा,
जमके द्वार जरूर खता बहु खायगा।
मनकी तज रे घात, बात सत मान ले,
मनुपाकार मुरार ताहि कूँ जान ले ॥
यह दुनियाँ 'बाजिद' पलकका पेखना,
यामें बहुत बिकार कहो क्या देखना।
सब जीवनका जीव, जगत आधार है,
जो न भजै भगवंत, भागमें छार है ॥
दो-दो दीपक बाल महलमें सोवते,
नारीसे कर नेह जगत नहिं जोवते।
सूँघा तेल लगाय पान मुख खायँगे,
विना भजन भगवान्के मिथ्या जायँगे ॥
राम-नामकी लूट फबै है जीवको,
निसि वासर कर ध्यान सुमर तूँ पीवको।
यह बात परसिद्ध कहत सब गाम रे !
अधम-अजामिल तरे नारायण नामरे !

गूदड़िया गुरु ज्ञान गुरूके ज्ञानमें,
मांग्या टुकड़ा खाय धणीके ध्यानमें।
माया-मोह लगाइ पलक में भूलगा,
रोहीड़ा दिन चार जमींपर फूलगा ॥
ओढ़े साल दुसाल क जागा जरकसी,
टेढ़ी बांधें पाग क दो-दो तरकसी।
खड़ा दलोंके बीच कसे भट सोहता,
से नर खा गया काल सिंह ज्यौ गरजता ॥
तीखा तुरी पलाण सँवारचा राखता,
टेढ़ो चालै चाल छांयाकों झांकता।
हटवाड़ा बाजार खड़्या नर सोहता,
ऐ नर खा गया काल सबै रह्या रोवता ॥
हरि-जन बैठा होय जहाँ चलि जाइए,
हिरदै उपजे ज्ञान राम लव लाइए।
परिहरिए वा ठौड़ भगति नहिं रामकी,
बींद बिहूणी जान कहो कुण कमकी ॥
वाजिदा बाजी रची जैसे संभल-फूल।
दिनां चारका देखना, अन्त धूलकी धूल ॥
कह-कह वचन कठोर खरूड न छोलिए,
सीतल राख सुभाव सबनसों बोलिये।
आपन सीतल होइ औरकों कीजिए,
बलतीमें सुन मित ! न पूलो दीजिए ॥

---

* कहीं-कहीं कहेके पहले एक दोहा भी दिया गया है।

हरि-भक्तन सों नेह पलै तो पालिए,
राम-भजनमें देह गलै तो गालिए ॥
घड़ी-घड़ी घड़ियाल पुकारै कही है,
बहुत गयी है अवधि अलप ही रही है।
सोवै कहा अचेत जाग, जप जीव रे !
चलिहैं आज कि काल बटाऊ जीव रे।
बिना बासका फूल न ताहि सराहिए,
बहुत मित्रकी नारिसों प्रीति न चाहिए।
सठ साहिबकी सेवा कबहुँ न कीजिए,
या असार संसारमें चित्त न दीजिए ॥
जो जियमें कछु ज्ञान, पकड़ रह मनको,
निपटहि हरिको हेत, सुहावत जनको।
पीति-सहित दिन रैन राम मुख बोलई,
रोटी लीये हाथ, नाथ संग डोलई ॥
वदन बिलोकत नैन भई हौं बावरी,
धारे दण्ड विभूत पगन है पावरी।
कर जोगिनको भेस सकल जग डोलिहौं,
ऐसो मेरे नेम, पीव पिव बोलिहौं ॥
एकै नाम अनन्त किहूँके लीजिये,
जन्म-जन्मके पाप चुनौती दीजिए।
लेकर चिनगी सानधरै तू वब्ब रे !
कोठी भरी कपास जाय जर सब्ब रे !

गूदड़िया गुरु ज्ञान गुरूके ज्ञानमें,
माँग्या टुकड़ा खाय धणीके ध्यानमें ।
माया-मोह लगाइ पलक में भूलगा,
रोहीड़ा दिन चार जमींपर फूलगा ॥
ओढ़ै साल दुसाल क जामा जरकसी,
टेढ़ी बाँधै पाग क दो-दो तरकसी ।
खड़ा दलांके बीच कसे भट सोहता,
से नर खा गया काल सिंह ज्यों गरजता ॥
तीखा तुरी पलाण सँवारया राखता,
टेढ़ा चालै चाल छाँयाको झाँकता ।
हटवाड़ा बाजार खड़या नर सोहता,
ऐ नर खा गया काल सबै रह्या रोवता ॥
हरि-जन बैठा होय जहाँ चलि जाइए,
हिरदै उपजै ज्ञान राम लव लाइए ।
परिहरिए वा ठौड़ भगति नहिं रामकी,
बींद बिहूणी जान कहो कुण कामकी ॥
बाजिदा बाजी रची जैसे संभल-फूल ।
दिनाँ चारका देखना, अन्त धूलकी धूल ॥
कह-कह बचन कठोर खरूड न छोलिए,
सीतल राख सुभाव सबनसों बोलिये ।
आपन सीतल होइ औरकों कीजिए,
बलतीमें सुन मित ! न पूली दीजिए ॥

* कहीं-कहीं कड़ेके पहले एक दोहा भी दिया गया है ।

पुंज पुंज हर कुंज गुंजभर
भृंग-रंग हरि आये, हो हो भृंग-रंग हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
झुन झुन दुल-दुल, मंजुल बुल-बुल
फुल्ल मुकुल हरि आये, हो हो फुल्ल मुकुल हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये॥

आलम

(८५५) राग जैजैवंती—ताल कहरवा

जसुदाके अजिर बिराजें मनमोहनजू,
अंग रज लागे छबि छाजें सुरपालकी।
छोटे-छोटे आछे पग, घुंघुरू घूमत घने,
जातें चित्त हित्त लागै शोभा बाल जालकी॥
आछी बतियाँ सुनावै छिन छाँड़िबो न भावै,
छातीसों छपावै लागै छोह वा दयालकी।
हेरि ब्रज नारी हारी वारि फेरि डारी सब;
'आलम' बलैया लीजै ऐसे नंदलालकी॥

(८५६) राग केदारा-ताल कहरवा

मुकता मनि पीत हरी बनमाल सु
सो सुर चापु प्रकास किये जनु।
भूषन दामिनि दीपति है
धुरवा सित चन्दन खोर किये तनु॥

'आलम' धार सुधा मुरली
बरसा पपिहा ब्रजनारिनको पनु ।
आवत हैं बनसे घनते लखि री सजनी घनस्याम सदा-घनु॥

तालिब शाह

(८५७) राग शहाना—ताल चर्चरी

बुब बागे मुड़ागे बने हैं, सुमोहन गरे माल फूलों हिये हैं।
रंग माते अमाते मदके, बिलोकत बदन खौरि चन्दन दियेहैं॥
वेश हरिदेव भृकुटी तुम्हारे, सुलकुटी भँवर लेख या लख लिये हैं।
ना हुआ है निमाना दरशका, सुतालिब वही श्याम गिरवर लिये हैं॥

महबूब

(८५८) राग हमीर—ताल तिताला

आगे धेनु धारी गेरि ग्वालम कतारतामें,
फेरि फेरि टेरि धौरी धूमरीन गनते।
पोंछि पचकारन अँगौछनसों पोंछि-पोंछि,
चूमि चारु चरण चलावें सुवचनते॥
कहै महबूब जरा मुरली अधर वर,
फूंकि दई खरज निखादके सुरनते।
अमित अनंद भरे, कन्द छबि वृन्दावन,
मंदगति आवत मुकुंद मधुवनते॥

पुंज पुंज हर कुंज गुंजभर
भृग-रंग हरि आये, हो हो भृग-रंग हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
झुन झुन दुल-दुल, मंजुल बुल-बुल
फुल्ल मुकुल हरि आये, हो हो फुल्ल मुकुल हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये॥

आलम

(८५५) राग जैजैवंती—ताल कहरवा

जसुदाके अजिर बिराजे मनमोहनजू,
अंग रज लागे छवि छाजें सुरपालकी।
छोटे-छोटे आछे पग, घुंघुरू घूमत घने,
जातें चित्त हित्त लागै शोभा बाल जालकी॥
आछी बतियाँ सुनावैं छिन छाँड़िबो न भावैं,
छातीसों छपावैं लागैं छोह वा दयालकी।
हेरि ब्रज नारी हारी वारि फेरि डारी सब;
'आलम' बलैया लीजै ऐसे नंदलालकी॥

(८५६) राग केदारा-ताल कहरवा

मुकता मनि पीत हरी बनमाल सु
सो सुर चापु प्रकास किये जनु।
भूषन दामिनि दीपति है
धुरवा सित चन्दन खोर किये तनु॥

आलम' धार सुधा मुरली
बरसा पपिहा ब्रजनारिनको पनु ।
आवत हैं बनसे घनते लखि री सजनी घनस्याम सदा-घनु॥

तालिब शाह

(८५७) राग शहाना—ताल चर्चरी

बागे मुहागे बने हैं, सुमोहन गरे माल फूलों हिये हैं ।
ग माते अमाते मददके, बिलोकउ बदन खौरि चन्दन दियेहैं ॥
शि हरिदेव भृकुटी तुम्हारे, सुलकुटी भँवर लेख या लख लिये हैं ।
ा हुआ है निमाना दरशका, सुतालिब वही श्याम गिरवर लिये हैं॥

महबूब

(८५८) राग हमीर—ताल तिताला

आगे धेनु धारी गेरि ग्वालम कतारतामें,
फेरि फेरि टेरि धौरी धूमरीन गनते ।
पोंछि पचकारन अँगोछनसों पोंछि-पोंछि,
चूमि चारु चरण चलावै सुवचनते ॥
कहै महबूब जरा मुरली अधर वर,
फूंकि दई खरज निखादके सुरनते ।
अमित अनंद भरे, कन्द छबि वृन्दावन,
मंदगति आवत मुकुंद मधुवनते ॥

नफ़ीस खलीली

(८५६) राग कान्हरा—ताल चर्चरी

कन्हैयाकी आँखें हिरनसी नसीली।
कन्हैयाकी शोखी कली-सी रसीली॥
कन्हैयाकी छवि दिल उड़ा लेनेवाली।
कन्हैयाकी सूरत लुभा लेनेवाली॥
कन्हैयाकी हर बातमें एक रस है।
कन्हैयाका दीदार सीमी क़फ़स है॥
कभी गोपियोंमें जो पनघटपै आये।
वह नखरेमें आई तो ये हठपै आये॥
किसीका सलामत दुपट्टा न छोड़ा।
जो भागीं तो कंकड़से मटकोंको फोड़ा॥
जो हाथ आई उसकी मरोड़ी कलाई।
बहुत कसमसाई न छोड़ी कलाई॥
बिठाया जमींपर पकड़कर किसीको।
रखा बाँसुरीसे जकड़कर किसीको॥
वह कहती हैं—'अब शाम होती है प्यारे।'
यह कहते हैं—'क्यों आई जमना किनारे?'
ग्वालिनका मक्खन चुराकर जो भागे।
वह लाई शिकायत जसोदाके आगे॥
कहा—'तेरा मोहन सताता बहुत है।
चुराता तो है, पर गिराता बहुत है॥'

कई एक पहलेसे घरमें खड़ी हैं ।
जसोदासे सब बारी-बारी लड़ी हैं ॥
वहीं नागहाँ नन्दका लाल आया ।
कयामतकी चलता हुआ चाल आया ॥
कहा दूरसे—'झूठ कहती हैं माता ।
इसी ताकमें यह तो रहती हैं माता ॥
शिकायात अरजां मजाक इनके सस्ते ।
कहीं जाऊँ तो रोक देती हैं रस्ते ॥
य छेड़ें मुझे और दुहाई न दूं मैं ।
जो ठोकर, झटककर कलाई न दूं मैं ॥
जो पनघट पै इनको दिखाई न दूं मैं ।
जो मुरली बजाता सुनाई न दूं मैं ॥
तड़पती हैं बेचैन होती हैं क्या-क्या ।
मेरे गममें आँसू पिरोती हैं क्या-क्या ॥
न शबको मिला हूँ, न दिनको मिला हूँ ।
महीनोंके बाद आज इनको मिला हूँ ॥
ये झूठी हैं गर शिकवा-बर लब हैं आई ।
मुझे देखनेके लिये सब हैं आई' ॥

सैयद कासिम अली

(८६०) राग बागेश्री—ताल कव्वाली

मोहन प्यारे जरा गलियोंमें हमारी आजा !
आजा, आजा, इधर ऐ कृष्ण कन्हैया ! आजा !
दुःख हरनेके लिये तूने न किया है क्या-क्या ?
फिर वह वंसी लिये जमुना के किनारे आजा !

लाखों गौएँ तेरी अब फिरती हैं मारी मारी
लगन तुझसे ही लगी नद-दुलारे आजा !
तेरी इस भूमिमें छाई हैं घटा जुल्मोंकी !
तिलमिलाते हुए भारतको बचा जा, आजा !
परदये गौवसे हो जायें इशारे, तेरे
अब नहीं ताब गमे हिज्रकी प्यारे आजा !
जल्द आजा कि तेरे वास्ते 'अली' व्याकुल है
कर्मभूमिमें वही कर्म सिखाने आजा !

नित्यलीलालीन श्रीभाईजी श्रीहनुमान प्रसा

श्रीविष्णु-चरण-वन्दन

(८६१) राग जैजैवन्ती—ताल झूमरा

शोभित चारों भुजा सुदर्शन, शंख गदा, सरसिजसे यु
रुचिर किरीट, सुभग पीताम्बर, कमल नयन शोभा संयु
चिह्न विप्र-पदका वक्षपर, कौस्तुभमणि गल मञ्जुलह
परम सुखद श्रीविष्णु-चरण, वन्दन करता हूँ बारंबा

(८६२) राग कल्याण—ताल कहरवा

श्लोक—नारायणं हृषीकेशं गोविन्दं गरुडध्वजम्
वासुदेवं हरिं कृष्णं केशवं प्राणमाम्हम्
दोहा—श्रीगनपति गुरु सारदा, बंदौं बारंबार
परब्रह्मके रूप सब भिन्न-भिन्न आकार
पुनि सुमिरौं गुरुवर चरन, वांछित-फलदातार
अति दुस्तर भवसिंधुतें, जे पहुँचावहिं पार

(८६३) राग भैरवी—ताल रुपक

वन्दों विष्णु विश्वाधार ॥
लोकपति, सुरपति, रमापति सुभग शान्ताकार ।
कमल-लोचन कलुषहर कल्याण पद-दातार ॥
नील नीरद-वर्ण नीरज-नाभ नभ अनुहार ।
भृगुलता-कौस्तुभ सुशोभित हृदय मुक्ताहार ॥
शंखचक्र गदा कमलयुत भुज विभूषित चार ।
पीत-पट परिधान पावन अंग अंग उदार ॥
शेष-शय्या-शयित, योगी-ध्यान-गम्य, अपार ।
दुःखमय भव-भय-हरण, अशरण शरण-अविकार ॥

प्रार्थना

(८६४) राग आसावरी—ताल धुमाली

परम गुरु राम मिलावनहार ।
अति उदार, मञ्जुल मङ्गलमय, अभिमत-फलदातार ॥
टूटी फूटी नाव पड़ी मम भीषण भव नद धार ।
जयति जयति जय देव दयानिधि, बेग उतारो पार ॥

(८६५) राग देशी खमाच—ताल पंजाबी ठेका

आयो चरन तकि सरन तिहारी ।
बेगि करो मोहि अभय बिहारी ॥
जोनि अनेक फिरयो भटकान्यो ।
अब प्रभु पद छाड़ों न मुरारी ! ॥
मो सम दीन न दाता तुम सब ।
भली मिली यह जोरी हमारी ॥

अघ ढोवत अघात नहिं कबहूँ, मन बिषयनको चेरो
इंद्रिय सकल भोगरत संतत, बस न चलत कछु मेरो
काम-क्रोध-मद-लोभ-सरिस अति प्रबल रिपुनतें घेरो
परवस परयो, न गति निकसनकी यदपि कलेस घनेरो
परखे सकल बंधु, नहिं कोऊ बिपदकालको नेरो
दीनदयाल दया करि राखउ, भव जल बूड़त बेरो

(८७१) राग सोहनी—ताल तेवरा

हे दयामय ! दीनबन्धो ! दीनको अपनाइये
डूबता बेड़ा मेरा मँझधार पार लँघाइये
नाथ ! तुम तो पतितपावन, मैं पतित सबसे बड़ा
कीजिये पावन मुझे, मैं सरणमें हूँ आ पड़ा
तुम गरीबनिवाज हो, यों जगत सारा कह रहा
मैं गरीब अनाथ दुःख प्रवाहमें नित बह रहा
इस गरीबीसे छुड़ाकर कीजिये मुझको सनाथ
तुम सरीखे नाथ पा, फिर क्यों कहाऊँ मैं अनाथ
हो तृषित आकुल अमित प्रभु ! चाहता जो बूँद नीर
तुम तृषाहारी अनोखे उसे देते सुधा-क्षीर
यह तुम्हारी अमित महिमा सत्य सारी है प्रभो !
किसलिये मैं रहा बंचित फिर अभीतक हे विभो !
अब नहीं ऐसा उचित, प्रभु ! कृपा मुझ पर कीजिये
पापका बन्धन छुड़ा नित-शान्ति मुझको दीजिये

(८७२) राग केदारा—ताल तीनताल

प्रभु ! मेरो मन ऐसो ह्वै जावै ।

विनसै सकल कामना मनकी अनत न कतहूँ धावै ।
निरखत निरत निरंतर माधुरि, स्याम मधुरति सुख पावै ॥
कामी जिमि कामिनि-सँग चाहै, लोभी धन मन लावै ।
तिमि अविरत निज प्रियतमकी सुधि, छिनइक नहिं बिसरावै ॥
ममता सकल जगतकी छूटै, मधुर स्याम छबि भावै ।
तव आनन सरोज-रस चाखन मन मधुकर बनि जावै ॥

(८७३) राग केदारा—ताल तीनताल

चहौं बस एक यही श्रीराम ।
अविरल अमल अचल अनपाइनि, प्रेम-भगति निष्काम ॥
चहौं न सुत-परिवार, बंधु-धन, धरनी, जुवति ललाम ।
सुख-वैभव उपभोग जगतके चहौं न सुचि सुरधाम ॥
हरि-गुन-सुनत सुनावत कबहूँ, मन न होइ उपराम ।
जीवन सहचर साधु-संग सुभ, हो संतत अभिराम ॥
नीरदनील नवीन वदन अति शोभामय सुख धाम ।
निरखत रहौं बिस्वमय निसिदिन, छिन न लहौं बिस्राम ॥

(८७४) राग आसावरी—ताल धुमाली

मेरे एक राम-नाम आधार ।
ढूँढ़ थक्यो पर मिल्यो न दूजो, भीर परेकों यार ॥
देखे सुने अनेक महीपति, पंडित, साहूकार ।
जद्यपि नीति-धरम-धन संयुत, नहिं अस परम उदार ॥
मात-पिता, भ्राता, नारी, सुत, सेवक, बंधु अपार ।
विपदकालमहँ कोउ न संगी, स्वारथमय संसार ॥
करि करुना दयालु गुरु दीन्हौं, राम-नाम सुखसार ।
दुस्तर भवसागरमहँ अटक्यो बेरो उतरयो पार ॥

(८७५) राग केदारा—ताल तीनताल

हुआ अब मैं कृतार्थ महाराज ।
दिया चरन आश्रय गरीबको, धन्य ! गरीबनिवाज ॥
घूमा नभ-जल-पृथवीतलपर, धरे नित नये साज ।
मिली न शान्ति कहीं प्रभु ! ऐसी जैसी मुझको आज ॥
विविध रूपसे पूजा मैंने कितना देव समाज ।
कितने धनी उदार मनाये, हुआ न मेरा काज ॥
दुखसमुद्रमें डूब रहा था मेरा भग्न जहाज ।
चरन-किनारा मिला अचानक छूटा दुखका राज ॥

(८७६) राग खमाच—ताल दीपचंदी

(मारवाड़ी बोली)

नाथ मैं थारो जी थारो ।
चोखो, बुरो, कुटिल अरु कामी, जो कछु हों सो थारो ॥
बिगड़यो हूँ तो थारो बिगड़यो, थे ही मनैं सुधारो ।
सुधरयो तो प्रभु सुधरयो थारो, थां सूं कदे न न्यारो ॥
बुरो, बुरो, मैं भोत बुरो हूँ, आखर टाबर थारो ।
बुरो कुहाकर मैं रह जास्यूं, नांव बिगड़सी थारो ॥
थारो हूँ थारो ही बाजूं, रहस्यूं थारो थारो ।
आँगलियाँ मुँह परै न होवै, या तो आप बिचारो ॥
मेरी बात जाय तो जाओ, सोच नहीं कछु म्हारो ।
मेरो बड़ो सोच यों लाग्यो बिरद लाजसी थारो ॥
जचे जिसतरां करो नाथ ! अब, मारो चाहे त्यारो ।
जांघ उघाड्यां लाज मरोगा, ऊंडी बात बिचारो ॥

(८७७) राग पीलू—ताल दीपचन्दी
(मारवाड़ी बोली)

नाथ ! थारे सरण पड़ी दासी * ।
(मोय) भवसागरने त्यार ,काटद्यो जनम-मरण फाँसी ॥
नाथ ! मैं भोत कष्ट पाई ।
भटक-भटक चौरासी जूणी मिनख-देइ पाई । मिटाद्यो दुःखाँकी रासी॥
नाथ ! मैं पाप भोत कीना ।
संसारी भोगाँकी आसा दुःख भोत दीना । कामना है सत्यानासी ॥
नाथ ! मैं भगति नहीं कीनी ।
झूठा भोगाँकी तृसनामें उम्मर खो दीनी ।दुःख अब मेटो अबिनासी ॥
नाथ ! अब सब आसा टूटी ।
(थारे) श्रीचरणाँकी भगति एक है संजीवन बूटी ।
रहूँ नित दरसणकी प्यासी ॥

(८७८) राग भीमपलासी—ताल तीनताल
(मारवाड़ी बोली)

नाथ ! मनें अबकी बार बचाओ ॥ टेक ॥
फँस्यो आय मैं भँवर जाल, निकलणकी बाट बताओ ।
रस्तो भूल्यो, मिल्यो अँधेरो, मारग आप दिखाओ ॥
दुखियानें उद्धार कारणको, थारे घणो उमाओ ।
मेरे जिस्यो दुखी कुण जगमें, प्रभुजी आप बताओ ॥
भोत कष्ट मैं भुगत्या स्वामी, अब तो फंद कटाओ ।
धीरज गई, धरम भी छूट्यो, आफत आप मिटाओ ॥

* सांसारिक तापोंसे पीड़ित संसारसे निराश होकर श्रीहरिके चरणोंकी आश्रित एक अबलाकी प्रार्थना ।

आरत भोत हो रह्यो प्रभुजी, अब मत वार लगाओ।
करो माफ तकसीर दासकी, सरण मने बकसाओ॥

(८७९) राग-जोशी ताल दीपचन्दी

(मारवाड़ी वोली)

नाथ ! थारै सरणै आओ जी !
जचै जिसतरां खेल खिलाओ, थे मन-चायो जी॥
वोझो सभी उतरयो मनको, दुख विनसायो जी।
चिंता मिटी, बड़े चरणांको सहारो पायो जी॥
सोच-फिकर अब सारो थारै ऊपर आयो जी।
मैं तो अब निस्चिन्त हुयो अंतर हरखायो जी।
जस-अपजस सब थारो, मैं तो दास कुहायो जी।
मन-भँवरो थारै, चरण-कमलमें जा लिपटायो जी॥

(८८०) राग मलार-ताल रूपक

सुन्यो तेरों पतितपावन नाम !
अजामिल[1] से पतिकों तैं दियो अपनो धाम॥
व्याध[2] खग[3] मृग[4] जे रहे नित धरमतें उपराम॥
किये पवन अति पतित तैं भये पूरनकाम॥
कठिन कलिके काल अति तारे अनेक कुठाम॥

---

१. अजामिलने मरते समय पुत्रके संकेतसे 'नारायण' नाम उच्चारण किया था, जिससे वह परधामको गया।

२. व्याधने भगवान् श्रीकृष्णके पैरमें बाण मारा था, उसकी परम गति हुई।

३. जटायुकी कथा श्रीरामायणमें प्रसिद्ध है।

४. वानर, भालू, गजराज आदि।

धरमहीन, मलीन, पातक निरत आठों जाम ॥
पाप करत उछाह जुत, मम मन न लीन्ह बिराम ॥
तदपि अजहुँ न मोहि तारचो, किमि बिसारियो नाम ॥

(८८१) राग कंकरा—ताल रूपक

दीनबन्धो ! कृपासिन्धो ! कृपाबिन्दु दो प्रभो।
उस कृपाकी बूंदसे फिर बुद्धि ऐसी हो प्रभो ॥
वृत्तियाँ द्रुतगामिनी हों जा समावें नाथमें।
नदी-नद जैसे समाते हैं सभी जलनाथमें ॥
जिस तरफ देखूं उधर ही दरस हो श्रीरामका।
आँख भी मूंदूं तो दीखे मुखकमल घनश्यामका ॥
आपमें मैं आ मिलूं प्रभु ! यह मुझे वरदान दो।
मिलती तरंग समुद्रमें जैसे मुझे भी स्थान दो ॥
छूट जावें दुःख सारे, छुद्र सीमा दूर हो।
द्वैतकी दुविधा मिटै, आनन्दमें भरपूर हो ॥
आन्नद सीमारहित हो, आन्नद पूर्णानन्द हो।
आनन्द सत आनन्द हो, आनन्द चित आनन्द हो।
आनन्दका आनन्द हो, आनन्दमें आनन्द हो।
आनन्दको आनन्द हो, आनन्द ही आनन्द हो।

(८८२) राग भीमपलासी—ताल तीनताल

नाथ ! अब कैसे हो कल्याण ?
प्रभु-पद-पंकज-बिमुख निरंतर रहते पामर प्राण ॥
विषयसुखकातर महामलिन मन चाहत पद निर्वाण।
सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया सब कर गये दूर प्रयाण ॥

लगा हृदयमें द्वेष-घृणा हिंसाका वेधक बाण।
भेदबुद्धिसे भरा हृदय सब भाँति हुआ पाषाण॥
आत्मभावना भूत वैरपर सदा चढ़ाता शाण।
लगा कामना-भूत भयानक, मिटा धर्म परिणाम॥
उभयभ्रष्ट हुआ बनकर अब पशु बिनु पूँछ विषाण।
श्रुति-स्मृतिकी करता अवहेला, पढ़ता नहीं पुराण॥
प्रभो! पतित इस अधम दीनका तुम्हीं करो अब त्राण॥

(८८३) राग आसावरी

एक लालसा मनमहँ धारौं।
वंसीवट कलिंदीतट, नटनागर नित्य निहारौं॥
मुरलीतान मनोहर सुनि-सुनि तन सुधि सकल बिसारौं।
पल-पल निरखि झलक अँग अंगनि पुलकित तन मन वारौं॥
रिझऊँ स्याम मनाइ गाइ गुन गुंज-माल गर डारौं।
परमानंद भूलि जग सगरो स्यामहिं स्याम पुकारौं॥

(८८४) राग जैजैवन्ती—ताल झूमरा

कर प्रणाम तेरे चरणोंमें लगता हूँ अब तेरे काज।
पालन करनेको आज्ञा तब मैं नियुक्त होता हूँ आज॥
अंतरमें स्थित रहकर मेरे बागडोर पकड़े रहना।
निपट निरंकुश चंचल मनको सावधान करते रहना॥
अन्तर्यामीको अन्तःस्थित देख सशङ्कित होवे मन।
पाप-वासना उठते ही हो नाश लाजसे यह जल भुन॥
जीवोंका कलरव जो दिनभर सुननेमें मेरे आवे।
तेरा ही गुणगान जान मन प्रमुदित हो अति सुख पावे॥

तू ही है सर्वत्र व्याप्त हरि ! तुझमें यह सारा संसार।
इसी भावनासे अंतरभर मिलूँ सभीसे तुझे निहार ॥
प्रतिपल निज इन्द्रियसमूहसे जो कुछ भी आचार करूँ।
केवल तुझे रिझानेको, बस, तेरा ही व्यवहार करूँ ॥

(८८५) राग आसावरी

मोकों कछू न चहिये राम !
तुम बिन सब ही फीके लागैं, नाना सुख धन धाम ॥
सुंदरि, संतति, सेवक सब गुन, बुधि, विद्या भरपूर।
कीरति, कला, निपुनता, नीती, इनकौं रखिये दूर ॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि आपनी और जननकौं दीजै।
मैं तो चेरो जनम-जनम को, कर धरि अपनो कीजै ॥

(८८६) राग आसावरी

खड़ा अपराधी प्रभुके द्वार !
न्याय चाहता, क्षमा नहीं, दो दण्ड दोष-अनुसार ॥ १ ॥
अर्थ-दण्ड देना चाहो तो करो स्वार्थ सब छार।
रहने मत दो कुछ भी इसके 'अपना' 'मेरा' कार ॥ २ ॥
कैद अगर करना चाहो तो प्रेम-बेड़ियाँ डार।
रखो बाँध इसे नित निज चरणोंके कारागार ॥ ३ ॥
निर्वासित करना चाहो तो लूटो घर-संसार।
पहुँचा दो सत्वर दोषीको भव-समुद्रके पार ॥ ४ ॥
कभी न आने दो फिर वापस, मरने दो बेकार।
बह जाने दो इसे वहाँ सच्चिदानन्दकी धार ॥ ५ ॥

(८८७) राग भैरवी

होगा कब वह सुदिन समय शुभ, मायावी मन बनकर दीन।
मोहमुक्त हो हो जायेगा, पावन प्रभु-चरणोंमें लीन॥
कब जगकी झूठी बातोंसे, हो जावेगी घृणा इसे।
कब समझेगा उसे भयानक, मान रहा रमणीय जिसे॥
कब गुरु-चरणोंकी रजको यह, निज मस्तकपर धारेगा।
काम-क्रोध-लोभादि वैरियोंको, कब हठसे मारेगा॥
पुण्यभूमि ऋषिसेवितमें कब, होगा इसका निर्जन-वास।
गंगाकी पुनीत धारासे कब सब अघका होगा नास॥
कब छोड़ेंगी सबल इन्द्रियाँ, अपने विषयोंमें रमना।
कब सीखेंगी उलटी आकर अन्तरमें उसके जमना॥
कब साधनके प्रखर तेजसे सारा तम मिट जायेगा।
कब मन विषय विमुख हो हरिकी विमल भक्तिको पायेगा॥
धन-जन-मदकी प्रबल लालसा कष्टमयी कब छूटेगी।
मान-बड़ाई, 'मैं' 'मेरे' की फांसी कब यह टूटेगी॥
कब यह मोह स्वप्न छूटेगा, कब प्रपंचका होगा बाध।
परवैराग्य प्रकट कब होगा, कब मुग्ध होगा इसे अगाध॥
कब भवभयके कारण मिथ्या अहंकारका होगा नाश।
कब सच्चा स्वरूप दीखेगा, छूट जायेगा देहाध्यास॥
कब सबके आधार एक भूमा-सुखका मुख दीखेगा।
कब यह सब भेदोंमें नित्य अभेद देखना सीखेगा॥
कब प्रतिबिम्ब बिम्ब होगा, कब नहीं रहेगा चित-आभास।
निजानन्द निर्मल अज अव्ययमें कब होगा नित्य निवास॥

(८८८) राग आसावरी

बना दो विमलबुद्धि भगवान ।
तर्कजाल सारा ही हर लो, हरो सुमति अभिमान ।
हरो मोह, माया, ममता, मद, मत्सर मिथ्या मान ॥
कलुष काम मति कुमति हरो, हे हरे हरो अज्ञान ।
दम्भ, दोष, दुर्नीति हरण कर करो सरलता दान ॥
भोग-योग अपवर्ग-स्वर्गकी हरो स्पृहा बलवान ।
चाकर करो चारु चरणोंका नित ही निज जन जान ॥
भर दो हृदय भक्ति-श्रद्धासे, करो प्रेमका दान ।
कभी न करो दूर निज पदसे मेटो भवका भान ॥

(८८९) राग पहाड़ी—ताल केरवा

(मारवाड़ी बोली)

अब कित जाऊँजी, हार कर शरणै थाँरै आयो ॥
जबतक धनकी धूम रही घर भायाँ सेती छायो ।
साला साढू भोत नीसरया, नेड़ोइ साख बतायो ॥
अणगिणतीका बण्या भायला, प्रेम घणो दरसायो ।
एक-एकसें बढ़कर बोल्यो, एकहि जीव बतायो ॥
सभा-समाज, पंच-पंचायत, ऊँचो भोत बिठायो ।
वाह-वाहकी धूम मचाई स्याणो घणो बतायो ॥
घरका सभी, साख सबहीसूं, सबहीकै मन भायो ।
बाताँ सेती सभी पसीनै ऊपर खून बुहायो ॥
लक्ष्मी माता करी कृपा जद, चंचल रूप दिखायो ।
माया लई समेट, भरमको पड़दो दूर हटायो ॥

मात-पिताने खारो लाग्यो, भार्या मान घटायो।
साला साढ़ सभी बीछड़्या, कोइ न नेड़ो आयो॥
'एक जीवका' भोत भायला, एक न आडो आयो।
उलटी हँसी उड़ाई जगमें बेवकूफ बतलायो॥
टूट्यो प्रेम, छूट्यो सँग सबसूँ सब कोई छिटकायो।
नाक चढ़ाकर मुँहसूँ बोल्यो, सब जग हुयो परायो॥
सुखको रूप समझकर जगने, भोत दिना भरमायो।
खुल गई पोल, रूप सगलांको असली चौड़ै आयो॥
मिटी भरमना सारी, थारै चरणां चित्त लगायो।
नाथ! अनाथ पतित पापीने तुरत सनाथ बणायो॥

(८९०) राग असावरी

नाथ अब लीजै मोहि उबार!
कामी, कुटिल, कठिन कलिकवलित कुत्सित कपटागार।
मोहि, मुखर, महा मद मण्डित, मंद, मलिन-आचार॥
बलयित विषय, विताडित विलसित विकसित विविध विकार।
दीन, दुखी, दुरदृष्टि, दुरत्यय, दुर्गत दुर्गुण-भार॥
पंकिल, प्रचुर, पतित, परिपंथी, निरपत्रप निःसार।
निःस्व, निखिलनिगमागम वर्जित, निगदित निरयगृह-द्वार॥
दीनाश्रय! तव बिरद विपत्ति-विदारण श्रुति-विस्तार।
सुनत सुयश शुचि सो अब मैं आगत पगहारी-द्वार॥

(८९१) राग बहार

सनातन सत-चित आनँद रूप। अगुण, अज, अव्यय, अलख, अनूप।
अगोचर, आदि, अनादि, अपार। विश्व-व्यापक, विभु विश्वाधार॥

न पाता जिनकी कोई थाह। बुद्धि-बल हो जाते गुमराह ॥
संत श्रद्धालु नर्क कर त्याग। सदा भजते मनके अनुराग ॥
समझकर विषवत् सारे भोग। त्याग, हो जाते स्वस्थ निरोग ॥
एक, बस, करते प्रियकी चाह। विचरते जगमें बेपरवाह ! ॥
धरा, धन, धाम, नाम, आराम। सभी कुछ राम विश्व-विश्राम ॥
देखते सबमें ऐसे भक्त। सतत रहते चिन्तन-आसक्त ॥
प्रेम-सागरकी तुंग तरंग। बाँध मर्यादाका कर भंग ॥
बहा ले जाती जब श्रुतिधार। संत तब करते प्रेम पुकार ॥
प्रेमवश विह्वल हो श्रीराम। भक्त-मन-रञ्जन अति अभिराम ॥
दिव्य मानव-शरीरवर धार। अनोखा, लेते जग अवतार ॥
मदन मनमोहन, मुनि-मन-हरण। सुरासुर सकल विश्व सुख-करण ॥
मधुर मञ्जुल मूरति द्युतिमान। विविध क्रीड़ा करते भगवान ॥
दयावश करते जग-उद्धार। प्रेमसे, तथा किसीको मार ॥
विविध लीला विशाल शुचि चित्र। लौकिक सुखकर सभी विचित्र ॥
जिन्हें गा-सुनकर मोहागार। सहज होते भव-वारिधि पार ॥
तोड़ माया-बन्धन जग-जाल। देखते 'सीय राम' सब काल ॥
वही सुन्दर मृदु युगल-स्वरूप। दिखाते रहो राम रघु-भूप ! ॥
'सकल जग सीय राममय' जान। करूँ सबको प्रणाम, तज मान ॥

(९९२) राग भैरवी

हे निर्गुण ! हे सर्वगुणाश्रय ! हे निरुपम ! हे उपमामय !
हे अरूप ! हे सर्वरूपमय ! हे शाश्वत ! हे शान्तिनिलय ! ॥
हे अज ! आदि ! अनादि ! अनामय ! हे अनन्त ! हे अविनाशी !
हे सच्चित आनन्द, ज्ञानघन, द्वैतहीन, घट-घट-वासी ! ॥

हे शिव, साक्षी, शुद्ध, सनातन, सर्वहित हे सर्वाधार!
हे शुभामन्दिर, सुन्दर, हे शुचि, सौम्य, साम्यमति, रहितविरार॥
हे अन्तर्यामी ! अन्तरतम, अमल, अचल, हे अकल अपार!
हे निरीह ! हे नर-नारायण ! नित्य, निरञ्जन, नव, सुकुमार! ॥
हे नव नीरद नील नराकृति, निराकार, हे नीराकार!
हे समदर्शी, संत-सुखाकर, हे लीलामय प्रभु साकार!
हे भूमा, हे विभु, त्रिभुवनपति, सुरपति, मायापति भगवान!
हे अनाथपति, पतित उधारन, जन-तारन हे दयानिधान! ॥
हे दुर्बलकी शक्ति, निराश्रयके आश्रय, हे दीनदयाल!
हे दानी, हे प्रणतपाल, हे शरणागतवत्सल, जनपाल! ॥
हे केशव ! हे करुणासागर ! हे कोमल, अतिसुहृद महान!
करुणाकर अब उभय अभय चरणोंमें हमें दीजिये स्थान॥
सुर-मुनि-वन्दित कमलानन्दित चरण-धूलि तव मस्तक धार।
परम सुखी हम हो जायेंगे, होंगे सहज भवार्णव पार॥

(८६३) राग भीमपलासी

हे नाथ ! तुम्हीं सबके मालिक तुम ही सबके रखवारे हो।
तुम ही सब जगमें व्याप रहे, विभु ! रूप अनेकों धारे हो॥
तुम ही नभ, जल, थल, अग्नि तुम्हीं तुम सूरज-चाँद-सितारे हो।
यह सभी चराचर है तुममें, तुम ही सबके ध्रुवतारे हो॥
हम महामूढ़ अज्ञानीजन, प्रभु ! भवसागरमें डूब रहे।
नहिं नेक तुम्हारी भक्ति करें, मन मलिन विषयमें खूब रहे॥
सत्सङ्गतिमें नहिं जायें कभी, खल सङ्गतिमें भरपूर रहे।
सहते दारुण दुख दिवस-रैन, हम सच्चे सुखसे दूर रहे॥

तुम दीनबन्धु, जगपावन हो, हम दीन, पतित अति भारी हैं।
है नहीं जगतमें ठौर कहीं, हम आये शरण तुम्हारी हैं॥
हम पड़े तुम्हारे हैं दरपर, तुम पर तन-मन-धन वारे हैं।
अब कष्ट हरो हरि हे हमरे, हम निन्दित निपट दुखारे हैं॥
इस टूटी-फूटी नैया को भवसागरसे खेना होगा।
फिर निज हाथोंसे नाथ! उठाकर पास बिठा लेना होगा॥
हे अशरणशरण,! अनाथनाथ! अब तो आश्रय देना होगा।
हमको निज चरणोंका निश्चित नित दास बना लेना होगा॥

(८६४) राग आसावरी

बना दो बुद्धिहीन भगवान॥
तर्क-शक्ति सारी ही हर लो, हरो ज्ञान-विज्ञान।
हरो सभ्यता, शिक्षा, संस्कृति, नये जगतकी शान॥
विद्या-धन-मद हरो, हरो हे हरे! सभी अभिमान।
नीति भीतिसे पिंड छुड़ाकर करो सरलता-दान॥
नहीं चाहिये भोग-योग कुछ, नहीं मान-सम्मान।
ग्राम्य, गँवार बना दो, तृणसम दीन, निपट निर्मान॥
भर दो हृदय भक्ति-श्रद्धासे करो प्रेमका दान।
प्रेमसिन्धु! निज मध्य डुबाकर मेटो नामनिशान॥

(८६५) राग बिहाग

मोहन, राखु पद-रज तरैं।
सुर-सुरेन्द्र विधि-पद नहिं चहिये, डारहु, मुकुति परैं।
जग-सुखके सब साज सँभारहु, इनते दुख न टरैं॥
सुख-दुख लाभ-हनि जगकी सम, नैकौ मन ना धरैं।
बिनु विराम छवि धाम निरखि तन मन नित प्रेम गरैं॥

(८९६) राग भैरवी

हे स्वामी । अनन्य अवलम्बन, हे मेरे जीवन-आधार ।
तेरी दया अहेतुकपर निर्भर कर आन पड़ा हूँ द्वार ॥
जाऊँ कहाँ जगतमें तेरे सिवा न शरणद है कोई ।
भटका, परख चुका सबको, कुछ मिला न, अपनी पत खोई ॥
रखना दूर, किसीने मुझसे अपनी नजर नहीं जोड़ी ।
अति हित किया सत्य समझाया, सब मिथ्या प्रतीति तोड़ी ॥
हुआ निराश, उदास, गया विश्वास जगत्‌के भोगोंका ।
जिनके लिये खो दिया जीवन, पता नहीं उन लोगों का ॥
अब तो नहीं दीखता मुझको तेरे सिवा सहारा और ।
जल-जहाज कौआ जैसे पाता नहीं दूसरी ठौर ॥
करुणाकर ! करुणाकर सत्वर अब तो दे मंदिर पट खोल ।
बाँकी झाँकी नाथ ! दिखाकर तनिक सुना दे मीठे बोल ॥
गूँज उठे प्रत्येक रोममें परम मधुर वह दिव्य स्वर ।
हृत्-तंत्री बज उठे साथ ही मिला उसीमें अपना सुर ॥
तन पुलकित हो, सु-मन-जलजकी खिल जायें सारी कलियाँ ।
चरण मृदुल बन मधुप उसीमें करते रहें रंगरलियाँ ॥
हो जाऊँ उन्मत्त, भूल जाऊँ तन मनकी सुधि सारी ।
देखूँ फिर कण-कणमें तेरी छबि नव नीरद-घन प्यारी ॥
हे स्वामीने ! तेरा सेवक बन तेरे बल होऊँ बलवान ।
पाप-ताप छिप जायें हों भयभीत मुझे तेरा जन जान ॥

(८९७) राग भीमपलासी

पतित नहीं जो होते जगमें कौन पतितपावन कहता ।
अधमोंके अस्तित्व बिना अधमोंद्धारक कैसे कहता ॥

होते नहीं पातकी, 'पातकि-तारण' तुमको कहता कौन ?
दीन हुए बिन, दीनदयालो ! दीनबंधु फिर कहता कौन ? ॥
पतित, अधम, पापी दीनोंको क्योंकर तुम बिसार सकते।
जिनसे नाम कमाया तुमने क्योंकर उन्हें टाल सकते॥
चारों गुण मुझमें पूरे, मैं तो विशेष अधिकारी हूँ।
नाम बचानेका साधन हूँ, यों भी तो उपकारी हूँ॥
इतनेपर भी नाथ ! तुम्हें यदि मेरा स्मरण नहीं होगा।
दोष क्षमा हो इन नामोंका रक्षण फिर क्योंकर होगा ? ॥
सुन प्रलापयुत पुकार, अब तो करिये नाथ ! शीघ्र उद्धार।
नहीं, छोड़िये, नामको यों कहनेको होता लाचार॥
जिसके कोई नहीं, तुम्हीं उसके रक्षक कहलाते हो।
मुझे नाथ अपनानेमें फिर क्यों इतना सकुचाते हो ?
नाम तुम्हारे चिर सार्थक हैं मेरा दृढ़ विश्वास यही।
इसी हेतु पावन कीजै प्रभु ! मुझे कहींसे आस नहीं॥
चरणोंको दृढ़ पकड़े हूँ, अब नहीं हटूँगा किसी तरह।
भले फेंक दो, नहीं सुहाता अगर पड़ा भी इसी तरह॥
पर यह रखना, स्मरण नाथ ! जो यों दुतकारोगे हमको।
अशरणशरण, अनाथनाथ, प्रभु कौन कहेगा फिर तुमको॥

(८६८) राग भैरवी

सकुच भरे अधखिले सुमनमें छिपकर रहना प्रेम-पराग।
नव दर्शनमें मुग्ध प्राणका होगा मूक मधुर अनुराग॥
भय लज्जा, संकोच सहम, सहसा वाणीका निपट निरोध।
वाचारहित, नेत्र-मुख अवनत, हास्यहीन, बालकवत् क्रोध॥

पाप-पुंज प्रजारिबे हित प्रबल पावक नाम।
होत छिनमें छार, निकसत नाम जान-अजान॥
नाम-सुरसरिमें निरंतर करत जे जन न्हान।
मिटत तीनों ताप, मुख नहिं होत कबहुँ मलान॥
नाम-आश्रित जननके मन बसत नित भगवान।
जरत गरत कुवासना सब तुरत लज्जा मान॥
नाम जीवन, नाम अमरित, नाम सुखको धाम।
नाम-रत जे नाम-पर, ते पुरुष अति मतिमान॥
नाम नित आनंद-निरझर, अति पुनीत पुरान।
मुक्त सत्वर होत जे जन करत सादर पान॥
नाम जपत सुसिद्ध जोग बनत समरथवान।
नामतें उपजत सुभगति बिराग सुभ बलवान॥
नामके परताप दीपत प्रकृति दीप बुझान।
नाम बल जगत प्रभामय भानु तत्त्वज्ञान॥
नामकी महिमा अमित, को सकै करि गुनगान।
रामतें बड़ नाम, जेहि बस बिबस श्रीभगवान॥

(८०३) राग पीलू बरवा

बन्धुगनो! मिल गाओ प्रेमसे—'रघुपति राजाराम'।
मुदित मिलके घोष करो पुनि—'पतितपावन सीताराम'॥
जिह्वा जीवन सफल करो कह—'जय रघुनन्दन, जय सियाराम'।
हृदय खोल बोलो मत चूको—'जानकिवल्लभ सीताराम'॥
गौर रुचिर, नव घनश्याम छबि, 'जय लछमन, जय जय श्रीराम'।
अनुगत परम अनुज रघुवरके—'भरत शत्रुहन शोभाधाम'॥

भय सखा राघवके प्यारे—'कपिपति, लंकापति अभिराम ।'
रम भक्त निष्कामशिरोमणि 'जयश्रीमारुति पूरणकाम ॥'
ति उमंगसे बोलो संतत—'रघुपति राघव राजाराम ।'
तकंठ हो सदा पुकारो—'पतीतपावन सीताराम ॥

(६०४) होरी काफी—ताल दीपचन्दी

भूल जगके विषयनकों, जप मन हरिको नाम ॥
दीनबंधु हरि करुनासागर, पतितनके विश्राम ।
आपद-अंधकारमहँ श्रीहरि पूरनचंद ललाम ॥
पाप ताप सब मिटै नासतें नास होहिं सब काम ।
जमके दूत भयातुर भागैं, सुनत नाम सुखधाम ॥
भाग्यवान जे जपत निरंतर नाम, सदा निष्काम ।
निरख सुखी सत्वर हो मूरति हरिकी जग अभिराम ॥
भाग्यहीन जिन्हके मन-मुखमहँ वसत न हरिको नाम ।
नरकरूप जग जीवन तिन्हको भूमिभार अघ-धाम ॥

(६०५) राग भैरवी—ताल दादरा

राम राम राम भजो, राम भजो, भाई ।
राम-भजन हीन जनम सदा दुखदाई ॥
अति दुरलभ मनुजदेह सहजहीमें पाई ।
मुरख रह्यो राम भूल विषयन मन लाई ॥
वालकपन दुख अनेक भोगत ही बिताई ।
स्त्री-सुत-धनकी अपार चिंता तरुनाई ॥
रात-दिवस पसुकी ज्यों इत उत रह्यो धाई ।
तृसनाकी बेलि वढ़ी पाप-वारि पाई ॥

वात-पित्त-कफहु बढ़यो, दुखद जरा आई।
ईंद्रिनकी शक्ति घटी, सिर धुनि पछिताई॥
इतनेहिमें कठिन काल घेरि लियो आई।
मृत्यु निकट देखि-देखि अति ही भय पाई॥
सोच करत मन-ही-मन अतिसै पछिताई।
हाय मैं न भज्यो राम, कहा करयो माई! ॥
मृत्यु प्रान हरन करत कुटुंबतें छुड़ाई।
महादुःख रह्यो छाय, विफल सब उपाई॥
पापके फलस्वरूप बुरी जोनि पाई।
दुःख-भोग करत पुनि नरकन महँ जाई॥
बार-बार जनम-मृत्यु, व्याधि अरु बुढ़ाई।
सेलत अति कठिन कष्ट, शांति नाहिं पाई॥
यहि विधि भवदुख अपार बरने नहिं जाई।
भव भेषज रामनाम, श्रुति-पुरान गाई॥
राम-नाम जपत त्रिविध ताप जग नसाई।
राम-नाम मंगलकरन सब सिधि सुखदाई॥
प्रेममगन मनते, सकल कामना बिहाई।
जोइ जपत राम नाम सोइ मुकति पाई॥

(८०६) राग आसावरी

भली है राम नामकी ओट।
जिन्ह लीन्ही तिनके मस्तकते परी पापकी पोट॥
राम-नाम सुमिरन जिन्ह कीन्हो मनी न मनकी खोट।
अन्तःकरन भयो अति निर्मल, रही नामिक नाहिं चोट॥

राम-नाम लीन्हें तें जर गइ माया-ममता-मोट ।
राम-नामतें मिले राम, जग रह गयो फोकट-फोट ॥

(९०७) होरी काफी—ताल दीपचन्दी

और सब भूल भले ही, श्रीहरिनाम न भूल ॥
श्रीहरिनाम सुधामय सबके हित, सबके अनुकूल ।
श्रीहरिनाम-भजनते पहुँचत भवसागर पर कूल ॥
रोग, सोक, संताप, पाप सब, जैसे सूखी तूल ।
भगवन्नाम प्रवल पावकतें जरैं सकल जड़मूल ॥
जिन्ह हरिनाम भजन नहिं कीन्हों, जीवन तिनको,धूल ।
भक्ति रसाल मिलै नहिं कवहूँ, बोये विषय बबूल ॥
श्रीहरिनाम भयो जिनके मन जगजीवनको मूल ।
तिन्हको धन्य जगतमहँ जीवन पातक-पथ प्रतिकूल ॥

(९०८) राग भैरवी—ताल झपताल

कर मन हरिको ध्यान, राम गुन गाइये ।
प्रेम मगन सब देह सुरति बिसराइये ॥
हरि-संकीतन करत अश्रु धारा बहै ।
गदगद होवे कंठ, परम सुख सो लहै ॥
पुलकित तनु हरि-प्रेम हृदय जो नाचहीं ।
सुर-मुनि ताकी अनुपम गति नित जाचहीं ॥
नाम लेत मुख हँसत, कबहूँ कर रुदनही
ताको हिय नित करहिं दयामय सदनही ।

(९०९) राग भैरवी—ताल दादरा

राम राम गाओ संतो, राम राम गाओ ।
राम-नाम गाइ-गाइ रामको रिझाओ ॥

रामहिको नाम जपो, रामहिको ध्याओ।
राम राम राम कहत प्रमुदित ह्वै जाओ॥
राम राम सुनि-सुनाइ हिय अति हुलसाओ।
राम राम राम रटत सब विधि सुख पाओ॥
राम नाम मद्य पियो, विषय-मद भुलाओ।
राम गुन-रस पीय-पीय तन-सुधि बिसराओ॥
राम आदि, मध्य राम राम अंत पाओ।
राम अखिल जगतरूप राममें समाओ॥

(९१०) राग तिलककामोद—ताल कहरवा

करतलसों ताली देत, राम मुख बोली।
बस जली तुरंत पातक-पुंजोंकी होली॥

(९११) राग विहाग—ताल दादरा

प्रेममुदित मनसे कहो राम राम राम।
श्री राम राम राम, श्री राम राम राम॥
पाप कटैं, दुख मिटैं लेत राम-नाम।
भव-समुद्र सुखद नाव एक राम-नाम॥
परम शांति-सुख-निधान नित्य राम-नाम।
निराधारको अधार एक राम-नाम॥
परम गोप्य, परम इष्ट मंत्र राम-नाम।
संत-हृदय सदा बसत एक राम-नाम॥
महादेव सतत जपत दिव्य राम-नाम।
काशि मरत मुक्त करत कहत राम-नाम॥
माता-पिता, बंधु-सखा, सबहि राम-नाम।
भक्त-जनन-जीवन-धन एक राम-नाम॥

(९१२) राग गारा

मुखसों कहत राम-नाम पंथ चलत जोई।
पग-पगपर पावत नर जग्य फलहि सोई॥

(९१३) राग श्रीराग विलम्बित
(मारवाड़ी) ताल—तीनताल

बिनती सुण म्हारी, सुमरो सुखकारी हरिके नामनै॥
भटकत फिरयो जूण चौरासी लाख महा दुखदाई।
बिन कारण कर दया नाथ फिर मिनख देह बकसाई॥
गरभमायँ माताके आकर पाया दुःख अनेक।
अरजी करी प्रभूसे, बाहर काढ़ो, राखो टेक॥
करी प्रतिग्या गरभमायँ मैं सुमरण करस्यूँ थारो।
नहीं लगाऊँ मन विषयाँमें प्रभुजी मनै उबारो॥
जलम लेय जगमायँ चितनै विषयाँ मायँ लगायो।
जलम-मरण दुख-हरण रामको पावन नाम भुलायो॥
खोई उमर व्रथा भोगाँकै सुख-सुपने कै माँई।
सुख नहिं मिल्यो, बढ़्यो दुख दिन दिन,
रह्यो सोग मन छाई॥
मृग-तृस्नाकी धरतीमैं जो समझै भ्रमसे पाणी।
उसकी प्यास नहीं मिटणैकी, निस्चै लीज्यो जाणी॥
यूँ इण संसारी भोगाँमैं नहीं कदे सुख पायो।
दुःखरूप सुख देवै किस बिध मूरख मन भरमायो॥
कर विचार, मन हटा विषयसै प्रभु चरणाँमैं ल्याओ।
करो कामना त्याग, हरीको नाम प्रेमसैं गाओ॥

सुख-दुखमें संतोष करो अब, सगली इच्छा छोड़ो
'मैं' और 'मेरो' त्याच हरीके रूप मायँ चित जोड़ो
मिलै शांति दुख कदै न व्यापे, आवै आनँद भारी
प्रेममगन हो नाम हरीको जपो सदा सुखकारी

(६१४) राग जंगला

राम राम राम राम राम राम राम।
भज मन प्यारे सीताराम
संतोंके जीवन ध्रुव तारे, भक्तोंके प्राणोंसे प्यारे
विश्वंभर, सब जग-रखवारे, सब विधि पूरनकाम
राम राम०
अजामील दुख टारनहारे, गज-गनिकाके तारनहारे
द्रुपदसुता भय वारन हारे, सुखमय मंगलधाम
राम राम०
अनिल-अनल जल रवि-शशि-तारे,
पृथ्वी गगन, गन्ध रस सारे
तुम महिमाके सब फौवारे, तुम सबके विश्राम
राम राम०
सुमरत धन-जन, तन-मन वारे, तुम प्रेमामृत-मतवारे
धन्य-धन्य ते जग-उजियारे, जिनके मुख यह नाम
राम राम०

(६१५) राग बिहाग

राम राम राम राम राम राम राम,
राम राम राम राम राम राम राम
जगदभिराम ! मंगलधाम ! पूरनकाम ! सुन्दर नाम

योग-जप-तप-व्रत नियम-यम, यज्ञदान अपार ।
रामसम नहिं एक साधन, राम सब आधार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ॥
राम गुरु, पितु-मातु रामहि, राम सुहृद उदार ।
राम स्वामी, सखा रामहि, राम प्रिय परिवार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ।
राम जीवन, राम तन-मन, राम धन-जन दार ।
राम सुत, सुख-साज रामहि, राम प्राणाधार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम ० ॥
राम राम, विराग रामहि, राम स्नेहागार ।
राम प्रमद, राम प्रेमिक, प्रेम-पारावार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम ० ॥
राम विधि, शिव राम पालक विष्णु विश्वाधार ।
राममय जग, राम जगमय, रामही विस्तार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ॥

(६१६) राग सोहनी

हता जो परम सुख तू, जाप कर हरिनामका ।
रम पावन परम सुन्दर, परम मंगलधामका ॥
या जिसने है कभी हरि-नाम भय भ्रम-भूलसे ।
र गया, वह भी तुरत, बन्धन कटे जड़-मूलसे ॥
सभीं पातक पुराने घास सूखेके समान ।
म करनेको उन्हें हरिनाम है पावक महान ॥

सुख-दुखमें संतोष करो अब, सगली इच्छा छोड़ो।
'मैं' और 'मेरो' त्याच हरीके रूप मायँ चित जोड़ो॥
मिलै सांति दुख कदे न व्यापे, आवै आनँद भारी।
प्रेममगन हो नाम हरीको जपो सदा सुखकारी॥

(६१४) राग जंगला

राम राम राम राम राम राम राम।
भज मन प्यारे सीताराम।
संतोंके जीवन ध्रुव तारे, भक्तोंके प्राणोंसे प्यारे।
विश्वंभर, सब जग-रखवारे, सब विधि पूरणकाम॥
राम राम० ॥

अजामील दुख टारनहारे, गज-गनिकाके तारनहारे।
द्रुपदसुता भय वारन हारे, सुखमय मंगलधाम॥
राम राम० ॥

अनिल-अनल जल रवि-शशि-तारे,
पृथ्वी गगन, गन्ध रस सारे।
तुझ सरिताके सब फौवारे, तुम सबके विश्राम॥
राम राम० ।

तुमपर धन-जन, तन-मन वारे, तुम प्रेमामृत-मदमतवारे
धन्य-धन्य ते जग-उजियारे, जिनके मुख यह नाम।
राम राम० ।

(६१५) राग विहाग

राम राम राम राम राम राम राम
राम राम राम राम राम राम राम
जगविश्राम ! मंगलधाम ! पूरणकाम ! सुन्दर नाम॥

योग-जप-तप-व्रत नियम-यम, यज्ञदान अपार ।
रामसम नहिं एक साधन, राम सब आधार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ॥
राम गुरु, पितु-मातु रामहि, राम सुहृद उदार ।
राम स्वामी, सखा रामहि, राम प्रिय परिवार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ।
राम जीवन, राम तन-मन, राम धन-जन दार ।
राम सुत, सुख-साज रामहि, राम प्राणाधार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम ० ॥
राम राम, विराग रामहि, राम स्नेहागार ।
राम प्रमद, राम प्रेमिक, प्रेम-पारावार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम ० ॥
राम विधि, शिव राम पालक विष्णु विश्वाधार ।
राममय जग, राम जगमय, रामही विस्तार ॥
सब मिल कहो जय जय राम ॥ राम० ॥

(६१६) राग सोहनी

चाहता जो परम सुख तू, जाप कर हरिनामका ।
परम पावन परम सुन्दर, परम मंगलधामका ॥
लिया जिसने है कभी हरि-नाम भय भ्रम-भूलसे ।
तर गया, वह भी तुरत, बन्धन कटे जड़-मूलसे ॥
है सभी पातक पुराने घास सूखेके समान ।
भस्म करनेको उन्हें हरिनाम है पावक महान ॥

सूर्य उगते ही अँधेरा नाश होता है यथा।
सभी अघ हैं नष्ट होते नामकी स्मृतिसे तथा॥
जाप करते जो चतुर नर सावधानीसे सदा।
वे न बँधते भूलकर यमपास दारुणमें कदा॥
बात करते, काम करते, बैठते-उठते समय।
राह चलते नाम लेते विचरते हैं वे अभय॥
साथ मिलकर प्रेमसे हरिनाम करते गान जो।
मुक्त होते मोहसे कर प्रेम-अमृत पान सो॥

भजन-महिमा

(६१७) समाच

रे मन हरि सुमिरन करि लीजै॥ टेक॥
हरिको नाम प्रेमसों जपिये, हरिरस रसना पीजै
हरिगुन गाइय, सुनिय निरंतर, हरि-चरननि चित दीजै।
हरि-भगतनकी सरन ग्रहन करि, हरिसँग प्रीति करीजै
हरि-सम हरि-जन समुझि मनहिं मन तिनकौ सेवन कीजै।
हरि केहि बिधिसों हमसों रीझें, सो ही प्रश्न करीजै
हरि-जन हरिमारग पहिचानें, अनुमति देहि सो कीजै।
हरिहित गाइय, पहिरिय हरिहित, हरिहित करम करीजै
हरि-हित हरि-सन सब जग सेइय, हरिहित मरिये जीजै।

(६१८) राग मालगुञ्जी-ताल एकताल

मन बन मधुप हरिपद-सरोरुह लीन हो।

तू भूलकर सारे जगतकी भावना,
हर मस्त आठों पहर, मन यों दीन हो ॥ मन० ॥
तू गुनगुनाहट छोड़ बाहरकी सभी,
बस रामगुन गुंजार कर मधु पीन हो ॥ मन० ॥
तू छोड़ दे अब जहँ तहाँका भटकना,
हरि चरण आश्रित तू यथा जल मीन हो ॥ मन० ॥

(६२०) राग सारंग—ताल तीनताल

हरिको हरि-जन अतिहि पियारे !
हरि हरि-जनतें भेद न राखें, अपने सम करि डारें ॥
जाति-पाँति, कुल-धाम, धरम, धन, नहिं डिग नेम विचारें।
जेहि मन हरि-पद प्रेम अहैतुक, तेहि डिग नेम विसारें ॥
व्याध, निषाद, अजामिल, गनिका, केते अधम उधारे।
करि खग बानर-भालु-निसाचर, प्रेम-बिबस सब तारे ॥
परखि प्रेम हित हरपि राम भिलनीके भवन पधारे।
वारहिं वार खाय जूठे फल, रहे सराहत हारे ॥
बिदुर-घरनि सुधि बिसरी तनकी स्याम जबहिं पगु धारे।
कदली-फलके छिलका खाये, प्रेममगन मन भारे।
रे मन ! ऐसे परम प्रेममय हरिको मत बिसरा रे।
प्रभुके पद सरोज रस चाखन, तू मधुकर वनि जा रे ॥

(६१६) रागपूर्वी—ताल तीनताल

मैं नित भगवन हाथ बिकाऊँ।
आठों जाम हृदयमें राखूँ पलक नहीं विसराऊँ ॥
कल न परत बैकुण्ठ बसत मोहि, जोगिन मन न समाऊँ।
जहँ मम भगत प्रेमजुत गावहिं तहाँ बसत सुख पाऊँ ॥

सूर्य उगते ही अँधेरा नाश होता है यथा।
सभी अघ है नष्ट होते नामकी स्मृतिसे तथा॥
जाप करते जो चतुर नर सावधानीसे सदा।
वे न बँधते भूलकर यमपास दारुणमें कदा॥
बात करते, काम करते, बैठते-उठते समय।
राह चलते नाम लेते विचरते हैं वे अभय॥
साथ मिलकर प्रेमसे हरिनाम करते गान जो।
मुक्त होते मोहसे कर प्रेम-अमृत पान सो॥

भजन-महिमा

(६१७) समाच

रे मन हरि सुमिरन करि लीजै ॥ टेक ॥
हरिको नाम प्रेमसों जपिये, हरिरस रसना पीजै।
हरिगुन गाइय, सुनिय निरंतर, हरि-चरननि चित दीजै॥
हरि-भगतनकी सरन ग्रहन करि, हरिसँग प्रीति करीजै।
हरि-सम हरि-जन समुझि मनहिं मन तिनकौ सेवन कीजै॥
हरि केहि बिधिसों हमसों रीझैं, सो ही प्रश्न करीजै।
हरि-जन हरिमारग पहिचानैं, अनुमति देहिं सो कीजै॥
हरिहित गाइय, पहिरिय हरिहित, हरिहित करम करीजै।
हरि-हित हरि-सन सब जग सेइय, हरिहित मरिये जीजै॥

(६१८) राग मालगुञ्जी-ताल एकताल

मन बन मधुप हरिपद-सरोरुह लीन हो।
निश्चिन्त कर रस-पान भय-भ्रम हीन हो॥ टे

तू भूलकर सारे जगतकी भावना,
हर मस्त आठों पहर, मन यों दीन हो ॥ मन० ॥
तू गुनगुनाहट छोड़ बाहरकी सभी,
बस रामगुन गुंजार कर मधु पीन हो ॥ मन० ॥
तू छोड़ दे अब जहँ तहाँका भटकना,
हरि चरण आश्रित तू यथा जल मीन हो ॥ मन० ॥

(६२०) राग सारंग—ताल तीनताल

हरिको हरि-जन अतिहि पियारे !
हरि हरि-जनतें भेद न राखें, अपने सम करि डारें ॥
जाति-पाँति, कुछ-धाम, धरम, धन, नहिं डिग नेम विचारें।
जेहि मन हरि-पद प्रेम अहैतुक, तेहि डिग नेम बिसारें ॥
व्याध, निपाद, अजामिल, गनिका, केते अधम उधारे।
करि खग बानर-भालु-निसाचर, प्रेम-बिबस सब तारे ॥
परखि प्रेम हित हरपि राम भिलनीके भवन पधारे।
बारहिं बार खाय जूठे फल, रहे सराहत हारे ॥
बिदुर-घरनि सुधि बिसरी तनकी स्याम जबहिं पगु धारे।
कदली-फलके छिलका खाये, प्रेममगन मन भारे।
रे मन ! ऐसे परम प्रेममय हरिको मत बिसरः रे।
प्रभुके पद सरोज रस चाखन, तू मधुकर बनि जा रे ॥

(६१६) रागपूर्वी—ताल तीनताल

मैं नित भगवन हाथ विकाऊँ।
आठों जाम हृदयमें राखूँ पलक नहीं बिसराऊँ ॥
कल न परत बैकुण्ठ बसत मोहि, जोगिन मन न समाऊँ।
जहँ मम भगत प्रेमजुत गावहिं तहाँ बसत सुख पाऊँ ॥

भगतनकी जैसी रुचि देखूं तैसो वेष बनाऊँ।
टारूँ अपने वचन भगत लगि, तिनके वचन निभाऊँ॥
ऊँच-नीच सब काज भगतके, निज कर सकल बनाऊँ।
पग धोऊँ, रथ हांकूं, माजूं बासन, छानि छवाऊँ॥
मागूं नाहिं दाम कछु तिनतें, नहिं कछु तिनहिं सताऊँ।
प्रेमसहित जल, पत्र, पुष्प, फल, जो देवै सो खाऊँ॥
निज 'सरबस' भगतनको सौंपूं, अपनो स्वत्व भुलाऊँ।
भगत कहैं सोइ करूँ निरंतर, बेचै तो बिक जाऊँ॥

(६११) राग मालकोश—ताल तीनताल

तूं भाइ म्हारो रे म्हारो।
तू म्हारो, तेरो सब म्हारो, जग सारो ही म्हारो॥
मनमें सदा दूसरो समझै ऊपरसें कह थारो।
म्हारो होता साँता भी सो रहे म्हारेसें न्यारो॥
एक बार जो कपट छोड़कर कहै 'नाथ मैं थारो'।
सो म्हारे सगळाँ पुतरांमें अधिक लाडलो म्हारो॥
सदा पातकी, सदा कुकरमी, विषयांमें मतवारो।
'मैं थारो, यू साचै मनसें कहतां ही हो म्हारो॥
झटपट पुन्यवान सो होवै, पापांसें छुटकारो।
म्हारी म्हारी गोद विराजै, कदे न म्हासूं न्यारो॥
तन-मन-वाणीसें जो 'हारो' सो निस्चै ही म्हारो।
कदे न लाजगो, कदे न म्हाजै, नांव बिड़द-जल म्हारो॥

भगवत्कृपा

(६२२) राग पलास

पुत्र-शोक सन्तप्त कभी कर, दारुण दुख है देती ।
कभी अयश अपमान दानकर,मान सभी हर लेती ॥
कभी जगतके सुंदर सुख सब छीन, दीन मन करती ।
पथभ्रान्त करके भी कठिन व्यवहार विषम आचरती ॥ १ ॥
पुत्र-कलत्र, राजवैभव वहु, मान कभी है देती ।
दारुण दुख-दारिद्य-दीनता क्षणभरमें हर लेती ॥
पल-पलमें, प्रत्येक दिशामें सतत कार्य है करती ।
कड़वी मीठी औषध देकर व्यथा हृदयकी हरती ॥ २ ॥
पर वह नहीं कदापि सहज ही परिचय अपना देती ।
चमक तुरत चंचल चपला-सी दृग अञ्चल ढक लेती ॥
जबतक इस घूंघटवालीका मुख नहिं देखा जाता ।
नाना भाँति जीव तबतक अकुलाता, कष्ट उठाता ॥ ३ ॥
जिस दिन यह आवरण दूर कर दिव्य द्युति दिखलाती ।
परिचय दे, पहचान बनाकर शीतल करती छाती ॥
उस दिनसे फिर सभी वस्तु परिपूर्ण दीखती उससे ।
संसृतिहारिणि सुधा-वृष्टि हो रही निरंतर जिससे ॥ ४ ॥
सहज दयाकी मूरति देवीने जबसे अपनाया ।
महिमामय मुखमंडल अपनेकी दिखला दी छाया ॥
जबसे अभय हुआ, आकुलता मिटी, प्रेम-रस छलका ।
मनका उतरा भार सभी, अब हृदय हो गया हलका ॥
जिन विभीपिकाओंसे डरकर पहले था थर्राता ।
उनमें भव्य [illegible] दर्शन कर अब प्रमुदित मुसकाता ॥

भगवत्कृपा । 'अकिंचन' तेरे ज्यों-ज्यों दर्शन पाता ।
त्यों-ही-त्यों आनंद-सिंधुमें गहरा डूबा जाता ॥ ६ ॥

चेतावनी

(९२३) राग भैरवी—ताल रुपक

चेत कर नर, चेत कर, गफलतमें सोना छोड़ दे ।
जाग उठ तत्काल, हरि-चरणोंमें चितको जोड़ दे ॥
मनुज-तन संसारमें मिलता नहीं है बार-बार ।
हो सजग, ले लाभ इसका, नाम प्रभुका मत बिसार ॥
विषय-मदमें चूर होकर क्यों दिवाना हो रहा ।
श्वास ये अनमोल तेरे, क्यों वृथा तू खो रहा ॥
त्याग दे आसा विषयकी, काट ममता-पासको ।
ध्यान कर हरिका सदा, कर सफल हर एक श्वासको ॥
विषय-मदको छोड़ हरि-पद प्रेम-मद तू पान कर ।
हो दिवाना प्रेममें श्रीरामका गुणगान कर ॥
परम प्रियतम हृदय-धनके प्रेम-मदमें चूर हो ।
छका रह दिन-रात तू आनंदमें भरपूर हो ॥

(९२४) राग धुन लावनी—ताल कहरवा

पल भर पहले जो कहता था, यह धन मेरा यह घर मेरा ।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा ॥
जिस चटक-मटक औ फैसनपर तू है इतना भूला फिरता ।
जिस पद-गौरवके रौरवमें दिन-रात शौकसे है गिरता ॥
जिस तड़क-भड़क औ मौज मजोंमें फुरसत नहीं तुझे मिलती ।
जिस गान तान औ गप्प-शप्पमें सदा जीभ तेरी हिलती ॥

इन सभी साज समानोंसे छुट जायेगा रिश्ता तेरा।
प्राणोंके तनसे जातेही उसको लाकर बाहर गेरा ॥ १ ॥

जिस धन-दौलतके पानेको तू आठों पहर भटकता है।
जिन भोगोंका अभाव तेरे अंतरमें सदा खटकता है॥
जिस सबल देह सुंदर आकृतिपर तू इतना अकड़ा जाता।
जिन विषयोंमें सुख देख रहा, पर कभी नहीं पकड़े पाता॥
इस धन, जोवन, बल, रूप सभीसे टूटेगा नाता तेरा।
प्राणोंके तनसे जातेही उसको लाकर बाहर गेरा॥ २ ॥

जिस तनको सुख पहुँचानेको तू ऊँचा महल बनाता है।
जिसके विलासके लिये निरंतर चुन-चुन साज सजाता है॥
जिसको सुंदर दिखलानेको है साबुन तेल लगाता तू।
जिसकी रक्षाके लिये सदा है देवी-देव मनाता तू॥
वह धूलि-धूसरित हो जायेगा सोने-सा शरीर तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको बाहर लाकर गेरा॥ ३ ॥

जिस नश्वर तनके लिये किसीसे लड़नेमें नहिं सकुचाता।
जिस तनके लिये हाथ फैलाते जरा नही तू शरमाता॥
जो चोर डाकुओंके डरसे नित पहरोंके अंदर सोता।
जो छायाको भी भूत समझकर डरता है व्याकुल होता॥
वह देह खाक हो पड़ा अकेला सूने मरघटमें तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ ४ ॥

जिन माता-पिता, पुत्र-स्वामीको अपना मान रहा है तू।
जिन मित्र, बन्धुओंको, वैभवको अपना जान रहा है तू॥

जमके कारागार नरक महँ अतिसय संकट पाय।
बार-बार करनी सुमिरन करि सिर धुनि-धुनि पछिताय ॥
जो यहि दुखतें उबरो चाहे, तो हरि नाम पुकार।
राम-नाम ते मिटै सकल दुख, मिलै परम सुख सार ॥

(६२६) राग कौसिया—ताल कहरवा

अरे मन, तू कछु सोच-बिचार।
झूठो जग साँचो करि मान्यों, भूल्यो फिरत गँवार ॥
मृग जिमि भूल्यो देखि असत जल, मरु धरनी बिस्तार।
सून्याकास तिरवरा दीखत, मिथ्या नेत्र विकार ॥
रसरी देखि सरप जिमि मान्यो, भयवस रह्यो पुकार।
सीप माहिं ज्यों भयो रौप्य-भ्रम, तिमि मिथ्या संसार ॥
स्वप्न-दृश्य साँचे करि मानत, नहिं कछु तिन महँ सार।
तिमि यह जग मिथ्या ही भासत, प्रकृति-जनित खिलवार ॥
जो यातें उद्धार चहै तो, हरिमय जगत निहार।
मायापतिकी सरन गहे तें, होवै तव निस्तार ॥

(६३०) राग कलिंगड़ा—ताल तीनताल

अरे मन, कर प्रभुपर बिस्वास।
क्यों इत उत तू भटक्यो डोलै, झूठे सुखकी आस ॥
सुंदर देह, सुहावनि नारी सब बिधि भोग-बिलास।
कहा भयो धन-पुत्र भयेतें, मिटी न जमकी त्रास ॥
नौकर-चाकर, बंधु घनेरे, ऊँची पदवी खास।
डरत लोग देखत भौं टेढ़ी करत मृत्यु उपहास ॥
मिथ्या मद-उन्मत्त गँवाये व्यर्थ अमोलक स्वास।
पछितायें पुनि कछु न बसाये, बनै कालको ग्रास ॥

(६३१) राग जोगिया—ताल दीपचन्दी

मूढ ! केहि बलपर तू इतरात ।।
करत न सीधी बात काहु सों, सदा रहत अठलात ।
जा दिन प्रान देह तजि जैहै कोउ न पूछिहैं बात ।।
जेहि तनुके सुख साज सँवारन संतत सबहिं सतात ।
सो तनु सहज धूरि मिलि जैहे छार होहिं सब गात ।।
जेहि धन संचै हेतु भूलि हरि, डोलत सब दिन रात ।
धरम-करम तजि सदा गीध ज्यों मांस हेतु ललचात ।।
सबसों रारि करत, नहिं मानत बंधु पूज्य, पितु-मात ।
सो धन सरबस एहि थल रहिहैं, संग न दमरी जात ।।
माल-मिलकियत सब रहि जैहैं सबै टूटिहैं नात ।
सगे-सहोदर, पुत्र पाहुने, तजिहैं जननी तात ।।
राम-नामको जाप करत खल, पंचन माहि लजात ।
'राम नाम सत,' सबै बोलिहैं तोहि मसानु लै जात ।।
रात-दिवस भटकत केहि कारन, नहिं कछु भेद लखात ।
भूलि भगतवत्सल भगवानहिं नरतनु वृथा गँवात ।।

(६३२) राग बहार--ताल तीनताल

(मारवाड़ी बोली)

छोड़ मन तू मेरा-मेरा अंतमें कोई नहीं तेरा ।।
धन कारण भटक्यो फिरचो, रच्यो नित नया ढंग ।
ढूंढ-ढूंढकर पाप कमाया, चली न कौड़ी संग ।
होय गया मालक बहुतेरा ।। छोड़० ।।
टेढी बाँधी पागडी, बण्यो छबीलो छैल ।

दुर्जनकी मीठी बानी सुनि, तनिक प्रतीत न कीजै।
छाड़िय विष सम ताहि निरंतर, मनहिं थान जनि दीजै॥
दुर्जन संग कुमति अति उपजै, हरि-मारग अति छीजै।
छूटै प्रेम-भजन श्रीहरिको, मन बिषयनमें भीजै॥
विनसै सकल सांति सुख मनके, सिर धुनि-धुनि कर मीजै।
मन अस दुर्जन दुखनिधि परिहरि, संत संगत रति कीजै॥

(९३६) लावनी, धुन लावनी—ताल कहरवा

इधर-उधर क्यों भटक रहा मन-भ्रमर, भ्रान्त उद्देश्य विहीन।
क्यों अमूल्य अवसर जीवनका व्यर्थ खो रहा तू मतिहीन॥
क्यों कुवास-कटंकयुत विसमय विषय-बेलिपर ललचाता।
क्यों सहता आघात सतत क्यों दुःख निरंतर है पाता॥
विश्व-वाटिकाके प्रति-पदपर भटक भले ही, हो अति दीन।
खाकर ठोकर द्वार-द्वारपर हो अपमानित, हीन-मलीन॥
सह ले कुछ संताप और यदि तुझको ध्यान नहीं होता।
हो निराश, निर्लज्ज भ्रमण कर फिर चाहे खाते गोता॥
विषमय विषय-बेलिको चाहे कमल समझकर हो रह लीन।
चाहे जहर भरे भोगोंको सलिल समझकर बन जा मीन॥
पर न जहाँतक तुझे मिलेगा पावन प्रभु-पद-पद्म-पराग।
होगा नहीं जहाँतक उसमें अनुपम तव अनन्य अनुराग॥
कर न चुकेगा तू जबतक अपनेको, बस, उसके आधीन।
होगा नहीं जहाँतक तू स्वर्गीय सरस सरसिज आसीन॥
नहीं मिटेगा ताप वहाँतक, नहीं दूर होगी यह भ्रांति।
नहीं मिलेगी शांति सुखप्रद नहीं मिटेगी भीषण श्रांति॥

इससे हो सत्वर, सुन्दर हरि-चरण-सरोरुहमें तल्लीन।
कर मकरंद मधुर आस्वादन पापरहित हो पावन पीन॥
भय-भ्रम-भेद त्यागकर, सुखमय सतत सुधारस कर तू पान।
शांत-अमर हो, शरणद चरण-युगलका कर नित-गुण-गण-गान॥

(८३७)

शुद्ध, सच्चिदानंद, सनातन, अज, अक्षर, आनँद-सागर।
अखिल चराचरमें नित व्यापक, अखिल जगतके उजियागर॥
विश्व-मोहिनी मायाके मोहन मनमोहन ! नटनागर !
रसिक श्याम ! मानव-वपु-धारी ! दिव्य, भरे गागर सागर॥
भक्त-भीति-भंजन, जन-रंजन नाथ निरंजन एक अपार।
नव-नीरद-श्यामल सुन्दर शुचि, सर्वगुणाकर-सुषमा-सार॥
भक्तराज वसुदेव-देवकीके सुख-साधन, प्राणाधार।
निज लीलासे प्रकट हुए अत्याचारीके कारागार॥
पावन दिव्य प्रेम-पूरित व्रजलीला प्रेमीजन-सुखमूल॥
तन-मन-हारिणि बजी बंसरी रसमयकी कालिंदी-कूल॥
गिरिधर, विविध रूप धर हरिने हर ली विधि-सुरेंद्रकी भूल।
कंस-केसि बध, साधु-त्राण कर यादव-कुलके हर हृच्छूल॥
समरांगणमें सखा भक्तके अश्वोंकी कर पकड़ लगाम।
बने मार्गदर्शक लीलामय प्रेम-सुधोदधि, जन-सुखधाम॥
प्रेमी पार्थव्याजसे सबको करुणाकर लोचन अभिराम।
शरणागतिका मधुर मनोहर तत्त्व सुनाया सार्थ ललाम॥
'मन्मना भव, भव मद्भक्तः मद्याजी कर मुझे प्रणाम।
सत्य शपथयुत कहता हूँ प्रिय सखे ! मुझीमें ले विश्राम॥

छोड़ सभी धर्मोंको मेरी एक शरण हो जा निष्काम
चिंता मत कर, सभी पापसे तुझे छुड़ा दूँगा प्रिय काम
श्रीहरिके सुखमय मंगलमय प्रण वाक्योंकी स्मृति कर दीन
नित्त ! सभी चंचलता तजकर चारु चरणमें हो जा लीन
रसिक विहारी मुरलीधर, गीतगायकके हो आधीन
त्रिभुवनमोहनके अतुलित सौंदर्याम्बुधिका बन जा मीन

(८३८) राग वागेश्री—ताल तीनताल

मन सत-संगति नित कीजै ।
संत-मिलन त्रय-ताप नसावन, संतचरन चित दीजै ॥
संतन निकट नित्यप्रति जइये, हरि-नामामृत पीजै ।
संतनि सकल भाँति नित सेइय, सब विधि मुदित करीजै ॥
संतन महँ विस्वास करिय नित, श्रद्धा अतिसय कीजै ।
संतहि नित हरिरूप निहारिय, संत कहें सोइ कीजै ॥
हरिको सकल मरम ते जानहिं, तिनसों सब सुनि लीजै ।
सुनि-सुनि मनमँह धारन कीजै, मन तासों रँगि लीजै ॥
संत सुहृद जे पंथ बतावें, तेहि पथ गमन करीजै ।
झटपट हरिके धाम पहुँचिये, प्रमुदित दरसन कीजै ॥

लीला

(८३९) राग कामोद—ताल तीनताल

स्याम मोहि तुम बिन कछु न सुहावै ।
जबतें तुम तजि ब्रज, गये मथुरा हिय उथल्योई आवै ॥
बिरह बिथा सगरे तनु ब्यापी, तनिक न चैन मिलावै ।
पल नहि परत निमेष एक मोहि, मन-समुद्र लहरावै ॥

नँद-घर सूनो मधुवन सूनो, सूनी कुंज जनावै।
गोठ, बिपिन, जमुना-तट सूनो, हिय सूनो बिलखावै॥
अति बिह्वल वृषभानुनंदिनी नैननि नीर बहावै।
सकुच बिहाइ पुकारि कहति सो, स्याम मिलैं सुख पावै॥

(९४०) राग देशी—ताल तीनताल

स्याम ! अब मत तरसाओजी !
मनमोहन नँदलाल, दयाकर दरस दिखाओजी॥
व्याकुल आज आपकी राधा, माधव आओजी।
तव दरसन लगि तृषित दृगनको सुधा पियाओजी॥
तुम बिन प्रान रहैं अब नाहीं धाय बचाओजी।
प्रानाधार ! प्रान चह निकसन, वेगि सिधाओजी॥
राधा कहत, गये राधाके, पुनि पछिताओजी।
राधा बिना स्याम नहिं "राधा-कृष्ण" कुहाओजी॥

(९४१) राग भैरवी—ताल तीनताल

ऊधो ! तुमतो बड़े विरागी।
हम तो निपट गँवारि ग्वालिनी, स्याम-रूप अनुरागी॥
जेहि छिन प्रथम स्याम छवि देखी, तेहि छिन हृदय समानी॥
निकसत नहिं अब कौनेहु विधि रोम-रोम उरझानी॥
आठों जाम मगन मन निरखत स्याम मुरति निज माहीं।
दृग नहिं पेखत अन्य वस्तु जग, बुद्धि विचारत नाहीं॥
ऊधो ! तुम्हरो ग्यान निरंतर होउ तुमहिं सुखकारी।
हम तो [illegible]ाम-रँग राचीं ताहि न सकहिं उतारी॥

(६४२) राग भैरवी—ताल दीपचन्दी

वनहिं वन स्याम चरावत गैया ॥
सुभग अंग सुखमाको सागर कर बिच लकुट धरैया ।
पीत वसन दमकत दामिनि सम, मुरली मधुर बजैया ॥
धावत इत उत दाऊके संग, खेल करत लरिकैयाँ ।
गैयनके पाछे नित भाजत, नंदरायको छैया ॥
धन्य-धन्य वे ब्रजकी धूमरि धौरी कारी गैया ।
जिनहिं पियावत जल जमुना-तट ठाढ़ो आपु कन्हैया ॥

(६४३) राग सारंगा—ताल तीनताल

(मारवाड़ी बोली)

ऊधो मधुपुरका वासी ।
म्हारो बिछड्यो स्याम मिलाय, बिरहकी काट कठण फाँसी ॥
स्याम बिनु चैन नहीं आवे ।
म्हारो जबसे बिछड्यो स्याम, हीवड़ो उमड्यो ही आवे ॥
छाय रही व्याकुलता भारी ।
म्हारे स्याम विरहमें आज, नैनमें रह्यो नीर जारी ॥
स्याम बिनु ब्रज सूनो लागे ।
सूनी कुंज तीर जमुनाको, सब सूनो लागे ॥
गोठ-बन स्याम बिना सूनो ।
म्हारे एक-एक पल जुग सम बीतै, बिरह बढ़े दूनो ॥
ऊधो ! अरज सुणो म्हारी ।
म्हारो गुण नहिं भूलाँ कदे, मिलाद्यो मोहन बनवारी ॥

(६४४) राग हमीर—ताल तीनताल

विदुर-घर स्याम पाहुने आये !
नख-सिख रुचिर रूप मनमोहन, कोटिमदन छबि छाये ॥
विदुर न हुते घरहिमें तेहि छिन, स्याम पुकारन लागे ।
विदुर घरनि नहाति उठि धाई नैन प्रेमरस पागे ॥
भूली बसन न्हात रहि जेहि थल, तनु सुधि सकल भुलाई ।
बोलति अटपट बचन प्रेमवस, कदरी-फल ले आई ॥
छीलत डारत गूदो इत-उत छिलका स्याम खवावैं ।
बारहि-बार स्वाद कहि-कहि हरि, प्रमुदित भोग लगावैं ॥
तनिक देर महँ हरि गुन गावत, विदुर घरहिं जब आये ।
देखि दरस सो कहत, 'अहह ! तैं छिलका स्याम खवाये' ॥
करतें केरा झटकि बिदुर घरनी धरमाहिं पठाई ।
तनु सुधि पाइ समाज ससंकित, बसन पहिरि चलि आई ॥
विदुर प्रेमजुत छीलि छीलिको केरा हरिहिं खवावैं ।
कहत स्याम वह सरस मनोहर स्वाद न इनमहँ आवैं ॥
भूखो सदा प्रेमकों डोलूं भगत-जनन गृह जाऊँ ।
पाइ प्रेमयुत अमिय पदारथ, खात न कबहुँ अघाऊँ ॥

(६४५)

हरि अवतरे कारागार ॥
दिसि सकल भईं परम निरमल अभ्र सुखमा सार ।
लता-विटप सुपल्लवित पुष्पित नमत फल-भार ॥
सुखद मंद सुगंध सीतल वहत मलय-बयार ।
देवगन हरखत सुमन बरखत करत जयकार ॥

विनय करत बिरंचि नारद सिद्ध बिबिध प्रकार।
करत किन्नर गान बहु गंधरब हरख अपार॥
संख चक्र गदा नवांबुज लसत हैं भुज चार।
भृगु-लता कौस्तुभ सुसोभित, कांतिके आगार॥
नौमि नीरद नील नव तनु गले मुक्ताहार।
पीत पट राजत, अलक लखि अलिहु करत पुकार॥
परम बिस्मित देखि दंपति छबिहि अमित उदार।
निरखि सुंदरता अपरिमित लजत कोटिन मार॥

(६४६) राग आसावरी—ताल तीनताल

नंदसुत चुपकै माखन खात।
ठाढ़ो चकित चहूँ दिसि चितवत, मंद मंद मुसुकात॥
मथनीमहँ कोमल कर डारे, भाजनकी टहुरात।
जो पावत सो लेत ढीठ हठि, नैकहु नाहिं डेरात॥
देखति दूरि ग्वालिनी ठाढ़ी, मन धरि बैकी घात।
स्याम-ब्रह्मकी माधुर लीला निरखि-निरखि हरषात॥

(६४७) राग देश—ताल तीनताल

स्यामने मुरली मधुर बजाई।
सुनत टेरि, तनु सुधि बिसारि सब गोपबालिका धाई।
लहँगा ओढ़ि ओढ़ पहिरे, कंचुकि भूलि पराई॥
नकबेसर डारे स्रवननमहँ अदभुत साज सजाई॥
धेनु सकल तृन चरन बिसारयो ठाढ़ी-स्रवन लगाई।
बछुरनके मन रहे भुजनमहँ सो पय-पान भुलाई॥

पसु-पंछी जहँ-तहँ रहे ठाढ़े मानो चित्र लिखाई ।
पेड़ पहाड़ प्रेमवस डोले, जड़ चेतनता आई ॥
कालिंदि प्रवाह नहिं चाल्यो, जलचर सुधि बिसराई ।
ससिकी गति अवरुद्ध, रहे नभ देव विमानन छाई ॥
धन्य बाँसकी वनी मुरलिया बड़ो पुन्य करि आई ।
सुर-मुनि दुरलभ रुचिर बदन नित राखत स्याम लगाई ॥

(६४८) राग काफी—ताल दीपचंदी

माधव ! हौं तुम्हरे संग जैहौं ।
तुम्हरे बिना न इक पल रहिहौं, लोक-लाज कुलकानि नसैहौं ॥
बरजी नहिं रहिहौं काहू की जो बाँधहिं तो बंधन खैहौं ।
जड़ तनु तजिहौं, यह मन, प्रिय सँग प्रानहिं अवसि पठैहौं ॥
मिलिहौं जाइ तहाँ प्रियतममें, जिमि सागर बिच लहर समैहौं ।
स्याम बदन महँ स्यामरंग रचि, स्यामरूप लहि अति सुख पैहौं॥

(६४६) राग आसावरी—ताल धुमाली

नाचत गौर प्रेम-अधीर ।
भूलि सुधि हरिनाम टेरत, बहत नैननि नीर ॥
पान करि सुचि प्रेम अमृत, मत्त पुलकित अंग ।
भगत गन नाचत सकल मिलि बजत ताल मृदंग ॥
परम पावन नामकी धुनि, गूँजती आकास ।
विपुल अघ संसारके पल माहिं होत विनास ॥

(६५०) राग कामोद—ताल तीनताल

स्याम मोरे ढिगतें कबहुँ न जावै ।
कहा कहूँ सखि ! गैल न छाँड़ै, जित जाऊँ तित धावै ॥

गैया दुहत गोद आ बैठे, दूध धार पी जावै ।
दही मथत नवनी लेवेकों, मटकी माँहि समावै ॥
रोटी करत आइ चौकामैं, ऊधम अमित मचावै ।
जँवत बेर संग आ बैठै, माल-माल गटकावै ।
सखियन सँग बतरात आइ सो पचराग बनि जावै ।
मुरली मधुर बजाय देखु सखि, मोहन हमहिं रिझावै ।
सोवत समै सेज आ पौढ़ै, गृह-स्वामी बनि जावै ।
स्वल्प निंदरिया बीच सपनमहँ माधुरि-रूप दिखावै ।
तदपि न बरजत बनै नाहि सखि चितअति ही सुख पावै ।
बारहिं बार निहारि चंद्रमुख, अंदर अति हुलसावै ।

(६५१) राग जैमिनी कल्याण—ताल-धुमाली

स्याम तव मूरति हृदय समानी ।
अँग-अँग ब्याप्यो, रग-रग रांची, रोम-रोम उरझानी ।
जित देखौं तित तू ही दीखत दृष्टि कहा बौरानी ।
स्रवन सुनत नित ही बंसीधुन, देह रही लपटानी ।
स्याम अंग सुचि सौरभ, मीठी, नासा तेहि रति मानी ।
जिम्या सरस मनोहर मधुमय, हरि जूठन रस सानी ।
ऊधौ कहत सँदेस तिहारो, हमहिं बनावत स्यानी ।
पहु पस जहँ ग्यानको राखैं कहा मसखरी ठानी ।
निकसत नाहि हृदयते हमरे बैठ्यो रहत सुखानी ।
ऊधौं ! स्याम न छाड़त हमकों, करत सदा मनमानी ।

(६५२)

धन्य-धन्य ब्रजकी नर-नारी ।
जिन्हके आँगन नाचत नित प्रति मोहन नरवस ह्वै हारी

परम प्रिय मनमोहनजूकी प्रेमपगी रस-विषय गँवारी।
जिन्हके हाथ खात माखन-दधि, लाड़ लड़ावत दै दै गारी॥
मुरली धुनि सुनि भागति सगरी लोक-लाज गृह-काज बिसारी।
चाहत चरन-धूलि नित तिन्हकी दीन अकिंचन प्रेम भिखारी॥

(६५३) राग पूरिया—ताल तीनताल

प्रभु ! मैं नहिं नाव चलावौं।
त पद-रज नर-करनि मूरि प्रभु ! महिमा अमित कहाँ लगि गावौं।
हन छुवत नारि भइ पावनि, काठ पुरातनकी यह नावौं॥
रसत रज मुनि-नारि बनै यह, मैं पुनि असि नौका कहँ पावौं।
अति दीन दरिद्र, कुटुंम्ब बहु, यहि नौकातें सबहि निभावौं॥
यह उड़े, जीविका बिनसै केहि विधि पुनि परिवार चलावौं।
ुमति होइ तौ लेइ कठौता, सुरसरि-जल भरि प्रभुपहँ लावौं॥
पखारि, रज धोइ भलीविधि, करि चरनामृत पाप नसावौं।
ु-चरननकी सपथ नाथ ! मैं अन्य भाँति नहिं नाव चढ़ावौं॥
न रिसाइ तीर जो मारैं निबल, पकरि पद प्रान गवावौं।
भरे, अति सरल सुहावन अटपट बचन सुने रघुरावौं॥
नानिधि हँसि अनुमति दीन्ही, केवट कह्यो पार लै जावौं।

(६५४) राग हमीर—ताल तीनताल

प्रभु बोले मुसुकाई।
र्तें तोरि नाव रहि जावे, सोइ जतन करु भाई॥
पखारु, लाइ गङ्गाजल, अब मत बिलँब लगाई।
त बचन तेहि छिन मो दौरयौ, मनमहँ अति हरपाई॥
यौ कठौता गङ्गाजलसों सब परिवार बुलाई।
पद आइ पखारन लाग्यो, उर आनँद न समाई॥

सुरन बिलोकि प्रेम-करुना अति, नभ दुंदुभी बजाई।
केवट भाग्य सराहि अमित बिधि, सुमन वृष्टि झरि लाई॥
पद पखारि, सब लै चरनामृत, पुरुखन पार लँघाई।
सीता लखन सहित रघुनंदन, हरषित नाव चलाई॥

(६६५) राग तिलंग

ऊधो ! सो मनमोहन रूप।
जो हम निरख्यो सदा नैन भरि सुंदर अतुल, अनूप॥
सिव, बिरंचि, सनकादिक, नारद, ब्रह्म, विदित, जग जाने।
सुरगुरु सुरपति जेहि देखन हित रहत सदा ललचाने॥
बेद-बुद्धि कुंठित भइ बरनत, 'नेति नेति' कहि गायो।
सादर सेस सहसमुख निसिदिन गावत, पार न पायो॥
जेहि लगि ध्यान-निरत योगी, मुनि, नित जपत तप-ब्रत-धारी।
तदपि सो स्याम त्रिभंग मुरलिधर रहत नयन निहारी॥
सोई प्रभु दधि-माखन हित नित प्रति आँगन हमरे आवे।
तनिक-तनिक दधि नवनी दै दै हम बहु नाच नचावे॥
ऊधो ! सोइ माधुरी मूरति अंतर दृगन समाई।
ग्यान-बिराग तिहारो बोरो कालिंदी महँ धाई॥

प्रेम

(६५६) लावनी (मारवाड़ी बोली)

अब तो कुछ भी नहीं सुहावे, एक तूँ ही मन भावे है।
तनै मिलनै आज मेरी हिवड़ो उमल्यो आवै है॥
तड़फ रह्यो ज्यूँ मछली बस बिन, अब सूँ क्यूँ तरसावै है।
दरस दिखावैमैं देरी कर क्यूँ मन और रुलावै है ?॥

पण, जो इसी बातमें तेरो चित राजी हो तो होवै ।
तो कोई भी आंट नहीं, मनै चाहै जितणो दुख होवै ॥
तेरे सुखसें सुखिया हूँ मैं तेरे लिये प्राण रोवै ।
मेरी खातर प्रियतम ! अपणै सुखमें मत काँटा बोवै ॥
पण या निश्चै समझ, तनें मिलणेकी खातर मेरा प्राण ।
छिन-छिन में व्याकुल होवै है, दरसणकी है, भारी टाण ॥
बाँध तुड़ाकर भाग्या चावै, मानै नहीं किसीकी काण ।
आठों पहर उड्या सा डोलै, पलक-पलककी समझै हाण ॥
पण प्यारा ! तेरी राजी में है नित राजी मेरो मन ।
प्राणाधिक, दोनूं लोकांको तूं ही मेरो जीवन-धन ॥
नहीं मिलै तो तेरी मरजी, पण तन मन तेरै अरपन ।
लोक-वेद है तूं ही मेरो, तूं ही मेरो परम रतन ॥
चातककी ज्यूं सदा उड़ीकूं कदे नहीं मुहनें मोडूं ।
दुख देवै, मारै तड़पावै तो भी नेह नहीं तोडूं ॥
तरसा-तरसाकर जी लेवै तो भी तनै नहीं छोडूं ॥
झांकूं नहीं दूसरी कानी तेरैमैं ही जी जोडूं ॥

(६५७) राग लावनी

मिलनेको प्रियतमसे जिसके प्राण कर रहे हाहाकार ।
गिनता नहीं मार्गकी कुछ भी दूरीको वह किसी प्रकार ॥
नहीं ताकता किंचित् भी शत-शत बाधा-विघ्नोंकी ओर ।
दौड़ छूटता जहाँ बजाते मधुर वंशरी नंदकिशोर ॥
मिली हुई जो कभी भाग्यवश उसको हैं आँखें होती ।
वही जानता कीमत, जो उस रूप-माधुरीकी होती ॥

पण, जो इसी बातमैं तेरो चित राजी हो तो होवै ।
तो कोई भी आंट नहीं, मनै चाहै जितणो दुख होवै ॥
तेरै सुखसें सुखिया हूँ मैं तेरे लिये प्राण रोवै ।
मेरी खातर प्रियतम ! अपणै सुखमैं मत कांटा बोवै ॥
पण या निश्चै समझ, तनैं मिलणैंकी खातर मेरा प्राण ।
छिन-छिन मैं ब्याकुल होवै है, दरसणकी है, भारी टाण ॥
बांध तुड़ाकर भाग्या चावै, मानै नहीं किसीकी काण ।
आठों पहर उड्या सा डोलै, पलक-पलकको समझै हाण ॥
पण प्यारा ! तेरी राजी मैं है नित राजी मेरो मन ।
प्राणाधिक, दोनूं लोकांको तूं ही मेरो जीवन-धन ॥
नहीं मिलै तो तेरी मरजी, पण तन मन तेरै अरपन ।
लोक-वेद है तूं ही मेरो, तूं ही मेरो परम रतन ॥
चातककी ज्यूं सदा उड़ीकूं कदे नहीं मुहनैं मोड़ूं ।
दुख देवै, मारै तड़पावै तो भी नेह नहीं तोड़ूं ॥
तरसा-तरसाकर जी लेवै तो भी तनै नहीं छोड़ूं ॥
झांकूं नहीं दूसरी कानी तेरैमैं ही जी जोड़ूं ॥

(६५७) राग लावनी

मिलनेको प्रियतमसे जिसके प्राण कर रहे हाहाकार ।
गिनता नहीं मार्गकी कुछ भी दूरीको वह किसी प्रकार ॥
नहीं ताकता किंचित् भी शत-शत बाधा-विघ्नोंकी ओर ।
दौड़ छूटता जहाँ बजाते मधुर वंशरी नंदकिशोर ॥
मिली हुई जो कभी भाग्यवश उसको हैं आँखें होती ।
वही जानता कीमत, जो उस रूप-माधुरीकी होती ॥

कुछ भी कीमत हो, परंतु है रूपरसिक जन जो होता।
दौड़ पहुँचता लेनेको तत्काल, नहीं पलभर खोता॥

अद्वैत

(९५८) राग भैरवी—ताल धुमाली

देख दुःखका वेष धरे मैं नहीं डरूँगा तुमसे, नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें मैं पकड़ूँगा जोरोंके साथ॥
नाथ ! छिपा लो तुम मुँह अपना, चाहे अति अँधियारेमें।
मैं लूँगा पहचान तुम्हें इक कोनेमें, जग सारेमें॥
रोग-शोक, धनहानि,दुःख, अपमानघोर, अतिदारुणक्लेश।
सबमें तुम, सब ही है तुममें, अथवा सब तुम्हरे ही वेश॥
तुम्हरे बिना नहीं कुछ भी जब, तब फिर मैं किस लिये डरूँ।
मृत्यु-साज सज यदि आओ तो, चरणण कड़ सानद मरूँ॥
दो दर्शन चाहे जैसा भी दुःखवेष धारणकर नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें, मैं पकड़ूँगा जोरोंके साथ॥

(९५९) राग भैरवी

सूर्य-सोममें, वायु-व्योममें, सलिल-धार, धरनीमें तुम।
सुत-कलत्रमें, पुष्प-पत्रमें, स्वर्ण अश्म अरनीमें तुम॥
शत्रु-मित्रमें, सुख-अमर्षमें, अनल अतल सागरमें तुम।
सबमें, सभी दिशाओंमें छाये केवल हे नटनागर ! तुम॥

(९६०) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

इस अखिल विश्वमें भरा एक तू ही तू।
तुझमें मुझमें 'तू' मैं 'तू' तू 'तू' ही तू॥

नभमें तू, जल थल वायु अनलमें भी तू।
मेघध्वनि, दामिनि, वृष्टि प्रबलमें भी तू॥
सागर अथाह सरिता प्रवाहमें भी तू।
शशि-शीतलता, दिनकर-प्रवाहमें भी तू॥
वन सघन पुष्प उद्यान मनोहरमें भी तू।
प्रस्फुटित कुसुम-रस-लीन भ्रमणमें भी तू॥
है सत्य-असत, विष-अमृत, बिनय-मदमें तू।
शुभ क्षमा-तेज अति विपद-सुसंपदमें तू॥
मृदु हास्य सरल, अति तीव्र रुदन-रवमें तू।
चिरशांति, क्रांति अति भीषण विप्लवमें तू॥
है प्रकृति-पुरुष, पुरुषोत्तम, मायामें तू।
अति असह धूप, सुखदायक छायामें तू॥
नारी-अंतर, शिशु सुखद वदनमें तू।
कामारि, कुसुमसरपाणि मदनमें भी तू॥
घन अँधकार, उज्ज्वल प्रकाशमें भी तू।
जड़-मूढ़ प्रकृति, अतिमति-विकासमें भी तू॥
है साध्वी घरनी कुलटा गणिकामें भी तू।
है गुँथा सूत, माला, मणिकामें भी तू॥
तू पाप-पुण्यमें नरक स्वर्गमें भी तू।
पशु-पक्षी, सुरासुर, मनुजवर्गमें भी तू॥
है मिट्टी-लोह, पाषाण-स्वर्णमें भी तू।
चतुराश्रममें तू चतुर्वर्णमें भी तू॥

कुछ भी कीमत हो, परंतु है रूपरसिक जन जो होता।
दौड़ पहुँचता लेनेको तत्काल, नहीं पलभर खोता॥

अद्वैत

(९५८) राग भैरवी—ताल धुमाली

देख दुःखका वेष धरे मैं नहीं डरूंगा तुमसे, नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें मैं पकड़ूंगा जोरोंके साथ॥
नाथ! छिपा लो तुम मुँह अपना, चाहे अति अंधियारेमें।
मैं लूंगा पहचान तुम्हें इक कोनेमें, जग सारेमें॥
रोग-शोक, धनहानि,दुःख, अपमानघोर,अतिदारुणक्लेश।
सबमें तुम, सब ही है तुममें, अथवा सब तुम्हरे ही वेश॥
तुम्हरेबिना नहीं कुछ भी जब, तब फिर मैं किस लिये डरूं।
मृत्यु-साज सज यदि आओ तो, चरणग कड़ सानद मरूँ॥
दो दर्शन चाहे जैसा भी दुःखवेष धारणकर नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें, मैं पकड़ूंगा जोरोंके साथ॥

(९५९) राग भैरवी

सूर्य-सोममें, वायु-व्योममें, सलिल-धार, धरनीमें तुम।
सुत-कलत्रमें, पुष्प-पत्रमें, स्वर्ण अश्म अरणीमें तुम॥
शत्रु-मित्रमें, मुक्त-अमर्षमें, अनल अतल सागरमें तुम।
सबमें, सभी दिशाओंमें छाये केवल हे नटनागर! तुम॥

(९६०) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

इस अखिल विश्वमें भरा एक तू ही तू।
तुझमें मुझमें 'तू' मैं 'तू' तू 'तू' ही तू॥

नभमें तू, जल थल वायु अनलमें भी तू।
मेघध्वनि, दामिनि, वृष्टि प्रबलमें भी तू॥
सागर अथाह सरिता प्रवाहमें भी तू।
शशि-शीतलता, दिनकर-प्रवाहमें भी तू॥
वन सघन पुण्य उद्यान मनोहरमें भी तू।
प्रस्फुटित कुसुम-रस-लीन भ्रमणमें भी तू॥
है सत्य-असत, विष-अमृत, विनय-मदमे तू।
शुभ क्षमा-तेज अति विपद-सुसंपदमें तू॥
मृदु हास्य सरल, अति तीव्र रुदन-रवमें तू।
चिरशांति, क्रांति अति भीषण विप्लवमें तू॥
है प्रकृति-पुरुष, पुरुषोत्तम, मायामें तू।
अति असह धूप, सुखदायक छायामें तू॥
नारी-अँतर, शिशु सुखद वदनमे तू।
कामारि, कुसुमसरपाणि मदनमे भी तू॥
घन अँधकार, उज्ज्वल प्रकाशमें भी तू।
जड़-मूढ़ प्रकृति, अतिमति-विकासमें भी तू॥
है साध्वी घरनी कुलटा गणिकामें भी तू।
है गुँथा सूत, माला, मणिकामें भी तू॥
तू पाप-पुण्यमें नरक स्वर्गमें भी तू।
पशु-पक्षी, सुरासुर, मनुजवर्गमें भी तू॥
है मिट्टी-लोह, पाषाण-स्वर्णमें भी तू।
चतुराश्रममें तू चतुर्वर्णमें भी तू॥

है धनी-रंक, ज्ञानी-अज्ञानीमें तू ।
है निरभिमानमें अति अभिमानीमें तू ॥
है बाल-वृद्ध नर-नारी, नपुंसकमें तू ।
अति करुणहृदयमें, निर्दय हिंसकमें तू ॥
है शत्रु-मित्रमें, बाहरमें घरमें तू ।
है ऊपर, नीचे, मध्य, चराचरमें तू ॥
'हाँ' में, 'ना' में तू, 'तू' में 'मैं' में, 'तू' तू ॥
हूँ तू, तू तू, तू तू तू, बस तू ही तू ॥

(६६१) राग बहार—ताल तीन ताल

देख एक तू ही तू तू ही तू । सर्वव्यापक जग तू ही तू ॥
सत, चित, घन, आनन्द नित, अज, अव्यक्त अपार ।
अलख, अनादि, अनंत अगोचर पूर्ण विश्व-आधार ।
एकरस अव्यय तू ही तू ॥ सर्वव्यापक० ॥
सत्यरूपसे जगत् सब, तेरा ही विस्तार ।
जग माया-कल्पित है सारा तव संकल्पाधार ।
रचयिता-रचना तू ही तू ॥ सर्वव्यापक० ॥
तुझ बिन दूजी वस्तु नहिं, किंचित् भी संसार ।
सूत सूत-मणियोंमें गूँथा, जल तरङ्गवत सार ।
भरा एक तू ही तू ही तू ॥ सर्वव्यापक० ॥
माता-पिता-धाता तू ही, वेदवेद्य ओंकार ।
पावन परम पितामह तू ही, सुहृद शरण दातार ।
सृजत, पालत, संहारत तू ॥ सर्वव्यापक० ॥

क्षर अक्षर, कूटस्थ तू, प्रकृति-पुरुष तव रूप।
मायातीत, वेदवर्णित पुरुषोत्तम अतुल, अरूप।
रूपमय सकल रूप ही तू ॥ सर्वव्यापक० ॥
मोह स्वप्नको भंग कर, निज रूपहि पहिचान।
नित्य सत्य आनंद बोध घन निजमें निजको जान।
सदा आनंदरूप एक तू ॥ सर्वव्यापक ॥

(६६२) राग वागेश्री—ताल तीनताल

परम प्रिय मेरे प्राणाधार !

खजानोंसे सम्बन्ध छूटते मैं निराश हो घबराया।
पर निरुपाय, विवश हो तत्क्षण गृह नवीनमें मैं आया ॥
लगा पुरातन चिर नूतन सब 'मेरापन' सब में पाया।
विस्मृत हुआ पुरातन, नूतनको ही मैंने अपनाया ॥
सबल, सुन्दर सुसंगठित देह। जनक-जननीका अविरल स्नेह ॥
प्रियाका मधुर वचन मृदुहास। सरल संततिका रम्य विकास।
कर रहा नित सुखका संचार। परम प्रिय मेरे प्राणाधार!
पिता चले, जननी भी बिछुड़ी, शक्ति और सौंदर्य गया।
पत्नी भी चल बसी, शेष वयमें उसने भी न की दया ॥
धीरे-धीरे पुत्रोंसे भी सारा नाता टूट गया।
पूर्वजन्मकी भाँति पुनः यमदूतोंके आधीन भया ॥
हुआ परवश अधीर बेहाल।
चल सकी एक न मेरी चाल ॥
भटकते बीता अगणित काल।
विविध देहोंमें क्षुद्र-विशाल ॥

आँखोंमें बैठ करके, तुम देखते हो सबको।
कानोंमें बैठ सुनते तुम शब्द सौख्यकारी॥
नाकोंसे गंध लेते रसनासे चाखते तुम।
हो स्पर्श तुम ही करते, लीला विचित्रकारी॥
प्राणोंमें, चित्त-मनमें, मतिमें, अहंमें तूमें।
सबमें पसार करके तुम खेलते खिलारी॥
बेटब नकाबपोशी रक्खी है सीख तुमने।
अंदर समाके सबके छिपते, अजीब यारी॥
जिसको दिखाया तुमने परदा हटाके अपना।
वह रूप-रँग अनोखा, प्रेमोन्मत्तकारी॥
फिर भूलता नहीं वह, औ भूल भी न सकता।
पहचान नित्य होती पारस्परिक तुम्हारी॥
आँधी कभी न आती, आँखें न चौंधियातीं।
वह दिव्य दृष्टि पाकर होता सदा सुखारी॥
सुख-दुःख, जय-पराजय, तम-तेज, यश-अयशमें।
दिखती उसे सभीमें छबि मोहिनी तुम्हारी॥
फिर देखता वह तुमसे सारा जगत् भरा है।
अपनी जरा-सी सत्ता वह देखता न न्यारी॥
तुम हो समाये सबमें, वह है समाया तुममें।
भय-भेदभ्रांति मिटती उस एक छनमें सारी॥

(८१४) राग देशी खमाच—ताल कहरवा

स्वागत ! स्वागत ! आओ प्यारे।
दर्शन दो नयनोंके तारे॥
बालककी मधुरी हाँसीमें। मोहनकी मीठी बाँसीमें॥

मित्रोंकी निःस्वार्थ प्रीतिमें। प्रेमीगणकी मिलन रीतिमें॥
नारीके कोमल अंतरमें। योगीके हृदयाभ्यन्तरमें॥
वीरोंके रणभूमि-मरणमें। दीनोंके संतप-हरणमें॥
कर्मठके कर्म-प्रवाहमें। साधकके सात्त्विक उछाहमें॥
भक्तोंके भगवान्-शरणमें। ज्ञानवान्‌के आत्मरमणमें॥
संतोंकी शुचि सरल भक्तिमें। अग्निदेवकी दाह-शक्तिमें॥
गंगाकी पुनीत धारामें। पृथ्वी-पवन, व्योम-तारामें॥
भास्करके प्रखर प्रकाशमें। शशधरके शीतल विकासमें॥
कोकिलके कोमल सुस्वरमें। मत्त मयूरी केका-रवमें॥
विकसित पुष्पोंकी कलियोंमें। काले नखराले अलियोंमें॥
सबमें तुम्हें देखते सारे। पर न पकड़ पाते मतवारे॥
निज पहचान बता दो प्यारे। छिपना छोड़ो, जग उजियारे।
स्वागत ! स्वागत आओ प्यारे !
मेरे जीवनके 'ध्रुवतारे'॥

(६६५) धुन लावनी—ताल कहरवा

सौंप दिये मन-प्राण उसीको, मुखसे गाते उसका नाम।
कर्माकर्म चुकाकर सारे चलते हैं अब उसके धाम॥
इन्द्रियगण लेकर विषयोंको मरा करें इच्छा-अनुसार।
हम तो हैं अनुगत उसके ही, वही हमारा प्राणाधार॥
प्रेम उसीके-से प्रेमिक बन, गाते सब उसका गुणगान।
उसकी बासा पुण्य उसीके-से लेती नित उसकी घ्राण॥
उसके प्राणोंकी व्याकुलता सब प्राणोंमें जाग रही।
इसी हेतु बैठे योगासन वृत्ति उसीमें लाग रही॥

उसके ही रससे रसिका बन रसना हो गई दीवानी।
विषयोंके रस विरस हुए सब, नहीं कर सके मनमानी॥
आँख उसीको देख रही नित उसका रूप परम सुन्दर।
कान उसीके सुनते उसका सदा सुरीला कंठस्वर॥

देह उसीकी करती नित आवेग-भरा परसन उससे।
मन-प्राण भर उठे, दीखता सारा जगत् भरा उससे॥
सभी भुलाकर सोच रहा वह कहाँ? कौन मेरा मनचोर।
हृदय-सलिलके अगाध तलमें खोजूँगा, यदि पाऊँ छोर॥
जब वह अपने प्राणोंको मेरे प्राणोंमें दिखलाता।
दोनों कूल डूब जाते हैं, कुछ भी नजर नहीं आता॥
माता-पिता वही हम सबका, भाई-बन्धु पुत्र दारा।
है सर्वस्व वही सबका बस, उससे भरा विश्व सारा॥
है वह जीवनसखा हमारा, है वह परम हमारा धन।
अन्तस्तलमें बैठे हैं टुक करनेको उसके दर्शन॥
जब वह दोनों भुजा उठाकर, अपनी ओर बुलाता है।
सब सुख तजकर मन उसके ही पीछे दौड़ा जाता है॥
सब कुछ भूल नाच उठते हैं हँसना औ रोना तजकर।
चरण कूलकी तरफ दौड़ते, भग्न जीर्ण नौका लेकर॥
आशा सकल बहाकर उस प्यारेके अरुण चरण-तलमें।
कूद पड़ेंगे डूबें चाहे तर निकलें कूलस्थलमें॥
इस जगके जो कुछ भी सुख हैं, सो सब रहें उसीके पास।
अरुण-चरणके स्पर्शमात्रसे, मिटी हमारी सारी आस॥

किसी वस्तुकी चाह नहीं है, मिटा चाहना, पाना सब ।
बैठे हैं भव-तीर भरोसा किये युगल चरणोंका अब ॥
अब तो बंध-मोक्षकी इच्छा व्याकुल कभी न करती है ।
मुखड़ा ही नित नव बंधन है मुक्ति चरणसे झरती है ॥
चाहे अपने पास बिठा लें, चाहे दूर फेंक देवें ।
दूर रहें या पास रहें हम संतत चरणमूल सेवें ॥

(९९६) राग गोंड-मल्हार—ताल-तीनताल

सकल जग हरिको रूप निहार ।
हरि बिनु विश्व कतहुँ कोउ नाहीं, मिथ्या भ्रम संसार ॥
अलख-निरंजन, सब जग व्यापक, सब जगको आधार ।
नहिं आधार नाहिं कोउ हरिमहँ, केवल हरि-विस्तार ॥
अति समीप, अति दूर, अनोखे जगमहँ जगतें पार ।
पय-घृत पावक काष्ठ, बीजमहँ तरु फल पल्लव-डार ॥
तिमि हरि व्यापक अखिल विश्वमह आनँद पूर्ण अपार ।
एहि विधि एक बार निरखत ही, भव-बारिधि हो पार ॥

(९९७) राग केदारा—ताल तीनताल

देख निज नित्य निकेतन द्वार ॥
भूल निज निर्मल स्वरूपको, भूला कुल-व्यवहार
फूला, फँसा फिर रहा संतत, सहता जग फटकार ।
पर-पुर परघरमें प्रवेश कर, पाला पर-परिवार
पड़ा पाँच चोरोंके पल्ले, लुटा, हुआ लाचार ॥
अब भी चेत, ग्रहण कर सत्पथ, तज माया आगार ।
उज्ज्वल प्रेम-प्रकाश साथ ले चल निज गृह सुखसार ॥

शम-दमादिसे तुरत निधनकर काम-क्रोध-बटमार ।
सेवन कर पुनीत सत-संगति पथशाला श्रमहार ॥
श्रीहरिनाम शमन भय नाशक निर्भय नित्य पुकार ।
पातक पुंज नाश हों सुनकर 'हरि हरि हरि' हुंकार ॥
आश्रयकर, शरणागत वत्सल प्रभु पद कमल उदार ।
निज घर पहुँच, नित्य चिन्मय वन, भूमानंद अपार ॥

(८६८) धुन लावनी—ताल कहरवा

भीषण तमपरिपूर्ण निशीथिनि, निविड़ निरर्गल झंझावात ।
नभ घनघोर महारव पूरित, विकट, विघाती विद्युत्पात ॥
सागर-वक्ष-क्षुब्ध उल्लोलित, क्षित क्षितिधर क्षत, कंपितगात ।
प्रलय-शिखा-पावक अप्रतिहत त्रिभुवन त्रस्त, सहत अभिघात ॥
कैसा यह भीषण वेष ! कांपता जगत्, न कोई शेष ।
बचा हुआ निर्भय, जिसने 'उस प्रियतमको पहचान लिया, ॥
धन्य वेशधारिन् ! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया, ।
विस्तृत अति दारिद्रय, रोगपीड़ित अपमानित दुःसहनीय ॥
त्यक्त धुवं जग हसित, श्रमिततनु-भ्रमित वेदना दुर्दमनीय ।
एकमात्र सुत-शव निपतित संमुख प्राणोपम अति कमनीय ।
हा ! हा ! रवरतविगतशांति सुखशोक सरितंगत, नहिं कथनीय ।
नहिं सुख-स्वप्नका लेश ! निदारुण महाभयानक क्लेश !
आवृत वदन निरखकर जिसने 'प्रियतमको पहचान लिया' ।
धन्य वेशधारिन् ! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया' ॥
अन्नहीन तन, मृतप्राय मन, वस्त्राभाव अनावृत देह ।
अबला अवलंबन विहीन, नित घृणा, दोषदर्शन, संदेह ॥

स्वजन हीन अति दीन-छीन जग वैरभावयुत विगतस्नेह।
दलित, स्खलित, पतित, निष्कासित, देश-जाति धन जन सुतगेह॥
रह गया निपट अकेला शेष ! दिगम्बर शुष्क अस्थि अवशेष।
रुद्ररूप दर्शनकर जिसने 'प्रियतमको पहचान लिया'।
धन्य वेशधारिन् ! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया'॥

(६६६) धुन लावनी—ताल कहरवा

ज्यों-ज्यों मैं पीछे हटता हूँ त्यों-त्यों तुम आगे आते।
छिपे हुए परदोंमें अपना मोहन मुखड़ा दिखलाते॥
पर मैं अन्धा ! नहीं देखता परदोंके अंदरकी चीज।
मोह-मुग्ध मैं देखा करता परदे बहुरंगे नाचीज॥
परदोंके अंदरसे तुम हँसते प्यारी मधुरी हाँसी।
चित्त खींचनेको तुम तुरत बजा देते मीठी बाँसी॥
सुनता हूँ, मोहित होता, दर्शनकी भी इच्छा करता।
पाता नही देख, पर, जड़मति! इधर-उधर मारा फिरता॥
तरह-तरहसे ध्यान खींचते करते विविध भाँति संकेत।
चौकन्ना-सा रह जाता हूँ, नहीं समझता मूर्ख अचेत॥
तो भी नहीं ऊबते हो तुम, परदा जरा उठाते हो।
धीरेसे संबोधन करके अपने निकट बुलाते हो॥
इतनेपर भी नहीं देखता, सिंह-गर्जना तब करते।
तन-मन-प्राण, काँप उठते हैं, नहीं धीर कोई धरते॥
डरता, भाग छूटता, तब आश्वासन देकर समझाते।
ज्यों-ज्यों मैं पीछे हटता हूँ त्यों-त्यों तुम आगे आते॥

(९७०)

विश्व-वाटिका प्रति क्यारीमें क्यों नित फिरता माली।
किसके लिये सुमन चुन-चुनकर सजा रहा सुन्दर डाली॥
क्या तूं नहीं देखता इन सुमनोंमें उसका प्यारा रूप।
जिसके लिये विविध विधिसे, है हार गूँथता तू अपरूप॥
बीजांकुर शाखा-उपशाखा, क्यारी-कुंज लता-पत्ता।
कण-कणमें है भरी हुई उस मोहनकी मधुरी सत्ता॥
कमलोंका कोमल पराग विकसित गुलाबकी यह लाली।
सनी हुई है उससे सारे विश्व-बागकी हरियाली॥
मधुर हास्य उसका ही पाकर खिलतीं नित नव-नव कलियाँ।
उसकी मंजु मत्तता पाकर भ्रमर कर रहे रँगरेलियाँ॥
पाकर सुस्वर कंठ उसीका विहग कूजते चारों ओर।
देख उसीको मेघरूपमें हर्षित होते चातक मोर॥
हाथ गूँथकर कहाँ जायेगा उसे ढूँढ़ने तू माली।
देख, उन्हीं सुमनोंके अंदर उसकी मूरति मतवाली॥
रूप रंग सौरभ-परागमें भरा उसीका प्यारा रूप।
जिसके लिये इन्हें चुन-चुनकर हार गूँथता तू अपरूप॥

(९७१) संसार—नाटक

अनोखा अभिनय यह संसार !
रंगमंचपर होता नित नटवर-इच्छित व्यापार॥ १॥
कोई है सुत सखा, किसीने धरा पिताका साज।
कोई स्नेहमयी जननी बन करता नटका काज॥ २॥

कोई सज पत्नी, पति कोई करें प्रेमकी बात ।
कोई सुहृद बना, बैरी बन कोई करता घात ॥ ३ ॥
कोई राजा-रंक बना, कोई कायर अति शूर ।
कोई अति दयालु बनता, कोई हिंसक अतिक्रूर ॥ ४ ॥
कोई ब्राह्मण, शूद्र, श्वपच है, कोई बनता मूढ़ ।
पंडित परम स्वाँग धर कोई करता बातें गूढ़ ॥ ५ ॥
कोई रोता, हँसता कोई, कोई है गंभीर ।
कोई कातर बन कराहता, कोई धरता धीर ॥ ६ ॥
रहते सभी स्वाँग अपनेके सभी भाँति अनुकूल ।
होती नाश पात्रता जो किंचित करता प्रतिकूल ॥ ७ ॥
मनमें सभी समझते हैं अपना सच्चा संबंध ।
इसीलिये आसक्ति नहीं कर सकती उनको अंध ॥ ८ ॥
किसी वस्तुमें नहीं मानते कुछ भी अपना भाव ।
रंगमंच पर किंतु दिखाते तत्परता से दाव ॥ ९ ॥
इसी तरह जगमें सब खेलें खेल सभी अविकार ।
मायापति नटवर नायकके शुभ इंगित अनुसार ॥ १०॥

संत-महिमा

(९७२) राग बसन्त—ताल तीनताल

संत महा गुनखानी ।
परिहरि सकल कामना जगकी, राम-चरन रति मानी ॥
परदुख दुखी, सुखी परसुखतें, दीन-विपति निज जानी ।
हरिमय जानी सकल जग सेवत उर अभिमान न आनी ॥

मधुर सदा हितकर, प्रिय साँचे वचन उचारत बानी।
बिगत काम, मद-मोह-लोभ नहिं सुख-दुख सम कर जानी॥
राम-नाम पियूष पान रत, मानद, परम अमानी।
पतितनको हरिलोक पठावन जग आवत अस ज्ञानी॥

ब्राह्मण और बिच्छूकी कथा

(९७३) लावनी

विश्वपावनी वाराणसिमें संत एक थे करते वास।
राम-चरण-तल्लीन-चित्त थे, धाम-निरत, नय निपुण निरास॥
नित सुरसरिमें अवगाहन कर, विश्वेश्वर अर्चन करते।
क्षमाशील, पर-दुख-कातर थे, नहीं किसीसे थे डरते॥
एक दिवस श्रीभागीरथिमें ब्राह्मण विदय नहाते थे।
दयासिंधु देवकिनंदनके गोप्य गुणोंको गाते थे॥
देखा एक वहा जाता है वृश्चिक जल धाराके साथ।
दीन समझकर उसे उठाया संत विप्रने हाथों-हाथ॥
रखकर उसे हथेलीपर फिर संत पोंछने लगे निसंक।
खल, कृतघ्न, पापी वृश्चिकने मारा उनके भीषण डंक॥
काँप उठा तत्काल हाथ, गिर पड़ा अधम वह जल के बीच।
लगा डूबने अथाह जलमें निज करनीवश निष्ठुर नीच॥
प्रबल वेदना भूल उसे फिर उठा हाथपर, अपनाया।
ज्यों ही सम्हला, चेत हुआ, फिर उसने वही डंक मारा।
हिला हाथ, गिर पड़ा, बहाने लगी उसे जलकी धारा॥

देखा पुनः संतने उसको जलमें बहते दीन-मलीन।
लगे उठाने फिर भी ब्राह्मण सहानुभूति प्रतिहिंसाहीन ॥
नहा रहे थे लोग निकट सब बोले, 'क्या करते हैं आप।
हिंसक जीव बचाना कोई धर्म नहीं है पूरा पाप ॥
चक्खा हाथों हाथ विषम फल तब भी करते हैं फिर भूल।
धर्म-कर्मको डुबा चुका भारत इस कायरताके कूल ॥
'भाई! क्षमा नहीं कायरता यह तो वीरोंका बाना।
स्वल्प महापुरुषोंने है इसका सच्चा स्वरूप जाना ॥
कभी न डूबा क्षमा-धर्मसे, भारतका वह सच्चा धर्म।
डूबा, जब भ्रमसे था इसने पहना कायरताका वर्म ॥
भक्तराज प्रह्लाद क्षमाके परम मनोहर थे अदर्श।
जिनसे धर्म बचा था, जो खुद जीत चुके थे हर्षामर्ष ॥'
बोले जब हँसकर यों ब्राह्मण, कहने लगे दूसरे लोग—
'आप जानते हैं तो करिये, हमें बुरा लगता यह योग' ॥
[illegible]ो, 'भाई! मैंने नहीं बड़ा कुछ काम किया।
[illegible] ही बरता मैंने, इसने भी तो यही किया ॥

मधुर सदा हितकर, प्रिय साँचे वचन उचारत वाणी।
विगत काम, मद-मोह-लोभ नहिं सुख-दुख सम कर पानी॥
राम-नाम पियूष पान रत, मानद, परम अमानी।
पतितनको हरिलोक पठावन जग आवत अस ज्ञानी॥

ब्राह्मण और बिच्छूकी कथा

(६७३) लावनी

विश्वपावनी वाराणसिमें संत एक थे करते वास।
राम-चरण-तल्लीन-चित्त थे, धाम-निरत, नय निपुण निरास॥
नित सुरसरिमें अवगाहन कर, विश्वेश्वर अर्चन करते।
क्षमाशील, पर-दुख-कातर थे, नहीं किसीसे थे डरते॥
एक दिवस श्रीभागीरथिमें ब्राह्मण विदथ नहाते थे।
दयासिंधु देवकिनंदनके गोप्य गुणोंको गाते थे॥
देखा एक बहा जाता है वृश्चिक जल धाराके साथ।
दीन समझकर उसे उठाया संत विप्रने हाथों-हाथ॥
रखकर उसे हथेलीपर फिर संत पोंछने लगे निशंक।
खल, कृतघ्न, पापी वृश्चिकने मारा उनके भीषण डंक॥
काँप उठा तत्काल हाथ, गिर पड़ा अधम वह जल के बीच।
लगा डूबने अथाह जलमें निज करनीवश निष्ठुर नीच॥
प्रबल वेदना भूल उसे फिर उठा हाथपर, अपनाया।
ज्यों ही सम्हला, चेत हुआ, फिर उसने वही डंक मारा।
हिला हाथ, गिर पड़ा, बहाने लगी उसे अपनी धारा॥

देखा पुनः संतने उसको जलमें बहते दीन-मलीन।
लगे उठाने फिर भी ब्राह्मण क्षमामूर्ति प्रतिहिंसाहीन॥
नहा रहे थे लोग निकट सब बोले, 'क्या करते हैं आप।
हिंसक जीव बचाना कोई धर्म नहीं है पूरा पाप॥
चक्खा हाथों हाथ विषम फल तब भी करते हैं फिर भूल।
धर्म-कर्मको डुबा चुका भारत इस कायरताके कूल॥
'भाई! क्षमा नहीं कायरता यह तो वीरोंका बाना।
स्वल्प महापुरुषोंने है इसका सच्चा स्वरूप जाना॥
कभी न डूबा क्षमा-धर्मसे, भारतका वह सच्चा धर्म।
डूबा, जब भ्रमसे था इसने पहना कायरताका वर्म॥
भक्तराज प्रह्लाद क्षमाके परम मनोहर थे अदर्श।
जिनसे धर्म बचा था, जो खुद जीत चुके थे हर्षामर्ष॥'
बोले जब हँसकर यों ब्राह्मण, कहने लगे दूसरे लोग—
'आप जानते हैं तो करिये, हमें बुरा लगता यह योग'॥
कहा संतने, 'भाई! मैंने नहीं बड़ा कुछ काम किया।
निज स्वभाव ही बरता मैंने, इसने भी तो वही किया॥
मेरी प्रकृति बचानेकी है इसकी डंक मारनेकी।
मेरी इसे हरानेकी है, इसकी सदा हारनेकी॥
क्या इस हिंसकके बदलेमें मैं भी हिंसक बन जाऊँ!
क्या अपना कर्तव्य भूलकर प्रतिहिंसामें सन जाऊँ!
जितनी बार डंक मारेगा, उतनी बार बचाऊँगा।
आखिर अपने क्षमा-धर्मसे निश्चय इसे हराऊँगा॥

श्रीहरिः

ज्ञेय (जानने योग्य)

एक परमात्मा

जिसे जाननेके लिये ग्यारह आध्यात्मिक प्रश्न । इन प्रश्नोंको निरन्तर अपने अन्तःकरणमें करते रहना चाहिये और इनका उत्तर उसीसे लेना चाहिये ।

१. मैं कौन हूँ ? २. कहाँ हूँ ? क्यों आया हूँ ? ४. कहाँ जाऊँगा ? ५. कहाँ जा रहा हूँ ? कहाँ जाना चाहिये ? ७. क्या कर रहा हूँ ? ८. क्यों कर रहा हूँ ? ९. क्या करना चाहिये ? १०. कौन शत्रु है ? और ११. कौन मित्र है ?